5

❀ श्रीसर्वेश्वरो जयति ❀

।। श्रीभगवन्निम्बार्काचार्याय नमः ।।

श्रीगीतामृत गंगा

रचयिता—

अनन्त श्रीविभूषित जगद्गुरु श्रीनिम्बार्काचार्यपीठाधीश्वर

श्रीवृन्दावनदेवाचार्यजी महाराज

श्रीभगवन्निम्बार्काचार्याय नमः

श्रीगीतामृत गंगा

रचयिता—

अनन्त श्रीविभूषित जगद्‌गुरु श्रीनिम्बार्काचार्यपीठाधीश्वर

श्रीवृन्दावनदेवाचार्यजी महाराज

प्रकाशक—

अखिल भारतीय श्रीनिम्बार्काचार्यपीठ

निम्बार्कतीर्थ (सलेमाबाद) पुष्करक्षेत्र

किशनगढ़, अजमेर [राजस्थान]

श्रीनिम्बार्काब्द ५०९४

वसन्त पञ्चमी महोत्सव

वि० सं० २०५५

पुस्तक प्राप्ति स्थान—

अ० भा० श्रीनिम्बार्काचार्यपीठ

निम्बार्कतीर्थ (सलेमाबाद)

पुष्कर क्षेत्र, किशनगढ़ अजमेर (राज०)

श्री 'श्रीजी' की बड़ी कुञ्ज (मन्दिर)

प्रताप बाजार

श्रीवृन्दावन–मथुरा (उ० प्र०)

द्वितीयावृत्ति—

एक हजार

मुद्रक—

श्रीनिम्बार्क मुद्रणालय

निम्बार्कतीर्थ (सलेमाबाद)

[राजस्थान]

न्यौछावर—

बीस रुपये

अनन्त श्रीविभूषित जगद्गुरु श्रीनिम्बार्काचार्यपीठाधीश्वर–
श्रीराधासर्वेश्वरशरणदेवाचार्य श्री 'श्रीजी' महाराज का पावन सन्देश

"श्रीगीतामृतगंगा" की दिव्य धारा

भारत की परम रमणीय पावन धरित्री पर जब-जब भी विपरीत अवस्था आती है, वैदिक सनातन धर्म पर, वैष्णव धर्म पर किसी प्रकार का आघात दुरितजनों द्वारा होने लगता है तब परम कृपामहोदधि भगवान् श्रीराधासर्वेश्वर स्वयं किंवा अपने नित्य दिव्य भगदीय पार्षदों को इस धरातल पर अवतरित कराके विपरीततत्त्वों का परिशमन पूर्वक अनादिवैदिक सनातन वैष्णव धर्म का संरक्षण एवं उसका अभिवर्द्धन कराते हैं। ऐसे ही परम नित्य दिव्य भगवत्पार्षद परिकर में ही परम प्रख्यात गीतामृतगङ्गावाणीकार परमाचार्यप्रवर श्रीवृन्दावनदेवाचार्यजी महाराज इस धराधाम को समलंकृत कर अ० भा० श्रीनिम्बार्काचार्यपीठ पर विराजित होकर सर्वत्र वैष्णवधर्म का प्रचार–प्रसार किया। आपश्री की अलौकिक प्रतिभा प्रखर वैदुष्य महाकवित्व इतना गौरवमय आदर्शरूप में सर्वत्र इतना विख्यात हो गया था, जिससे तत्कालिक समस्त आचार्यप्रवर, सन्त-महान्त, विद्वज्जन एवं श्रद्धालु वैष्णव भावुक भक्तजन प्रभावित तथा आपकी उज्ज्वल गरिमा का अनुभव करते थे।

आपश्री के परम कृपापात्र शिष्य किशनगढ़ महाराजा श्रीसांवतसिंहजी अपर सुप्रसिद्ध नाम भक्तवर श्रीनागरीदासजी जिनकी माता श्रीबांकावतीजी (व्रजदासी किंवा व्रजकुंवरी) ने आपके आदेशानुसार आपश्री से दीक्षोपरान्त व्रजदासी–भागवत की सरस पद्यों में रचना की जो सम्पूर्ण विश्वनारी–जगत् में ये प्रथम राजमाता हैं जिन्होंने बीस हजार से भी अधिक मात्रा में श्रीमद्भागवत महापुराण का पद्यानुवाद किया जो परम महिमामय महासागर है। श्रीनागरीदासजी महाराज की सुपुत्री एवं राघोगढ़ (म० प्र०) की राजमाता श्रीसुन्दरकुंवरीजी जिन्होंने इन्हीं आचार्यश्री से मन्त्रोपदेश प्राप्त कर "मित्र–शिक्षा" नामक ग्रन्थ का प्रणयन किया। श्रीव्रजदासी ने भागवत पद्यानुवाद की भांति श्रीमद्भगवद्गीता पद्यानुवाद भी किया है जो अभी अप्रकाशित है और आचार्यपीठ में सुरक्षित है। निकट भविष्य में ही उसके प्रकाशन की भी योजना है। श्रीव्रजदासी भागवत के प्रकाशन की सम्पूर्ण सेवा भक्तवर श्रीरामकरणजी वंकटलालजी बाहेती के पवित्र परामर्श पर परम भक्तिनिष्ठ भक्तवर श्रीव्रजमोहनजी छापरवाल (सूरत) ने की है जिसके विमोचन समारोह में विश्व विश्रुत युगसन्त श्रीमुरारी बापू हरिव्यासी 'निम्बार्कभूषण' (मौवा–सौराष्ट्र) ने यहाँ आचार्यपीठ पधार कर उसका विमोचन किया। वस्तुतः श्रीवृन्दावन-

देवाचार्यजी महाराजश्री ने निम्बार्क सिद्धान्त उपासना प्रचार के साथ स्वयं ने जिन ग्रन्थों का प्रणयन किया उनमें "श्रीगीतामृतगंगा" अपूर्व परम ललित परममधुर श्रीयुगलरसपूर्ण महादिव्य ग्रन्थ है। आपश्री ने इन पावनतम ग्रन्थों की रचना के साथ वैष्णव चतु:सम्प्रदाय के समक्ष शैव–शाक्तों द्वारा समुत्पन्न समस्या के समाधानार्थ अनी–अखाडों के निर्माण में अपना सम्पूर्ण योगदान ही नहीं अपितु समग्र रूपरेखा तैयार की और आचार्यवर्य स्वामी श्रीबालानन्दाचार्यजी महाराज (जयपुर) के साथ यह महत्वपूर्ण कार्य किया जिसका उल्लेख इतिहास लेखक शोधकर्त्ताओं ने पर्याप्त किया है।

आचार्यपीठ में जहाँ आपका समाधि स्थल एवं चरणपादुकाएँ हैं वहाँ आज भी ज्वराक्रान्त व्यक्ति यदि समाधि के निकट दो-तीन घण्टे बैठ जाता है तो वह सरलता से ज्वर मुक्त हो जाता है। आपके दिव्य चरित के अनेक प्रसङ्ग है। समस्त साहित्य जगत् के सुप्रसिद्ध घनानन्द कवि आपश्री के ही अनुगत शिष्य थे। जयपुर नरेश महाराज श्रीजयसिंहजी ने आपके ही संकेत पर आमेर के बाद जयपुर महानगर का निर्माण किया था तथा आमेर में स्थित श्रीपरशुरामद्वारा मन्दिर के निकटस्थ स्थल पर जयपुर नरेश की भावनानुसार विराट्-यज्ञ का महान् समारोह आपके ही पावन तत्त्वावधान में सम्पन्न हुआ था। इस प्रकार आपके द्वारा अनेकों उत्तमोत्तम कार्य सम्पादित हुए हैं। इस प्रस्तुत "श्रीगीतामृतगंगा" ग्रन्थ की भांति निम्बार्क सिद्धान्त एवं उपासना परक ग्रन्थों का भी प्रणयन किया है। जिनका प्रकाशन परम अभीष्ट है। संस्कृत, हिन्दी, व्रज, राजस्थानी, गुजराती, पंजाबी, बंगाली, मैथिली, नेपाली आदि विविध भाषाओं के आप श्रेष्ठ वेत्ता थे। संगीत शास्त्र के भी आप उत्कृष्ट मर्मज्ञ थे। आपने भारत के विभिन्न अञ्चलों में परिभ्रमण कर विपुलरूपेण श्रीनिम्बार्क–सिद्धान्त उपासना–परम्परा का प्रचार किया। श्रीवृन्दावन, गोवर्धन, नीमगांव में बहुकाल तक विराजित रहकर वहाँ के रसिकों को अपने दिव्य उपदेशामृत से अभिषिक्त किया करते थे।

यथार्थ में आपश्री के मङ्गलमय कार्यकाल में स्वसम्प्रदाय एवं वैदिक सनातन धर्म का विपुल प्रसार हुआ। आपके द्वारा विरचित इस "श्रीगीतामृतगङ्गा" का आचार्यपीठ के अधिकारी श्रीव्रजवल्लभशरणजी वेदान्ताचार्य पञ्चतीर्थ ने बहुत पूर्व 'श्रीसर्वेश्वर' मासिक पत्र (वृन्दावन) के विशेषांक के रूप में प्रथम प्रकाशन कराया था जिसकी प्रतियाँ कुछ ही जीर्ण–शीर्ण अवस्था में शेष रही। अत: अब पुन: आचार्यपीठस्थ श्रीनिम्बार्क मुद्रणालय से ही इसका अब पुन: प्रकाशन कराया गया है जिसे साहित्य समुपासक रसिक भगवज्जन अवश्य ही मनन कर परम रसानुभूति प्राप्त करेंगे।

ग्रन्थ-ग्रन्थकार सम्बन्धी दो शब्द

श्रीगीतामृत गंगा के रचयिता-श्रीवृन्दावनदेवाचार्यजी महाराज हैं जो अनन्त श्रीविभूषित आद्याचार्य जगद्गुरु भगवान् श्रीनिम्बार्काचार्य के प्रमुख आचार्यपीठ पुष्करक्षेत्र (निम्बार्कतीर्थ-सलेमाबाद, कृष्णगढ़ राजस्थान) स्थ श्रीनिम्बार्काचार्यपीठाभिषिक्त प्रतापी आचार्य हो गये हैं, आपने अपने अविर्भाव द्वारा आदि-गौड़ विप्र कुल को अलंकृत किया था। श्री श्रीभट्टदेवाचार्यजी महाराज से इधर आज तक सात सो वर्षों में इस पीठ पर आदिगौड़ विप्र कुलीन ही अभिषिक्त होते आरहे हैं। यद्यपि "नामगोत्रं च चरणं देशं वासंश्रुतं कुलम्"।

"वयो विद्यांच वृत्तिञ्च ख्यापयेन्नैव सद्यतिः" इत्यादि नियमों के अनुसार महापुरुष आचार्य अपना विशिष्ट परिचय का प्रायः वर्णन नहीं करते -तत्कालीन लेखक भी अन्याऽन्य गुण-गणों के वर्णन के अतिरिक्त परिचयात्मक उल्लेख स्वल्प ही किया करते थे, जिससे उत्तरवर्ती इतिहास लेखकों को प्राचीन महापुरुषों के जन्म जन्मस्थानादि सम्बन्धी खोज में वड़ी कठनाई पड़ती है, अतः इन विषयों पर आपके विस्तृत इतिहास में ही विशेष प्रकाश डाला जायेगा।

आचार्यपीठ के पत्र-पत्रकों में एवं उदयपुर, जयपुर, जोधपुर, किशनगढ़, बीकानेर, भरतपुर आदि स्टेटों की तवारिखों में वि० सं० १७३५ से १७९७ तक आपके पुनीत नाम का उल्लेख मिलता है, वि० सं० १७५४ में आप आचार्य सिंहासनासीन हुए और ४३ वर्ष से भी अधिक अपने सदुपदेशों द्वारा अनुपम लोकहित किया। आपकी सादगी, सरलता, विद्वत्ता, तपश्चर्या और त्याग से प्रभावित जयपुर, उदयपुर, जोधपुर, किशनगढ़ आदि धार्मिक हिन्दु नरेशों ने जैसे अपने मुकटों की मणियों से आपके चरण कमलों का अर्चन किया, वाणी द्वारा स्तवन किया उसी प्रकार मुसलमान शासकों ने भी हृदय से पूजा की, आपके प्रति सभी धर्मानुयायियों की श्रद्धा बढ़ी, 'आचार्यं मां विजानीयान्नावमन्येत कर्हिचित्' यह भगवद्वाक्य आप में भली भांति चरितार्थ हुआ। उस समय के विद्वान् कवियों ने आपके कलिमलापह कलेवर में अलौकिक ऐश्वर्य्य का अनुभव किया आचार्य श्रीवृन्दावनदेवाचार्यजी महाराज में श्रीवृन्दावनविहारी का साक्षात्कार होने पर उनकी वागदेवी ने भी यही प्रकाशित किया—

श्रीवृन्दावन देवाय गुरवे परमात्मने
मनोमंजरिरूपाय युग्मसंगानुचारिणे ॥
भजेऽहँ वनाधीशदेवं महान्तं• महा सौम्यरूपं जनानां सुशान्तम् ।
सदा प्रेममत्तं महा प्रेमगम्यं मुखेराधिकाकृष्णलीलासुरम्यम् ॥
(पं० शेष श्रीजयरामदेव)

मोहध्वंशं हंशवंशं चिद्घनं हरिणं विभुम् ।
श्रीवृन्दावनदेवं तं भाष्यकारमहं भजे ॥
यशोदातनय ? स्वामिन् द्विजराज ? महेश्वर ?।
प्रसीद त्वं महादेव ? रविजानुज भक्तप ? ॥
(आचार्य श्रीव्रजानन्दजी)

भक्तपालं दयालुं च देवेशं रसिकेश्वरम् ।
श्रीमन्नारायणं साक्षाद्वृन्दावनगुरुं भजे ॥
श्रीवृन्दावनदेवाय सच्चिदानन्दरूपिणे ।
नमस्ते वेदपाराय गुरवे परमात्मने ॥
(जयपुर नरेश महाराजा द्वितीय जयसिंहजी)

श्रीनिम्बार्काचार्यपीठ से अत्यन्त सन्निकट ही महाराजा श्री कृष्णसिंहजी ने आज से लगभग साढ़े तीन सौ वर्ष पूर्व "किशनगढ़" राज्य स्थापित किया था। इसी कुल के नरेन्द्र श्रीरूपसिंहजी ने "रूपनगर"❀ में राजधानी स्थापित की।

आचार्यपीठ से पांच मील की ही दूरी पर होने के कारण यहां के राजकुल का आचार्यपीठ एवं हमारे चरित्रनायक श्रीवृन्दावनदेवा-

---

❀ पहिले प्राचीन समय में यहां पुष्कर-क्षेत्र के इस भाग में "वहबलपुर" एक विशाल नगर बसा हुआ था जो विक्रम की ११ वीं १२ वीं शताब्दी में तहसनहस हो गया था और थोड़ी सी वसायत रह गई थी। उस (वहवलपुर) का ही अपभ्रंश नाम "ववेरा" पड़ गया था। इसी क्षेत्र के अत्यन्त सन्निकट नील नगरी और भद्रावती (वर्तमान में जहाँ भदूण नामक ग्राम है) नगरी थी।

• जहाँ भी (महान्त) शब्द प्रयुक्त हुआ है वह आचार्यश्री के महत्ता का द्योतक है। आचार्यश्री श्रीनिम्बार्काचार्यपीठासीन आचार्यवर्य हैं। आप महन्त रूप में नहीं अपितु आचार्यस्वरूप में ही हैं। उक्त भ्रान्ति निवारणार्थ यहाँ स्पष्टीकरण करना समुचित समझा।

अनन्त श्रीविभूषित जगद्गुरु श्रीनिम्बार्काचार्यपीठाधीश
श्रीवृन्दावनदेवाचार्यजी महाराज, सिंहासनारूढ़

जयपुर नरेश—महाराज श्रीसवाई जयसिंहजी
(द्वितीय) आचार्यश्री की स्तुति कर रहे हैं।

वादिनागकुले सिंहं भाष्याविरोधकारिणम् ।
श्रीमन्नारायणं साक्षाद्वृन्दावनगुरुं भजे ।।१।।

सर्वाचार्यमहार्य्यं वै महाप्रेमप्रवर्षिणम् ।
श्रीमन्नारायणं साक्षाद्वृन्दावनगुरुं भजे ।।२।।

भक्तपालं दयालुं च देवेशं रसिकेश्वरम् ।
श्रीमन्नारायणं साक्षाद्वृन्दावनगुरुं भजे ।।३।।

राधाकृष्णप्रदं श्रीशं त्रिगुणागुणसाधुपम् ।
श्रीमन्नारायणं साक्षाद्वृन्दावनगुरुं भजे ।।४।।
राधाकृष्णरहस्यज्ञं युग्मसेवापरायणम् ।
श्रीमन्नारायणं साक्षाद्वृन्दावनगुरुं भजे ।।५।।
वनाधीशे सदा वासं वृन्दावनविहारिणम् ।
श्रीमन्नारायणं साक्षाद्वृन्दावनगुरुं भजे ।।६।।
विख्यातं श्रीमतां श्रेष्ठं ज्येष्ठं श्रीयमुनाऽनुजम् ।
श्रीमन्नारायणं साक्षाद्वृन्दावनगुरुं भजे ।।७।।
यशोदातनयं श्रीदं महीमण्डलपूजितम् ।
श्रीमन्नारायणं साक्षाद्वृन्दावनगुरुं भजे ।।८।।
पञ्चसंस्कारदातारं स्वामिनं सर्वसद्गुरुम् ।
श्रीमन्नारायणं साक्षाद्वृन्दावनगुरुं भजे ।।६।।
भजेऽहं वनाधीशदेवं महेशं महाप्रेमसिन्धुं मुनीशं जनेशम् ।
महापण्डित मण्डितं सज्जनानां विरोधाऽपवादे विवादे दिनेशम् ।।१०।।
नमस्ते नमस्ते वनाधीश देव ! । नमस्ते नमस्ते महाचार्य्य ! सेव्य ! ।।
नमस्ते नमस्ते गुणागाररम्य ! । नमस्ते नमस्ते महाभक्तिगम्य ! ।।११।।
श्रीवृन्दावनदेवाय सच्चिदानन्दरूपिणे ।
नमस्ते वेदपाराय गुरवे परमात्मने ।।१२।।
इदं स्तवं महागुह्यं श्रीवृन्दावनदेवकम् ।
यः पठेज्जनवर्य्यो वै तस्याचार्यः प्रसीदतु ।।१३।।

इति श्रीश्रीजयसिंह–महाराजेन विरचितं श्रीवृन्दावनदेवाचार्यस्य महागुह्यस्तवं समाप्तम् ।

श्रीवृन्दावनदेवाचार्यजी महाराज अपने शिष्य श्रीव्रजानन्दजी तथा श्री-आनन्दघनजी एवं महाराजकुमार श्रीसावन्तसिंहजी (किशनगढ़) को संगीत की शिक्षा दे रहे हैं। यह जीर्ण-शीर्ण चित्र श्रीनिकुञ्ज वृन्दावन में प्राप्त हुआ है।

चार्यजो महाराज के चरणों में और भी विशेष अनुराग बढ़ा। आचार्य-चरण के सम्पर्क से इस राजकुल के तत्कालीन राजा, राज महिला एवं राज-परिकर और प्रजाजनों में भगवद्-भक्ति का अनुपम विकाश हुआ। महाराजा श्रीराजसिंहजी, राजमहिषी श्रीबांकावतीजो, कुँवर सावन्त-सिंहजी (नागरीदासजी), राजकुमारी श्रीसुन्दरकुंवरीजी और इनके दास तथा दासियां भी विशिष्ट भक्त--कवि बने। उनमें से यहाँ श्री सुन्दरकुँवरीजी के ही कुछ उद्गार उद्धृत किये जाते हैं—

❀ कवित्त ❀

चाहौं नहिं प्रसन्न कियो इन्द्र सुरराज जो है,
विधिहू न चाहौं प्रसन्न देवी को विचारी है।
चाहौं नहिं प्रसन्न कियो रिधि सिधि लच्छमी हूँ,
मुक्तिहू न चाहौं जो सकल सुखकारी है ॥
चाहौं नहिं प्रसन्न कियो आदि वैकुण्ठनाथ,
तीन लोक मांझ गति जाकी अति भारी है।
श्रीगुरु कृपा सों कहौं जन्म–जन्म मोपैं सदा,
भक्तजन प्रसन्न रहो यही चाह धारी है ॥

इनकी माता श्रीबांकावतीजी आदि-आदि ने भी इसी प्रकार अपनी-अपनी धारणायें प्रकट की हैं। जयपुर के प्रसिद्ध कवि देवर्षि मंडनजी ने भी संक्षिप्त रूप से आपके प्रभाव का वर्णन किया है—

भये नारायणदेव के श्रीवृन्दावनदेव ।
तिनके श्रीजयसिंह ने करी चरण की सेव ॥
श्रीवृन्दावनदेव को देत देवऋषि दाद ।
रघुकुल श्रीजयसाह सों किय तप बल को वाद ॥

आपके दो चित्र किशनगढ़ राजकीय चित्रकोष में उपलब्ध हुए हैं, उनके पृष्ठ पर भी एक छप्पय द्वारा आपकी प्रभुता का विशेष उल्लेख इस प्रकार किया गया है—

चित्र नम्बर १४८ "हरि भक्ति निवास विद्याप्रकाशः, महा-महान्त स्वामी श्रीवृन्दावनदेवजी महाराज सलेमाबाद स्थल।"

❀ छप्पय ❀

श्रीवृन्दावनदेव महान्त से दिग्गज भये न होहिं छित ।
दिनकर लौं जगमग प्रताप जश जक्त अखंडित,
रसभाषा कविराज महा दिग्विजयी पंडित ।।
अति निवह्यो ऐश्वर्य भूप भये आज्ञाकारी,
अन्त समय लौं परम धर्म मरजादा पाली ।
श्रीनिम्बादित्य पद्धति वहे हरिव्यासदेव गादी स्थित,
श्रीवृन्दावनदेव महान्त से दिग्गज भये न होहिं छित ।।

ऐसे कितने ही विद्वान् कवियों की उक्तियों से आपकी विद्वत्ता, भगवन्निष्ठा और ऐश्वर्य प्रतिष्ठा आदि गुणों की झांकी होती हैं। आपके जितने भी चित्र मिलते हैं उनके दर्शन से सरलता, सौम्यता, गम्भीरता का स्पष्ट भान होता है। किशनगढ़ चित्रकोष से उपलब्ध दोनों चित्रों में आपकी वेषभूषा सादगी और वयोवृद्धता, लीला विस्तार पर्य्यन्त आदर्श, भजन निष्ठा, स्फुटतया प्रतिज्ञात होती हैं। एक दूसरे चित्र में जयपुर नरेश सवाई जयसिंहजी (द्वितीय) को उपदेश करते हुए सिंहासनासीन प्रौढ़ावस्थापन्न आचार्यपाद के दर्शन हो रहे हैं। यह चित्र देवयोग से श्रीवृन्दावन धाम में अभी प्राप्त हुआ है। इन चित्रों के दर्शन से उक्त छप्पय के अनुसार आपका परिचय अक्षरशः मिल जाता है।

कविता के मनन से कवि के आन्तरिक भावों का एवं विशेषता का पता चल सकता है।

चतुर्दश घाट के राग–रागनियों के विभेद वर्णन तथा विभिन्न-विभिन्न रागों में पद रचना देखकर यह निश्चित हो जाता है कि श्री गीतामृत गंगा के रचयिता संगीत के, गीत, वाद्य-नृत्य आदि सभी अंगों के विशिष्ट मर्मज्ञ थे। इसके पद लगभग ८० राग रागनियों के अन्तर्गत हैं। जैसे धनाश्री १९, पूरिया धनाश्री २, देवगांधार १७, रामकली १३, विभास १५, बिलावल ७, गौड बिलावल १, ललित ३, सारंग १०, गौड सारंग ९, खट १४, पंचम ९, मालश्री ३, श्री १, शु० कल्याण ७, श्याम कल्याण १, कनडी ३२, गौरी १५, चैती गोरी १, त्रिवनगोरी १, गोरीसोरठा १, टोडी १३, भूपाली ३, अडानौं १०, पूरिया १५, पूरियाईमन २, पूरीया कान्हरो १, काफो ७, काफी

वृन्दावनी ३३, काफी मधुपुरी ४ परज १३, कालिंगडा १, सोरठ कालिंगडा २, आसावरी ३, श्रीकंठ २, विहागरो १९, केदारा ८, हमीर १, कान्हरो ८, दरबारी कान्हरो ५, नाईकी कान्हरो १, मालव ५, मालब गौड २, ईमन ५, वसन्त १, वसन्त सारंग ३, पूर्वी ५, जैत-श्री २, मारवो २, गूजरी ११, मालकोश २, भैरव ६, गार व अरगजा ६, मतूवो १, नट ३, नटनाइकी ५, नाइकी ७, मल्हार १३, गौड मल्हार २, सौंहनी ५, भैरवी ४, खम्भावती २, हिन्डौल १, ध्रुवपद ८, वैजन्ती १, बंगाली ४, पंजाबो १, मारवाडी १, शंकरा भरन २, गोडी २, चौगन १, श्रीटंक १, नाईकी विभास १, दरबारी ४, अन्याऽन्य मिश्रित रागनियों में ५५ इस प्रकार ५०१ पद और ८८ चौपाई तथा ८२ दोहे हैं इन सबकी अनुष्टुप मान से कुल ग्रन्थ संख्या २००० से ऊपर है हस्त लिखित मूल पुस्तकों में लीला प्रसंगवश कुछ पद दुबारा तिवारा लिखे हुए थे, अतः मुद्रित पुस्तक में भी ५-७ पद दुबारा छप गये हैं।

ग्रन्थकार आचार्यपाद ने सप्तम घाट में श्रीप्रियाजी के पर-कीया भाव का निषेध और स्वकीया भाव का समर्थन किया है एवं पृष्ठ १८८–१८९ में श्रीराधाकृष्ण के विवाह का वर्णन कर उसकी दृढ़ पुष्टि की है जिन सज्जनों के चित्त में ऐसे अभिनिवेश ने घर बना लिया है कि अभिसार परकीया में ही घट सकता है उस अभिनिवेश की जड़ें काट कर आचार्यश्री ने इस गीतामृत गंगा में बहा दिया है क्योंकि विवाह से पूर्व एवं विवाह के अनन्तर कुमारावस्थापन्न स्वकीया नाइ-काओं के अभिसार सम्बन्धी कितने ही उल्लेख जहाँ–तहाँ ग्रन्थों में मिलते हैं। श्रीजयदेव और मैथिल कोकिल श्रीविद्यापति ठक्कुर जैसे कट्टर स्वकीया वादी महाकवियों के पदों में भी इसी आशय को लेकर ही अभिसार की चर्चा की गई है अन्यथा श्रीराधाकृष्ण का विवाह वर्णन संगति संगत नहीं कहा जा सकता। यहाँ इस विषय में इतना ही लिख देना पर्य्याप्त है।

विशेष जिज्ञासु जन 'पद्मपुराण' पाताल खंड वृन्दावन माहात्म्य अ० ८ तथा 'सनत्कुमार संहिता' का श्रीनारद महादेव सम्वाद वृहद्ब्रह्म-संहिता का श्रीनारायण ब्रह्मा सम्वाद एवं नारदपुराण पूर्वखण्ड ८२ अध्याय, 'देवी भागवत' नवम स्कन्ध पुरुषार्थ बोधनी 'उपनिषत्' 'पञ्च-तन्त्र' के मित्रभेद की पांचवी कथा, हेमचन्द्र कृत 'हेम कोश' आदि ग्रन्थ

देखें, इन सब में श्रीराधाकृष्ण के विवाह का एवं दम्पति भाव का वर्णन किया है, जैसाकि 'आदि पुराण' में—

"ततो विवाहमकरोद्वृषभानुर्गुणोदयः ।
वैशाखे च सिते पक्षे तृतीयाचाक्षयाव्हया ।।

इत्यादि सन्दर्भ द्वारा स्पष्टतया श्रीनन्द वृषभानु कृत श्रीराधाकृष्ण के विवाह का उल्लेख हुआ है । कल्प भेद से ब्रह्माजी द्वारा भी विवाह कराने का 'गर्ग संहिता' आदि में उल्लेख मिलता है । इसी प्रकार 'ब्रह्म वैवर्त' में विस्तृत वर्णन है । 'शिवपुराण' की कोटिरुद्र संहिता में "तस्य पत्नी समाख्याता राधेति जगदम्बिका" श्रीनारद पञ्चरात्रान्तर्गत—'श्रीराधासहस्रनाम' में नन्दनन्दन पत्नी च" स्कन्दपुराणान्तर्गत भागवत महात्म्य में तो 'आत्मारामस्य कृष्णस्य ध्रुवमात्मोऽस्तिराधिका । तस्या एवांशविस्तःराः सर्वाः श्रीकृष्णनायिकाः । स एव सा स सैवास्ति वंशीतत्प्रेमरूपिका ।।' इत्यादि वाक्यों से श्रीराधिकाजी को आत्माराम श्रीकृष्ण की आत्मा ही कहा है । इसी 'स्कन्दपुराण' के वैष्णवखण्ड वासुदेव माहात्म्य में जब श्रीनारदजी को परमात्मा के मूलरूप का दर्शन हुआ तब उनने परमात्मा की पत्नियों का इस प्रकार उल्लेख किया है—

"जयासुशीला ललितामुखानां वृन्दैः सखीनां सह राधया च"
समर्च्यमानं रमया च भामा कलिन्दजाजाम्ववत मुखानाम् ।

श्रीनिम्बार्क भगवान् ने "अंगेतुवामे०" 'अनुरूप सौभगाम्' इत्यादि शब्दों से और उनके शिष्य श्रीऔदुम्बराचार्यजी ने स्वसंकलित 'औदुम्बर संहिता' में—'ब्रह्म वैवर्त पुराण' के—

लक्ष्मीर्वाणी च तत्रैव जनिष्येते महामते ।
वृषभानोस्तु तनया राधाश्रीर्भविता किल ।।

इस श्लोक को उद्धृत कर "श्रीश्चते लक्ष्मीश्च पत्न्यौ" इस वेदमन्त्र के अभिप्राय को अभिव्यक्त किया है अर्थात् भगवान् की श्री और लक्ष्मी ये ही दो पत्नियां राधा और रूक्मिणी नामों से शास्त्र प्रसिद्ध है । श्रीनिम्बार्काचार्य परम्परावर्ती सभी आचार्यों ने और सूरदासजी

आदि व्रजभाषा के उद्भट कवियों ने श्रीराधाकृष्ण युगल का दाम्पत्य भाव ही स्वीकार किया है तदनुसार ही स्वामी श्रीहरिदासजी, श्रीहित-हरिवंशजी, श्रीव्यासजी और श्रीजीवगोस्वामीजी आदि व्रज वृन्दावन के रसिक महानुभावों ने इसी परम्परा का संरक्षण किया है। 'गीतामृत गंगा' के रचयिता श्रीवृन्दावनदेवाचार्यजी श्रीनिम्बार्काचार्यपीठासीन एक विशेष आचार्य थे अतः आपने परम्परागत पद्धति का ही प्रचार किया है, आपके पदों में अभिसार पयान आदि शब्दों को पढ़ कर किसी सज्जन को श्रीराधिकाजी के परकीयात्व का भ्रम नहीं, एतदर्थ थोड़ा सा दिग्दर्शन करा दिया गया है। इस विषय में "पं श्रीभागीरथ झा न्याय वेदान्ताचार्य द्वारा लिखित युग्मतत्त्वसमीक्षा" 'भगवतत्त्व सुधाम्बुधि' आदि संस्कृत ग्रन्थ एवं मिथिला भाषा के श्याम सुधानिधि का उपोद्घात ग्रन्थ विशेष द्रष्टव्य हैं। यद्यपि श्रीवृन्दावनदेवाचार्यजी महाराज द्वारा रचे हुए और भी बहुत से संस्कृत ग्रन्थ थे जिनका कि श्री व्रजानन्दजी आदि आपके साक्षात् शिष्यों के "भाष्यकारमहं भजे" इत्यादि वचनों से पता लगता है, तथापि वे सब उपलब्ध नहीं होते, कुछ स्तोत्र और एक 'भक्तिसिद्धान्तकौमुदी' आदि ग्रन्थ अवश्य उपलब्ध हुए हैं यह ग्रन्थ भी सुन्दर है किन्तु श्रीआचार्यपीठ में इसकी जितनी प्रतियां मिली वे प्रायः खण्डित ही मिली। उज्जैन की (Oriental Manu-cripts) लाइब्रेरी में एक पुस्तक पूर्ण है उसके अन्तिम श्लोक के "रसषण्डर्षिचन्द्र" के इस पद से वि० सं० १७९३ में संकलित यह ग्रन्थ आपकी अन्तिम कृति ज्ञात होती है। इच्छा थी कि आपको उपलब्ध कृतियां और विस्तृत इतिहास इसी ग्रन्थ के साथ प्रकाशित हो जाय परन्तु कई एक कारणों से वह मनोरथ अधूरा ही रहा, यदि प्रेमी पाठक इस 'श्रीगीतामृत गंगा' का विशेष आदर करेंगे तो आशा है वे भी सभी ग्रन्थ पाठकों के करकमलों में शीघ्र ही पहुचेंगे।

श्रीव्रजवल्लभशरण
वेदान्ताचार्य पञ्चतीर्थ
श्रीजी बड़ा मन्दिर (वृन्दावन)
अधिकारी—
अ० भा० श्रीनिम्बार्काचार्यपीठ, निम्बार्कतीर्थ
(सलेमाबाद) किशनगढ़ (राज०)

भागवत रसप्रवाहिनी 'गीतामृतगंगा'

अनन्त श्रीविभूषित आद्याचार्य जगद्गुरु भगवान् श्रीनिम्बार्काचार्यपीठाभिषित प्रतापी आचार्यप्रवर श्रीवृन्दावनदेवाचार्यजी महाराज कृत 'गीतामृतगंगा' की गीतात्मकता ही गीतामृत है। यह केवल गीतिपदात्मक मुक्तक वाला ग्रन्थ है। श्रीवृन्दावनदेवाचार्यजी महाराज द्वारा विरचित गीति छन्दों का यह मुक्तक काव्य रसोपासना की महनीय वाणी है। ग्रन्थारम्भ में परमाचार्य कवि ने गीतामृतगंगा का प्रतिपाद्य स्पष्ट करते हुए कहा है कि सच्चिदानन्द सर्वेश्वर भगवान् श्रीकृष्ण ही रस-स्वरूप परब्रह्म परमानन्द हैं, नित्यकिशोरी श्रीराधा उन्हीं की परमाह्लादिनी शक्ति है जो प्रतिपल उनके साथ नित्य दिव्य ललित-केलिविलासमय रमण करती हैं, वे निकुञ्जविहारी श्रीराधारमण रस महोदधि हैं, वे ही मूर्तिमान् रसराज शृङ्गार हैं जो रसपोषक शक्ति श्रीस्वामिनी सहित व्रज-विहार करते हैं। व्रजरस ब्रह्मानन्द सहोदर हैं जिसकी सर्वप्रथम रसानुभूति देवर्षि नारदजी ने की थी। देव, गंधर्व, ऋषि महर्षि, स्थावर, जंगम सभी को मुग्ध करने वाले इस व्रजरस से जो प्राणी रससिक्त नहीं होता—वह पशु से भी हेय है। श्रीमद्भागवत महापुराण में इसी रस का प्रतिपादन हुआ है। श्रीमदाचार्य कवि ने भी अनेकों शास्त्रों का मंथन कर श्रीश्यामा-श्याम की अनन्य कृपा से गीतामृतगंगा में इसी रस का प्रतिपादन किया है—

मुरली मधुर बजाई कें, जिनमोही व्रजबाल।
सोई नित प्रति गाइये, दिन दूलह गोपाल ।।

रसोवैसः श्रुति जो कहो, सोइ सच्चिदानन्द।
कहियत वेद पुराण में, परब्रह्म गोविन्द ।।

गीतामृतगंगा का यह आध्यात्मिक प्रवाह भाषा, भाव, काव्य-सौन्दर्य, रस-प्रवाह, शैली, छन्द बन्धन तथा लगभग १०६ विविध राग-रागनियों में निबद्ध बंगाली, मारवाड़ी, पंजाबी की छटा लिए संस्कृत और व्रजभाषा की सरस सुमधुर पद रचना काव्य और उपासना दोनों की दृष्टि से अत्यन्त उल्लेखनीय है। गीतामृतगंगा श्रीवृन्दावन-देवाचार्यजी महाराज की संगीत-शास्त्रीय गरिमा का परिचायक ग्रन्थ है। यहाँ आचार्यश्री की विविध राग-रागनियों-वाद्यों तथा शास्त्रीय

गायनों के क्षेत्र में आधिकारिक ज्ञान की प्रामाणिकता सिद्ध होती है। इसका चतुर्दश घाट तो संगीत–ज्ञान गाम्भीर्य के प्रदर्शन एवं दिग्दर्शन के लिये ही लिखा गया प्रतीत होता है।

रूपनगढ़ राज्य के युवराज सांवतसिंहजी (श्रीनागरीदासजी), बिरजानन्द तथा घनानन्द ने आचार्यश्री से ही संगीत शिक्षा एवं उसके समुचित अभ्यास का निर्देशन लिया था। यहाँ निम्बार्कीय परम्परानुसार श्रीराधाकृष्ण की दाम्पत्य लीला का प्रतिपादन हुआ है तथापि श्रीकृष्ण की बाल, पौंगड़ एवं कैशोर लीलाओं का भी सांगोपांग चित्रण किया गया है। निम्बार्कीय रसोपासना की मर्यादानुसार यहाँ श्रीराधाजी के स्वकीयात्व को ही प्रमुखता दी गई है, जो युगल के विवाहादिक प्रसंगों से प्रतिपादित हैं।

गीतामृतगंगा चतुर्दश घाट—'वृन्दावन हिमगिरि' से प्रवाहित इस 'गीतामृतगंगा' की रसधारा में अवगाहनार्थ आचार्यश्री ने भक्तों की सुविधा के लिये इसमें चौदह घाटों का निर्माण किया। आमन्त्रण देते हुए कहते हैं—

वृन्दावन गिरि तैं चली रस की उठत तरंग।
करहु स्नान नित भक्त सन, इहि 'गीतामृतगंगा'॥

विविध लीला विषयक प्रसंगों की यह मधुर मंदाकिनी रूपी सरस शृङ्गारिक काव्यधारा चौदह घाटों में अबाध गति से बहती हुई निकुंज केलि रस युगलवाणी में समाविष्ट हुई है। केवल भक्तों को ही नहीं उदार आचार्यश्री विषयीजनों को भी इसका सेवन करने के लिये परामर्श देते हैं—

बक विषयीजन परस इहि बेउ विमल ह्वै जाउ।
जानि अजानि लगै जु अय पारस करै प्रभाउ॥

इस गीतामृतगंगा का प्रत्येक घाट रसिकों की रुचि के अनुरूप निर्मित है। प्रत्येक घाट पर एक विशेष रस का रसास्वादन होता है। किसी घाट से वात्सल्य रस की लहरें टकराती हैं तो किसी से नवयौवनमदमत्त लाल के रास-विलास से समुच्छलित रस की तरंगे।

इस रसगंगा की पहली धारा ही कितनी सरस, सुखद एवं मनोहर है जिसके संस्पर्श मात्र से नित नव दूलह–दुलहिन प्रियालाल की मधुर झांकी अन्तस्तल को गुदगुदा देती है। इस 'गीतामृतगंगा' की गति से थिरकती हैं, हाव–भाव एवं गति विलास से अपने भावों को अभिव्यक्त करने में पूर्ण समर्थ हैं। सहज ही इनमें १०६ राग–रागनियों का

समावेश हो गया है। इससे स्पष्ट है कि आचार्यश्री स्वयं एक उच्च-कोटि के संगीतज्ञ थे। इसीलिए कविवर श्रीनागरीदास, घनानन्द जैसे उच्चकोटि के कवियों की काव्य साधना एवं संगीत आराधना आपके श्रीचरणों में ही हुई थी। 'गीतामृतगंगा' के चतुर्दश घाटों का संक्षिप्त निरूपण क्रमशः निम्नानुसार है—

बाललीला वर्णन प्रथम घाट—श्रीवृन्दावनदेवाचार्यजी महाराज ने 'गीतामृतगंगा' के प्रथम घाट में श्रीकृष्ण की बाल्यावस्था का संक्षिप्त चित्रण किया हैं। बाल्यावस्था को अपने बाल, कौमार तथा पौगंड नामों से विभाजित करते हुए तदनन्तर कैशोर और युवावस्था का नामोल्लेख किया है। श्रीकृष्ण जन्मोत्सव से प्रारम्भ इस वर्णन में नन्दराजा और जसुमतीजी के घर मांगलिक आनन्द एवं बधाई गान का विधान है, बंदनवार–पताकादि से घर-आंगन सजा है, गोप नृत्य कर रहे हैं, गोपियां मंगल गान गा रही हैं, मागध–सूत–बंदीजन–भाट बधाई तथा विरुदावली गा रहे हैं। गज, रथ, हय, मोती माणिक्यादि दान दिये जा रहे हैं, दधि-कांदौ से दूध–दही–घृत–हरद की सरिता बह चली है। माँ यशोदा जल-वाइ पूजन हित सखी–समाज सहित जा रही है—यथाविधि वरुण देवता की पूजा की जाती है। तदनन्तर बालक—कृष्णजी की शिशु-लीलाओं का वर्णन है। पालने में यशोदा द्वारा लोरी गाकर झुलाना, शिशु कृष्ण द्वारा अंगुष्ठ पान, आंगन में चुटकी देकर चलाना, शिशु लड़ावन–खिलावन के रोचक वर्णन हैं। नन्द के मणिमय आंगन में घुटुरन चलते शिशु कृष्ण का यह वर्णन सूरदासजी द्वारा रचित पदों का सा लालित्य लिये हैं।

तदनन्तर बाल गोपाल की साल गिरह, दधि–माखन चोरी, गूजरी उपालंभ, भांडे फोड़कर मुख दधि लपेटन के सरस प्रसंग हैं। श्याम–सगाई के अवसर पर वेणीगुंथन तथा नख–शिख वस्त्राभूषण पहनाने के लिए यशोदा लाड़–लडावन का वर्णन है। इसी प्रकार यहाँ वृषभानुदुलारीजी का जन्मोत्सव, वर्ष गांठ, उनका रूपवर्णन दर्शनीय हैं।

पौगण्ड लीला वर्णन द्वितीय घाट—द्वितीय घाट के पौगण्ड लीला प्रसंग में नन्दलाल गोविन्द गोपाल गोकुलचन्द की पौंगड लीलाएँ, गोचारण, गोवर्धन धारण, वनगमन, वनभोजन, गोपाल का गोधूलिक व्रजागमन, खरिक दुहावन, वंशीवादन का संक्षिप्त वर्णन है। श्रीकृष्ण के रूप सौन्दर्य से मोहित गोपियों का प्रेमचित्रण हुआ। गोदोहन के

समय खीरक में, पनघट पर, यमुना मार्ग में श्रीकृष्ण द्वारा छेड़छाड़ का वर्णन उल्लेखनीय है।

दानलीला वर्णन घाट तृतीय—इसके अन्तर्गत चीर हरण, दान आदि के सरस प्रसंग है। श्रीकृष्ण के अनेक रूपगुणादिपूर्ण सौन्दर्य से मण्डित स्वरूप, वस्त्राभूषण, हाव-भाव, प्रेम चेष्टाएँ, रूप माधुरी के प्रति गोपियों के मोह शृङ्गार आदि के कलात्मक छन्द रचे गये हैं।

कैशोरलीला वर्णन चतुर्थ घाट—गीतामृतगंगा के चतुर्थ घाट में कैशोर लीला वर्णन प्रसंगों में युगल की रूप छवि–नखशिख सौन्दर्य, नैनअधर–मुखमण्डल का चित्ताकर्षक आलंकारिक वर्णन तथा परस्पर प्रीतिभाव के प्रसंग है।

दृष्टकूट छन्द से रूप सौन्दर्य का चित्रण रहस्यात्मक है—देखो अचरज कनकलता चल तापर पूरनचंद। नील नलिन द्वै राजत तिन पर दोय मिलिन्द ॥

रासक्रीड़ा वर्णन पंचम घाट—पंचम घाट में रास वर्णन है—यह व्रजरस की पराकाष्ठा का प्रसंग है। यहाँ राग-रागनियों में बद्ध गीति सौन्दर्य का पद सौष्ठव अत्यन्त अनूठा है। राग गारो वा अरगजा में गेय रास वर्णन द्रष्टव्य है–"घनश्याम घनश्याम घनश्याम प्यारा नाचत ततथेई थेई२ भारा। तो सूरति पर ता तन नन२ तन-मन-धन वारा ॥

मानलीला वर्णन षष्ठ घाट—इसके अन्तर्गत मान, अभिसार का वर्णन है। हरि से मान कर प्रियाजी भवन के कोने में बैठी मौन होकर लम्बी उसासे ले रही है। उन्हें रूठी हुई देखकर प्रभु मनाने के लिए दूति भेजते हैं। वह आकर राधाजी की मनुहार करती हुई कहती है—

ऐरी निठुर बाल तो बिन लाल अनमनैं बैठे तैं इत मानअरोखो ठान्यौं।
चलि हठु तजि सजि अभरन अम्बर काहे करति सौतन मन मान्यौ ॥

इतने पर भी राधाजी नहीं मानती है तो सखी पुनः उन्हें समझाती हुई श्रीकृष्ण की पीड़ा का वर्णन करती है—

तुव सुख सदन बदन बिनु देखें लालहि अदन न सदन सुहात।
मदन कदन अति देन बावरी रदन कदन रस क्यों नहि प्यावत ॥
कहा परी वांनि तोहि मानिनि ? अब हित उपदेशन तो मन आवत।
नित उठि मान समान कौंन इह आप दुखी औरनि दुख धावत ॥

मान करने से कोई लाभ नहीं इसी कारण वह कहती है—

मिलिये हँसिये खिलिये किये रोष यौंही तन कौ रंग रूप ही छीजै।
मान में कौन समान है सुन्दरि लीजै भइ सुख जो लगि जीजै।।

अभिसार सुरत सुरतान्त लीला वर्णन सप्तम घाट—इस घाट में आचार्यश्री ने श्रीराधाकृष्ण की अद्‌भुत जोड़ी का वर्णन किया है। बिजली की सी आभायुक्त राधाजी एवं सजल नील घन वर्ण श्रीश्यामसुन्दर की जोड़ी सुशोभित हो रही है। प्रस्तुत छन्द में उनका मनोहर रूप द्रष्टव्य है—

आजु विराजत युगलकिशोर।
अंग अंग रति रंग सनै दोऊ उठि बैठे शय्या पर भोर।
नैन नैन मद घूमत झूमत चारू चिकुर विथुरे चहुं ओर।।

उपालम्भ विरहादि लीला वर्णन अष्टम घाट—इसमें खण्डिता राधा के उपालम्भ, विरह, मान-मनावन के प्रसंग है। कृष्ण से रूठी हुई किशोरीजी कहती है—

मैं पनलीनौं आजुते तुमसौं बोलौं नांही।
अंखियां जो देखेंगी देखौ समझौंगी मन मांही।।
कपट नेह सौ देह जरति है मति मेलौ गर बांही।
'वृन्दावन प्रभु' चाहौ वै बातै वे तो भई दंगाही।।

कभी कृष्ण को उपालम्भ देते हुए कहने लगती है—'तुम्हें नित्य नये स्नेह सम्बन्ध जोड़ने की आदत पड़ गई है, रस का चस्का लग गया है इसमें कभी लज्जा भी अनुभव नहीं होती। वे तो यहाँ तक कह देती है—

ऐसी ये पाटी पड़े धुरते तन सांवरों है मन तैसोई कारौ।
'वृन्दावन प्रभु' कारे पै रंग न दूजौ चढ़ै तिहारो कहा चारौ।।

प्रेम करना जितना सहज है उतना ही उसका निर्वाह करना कठिन। विरह में प्रियतम के अभाव में सुख देने वाले समस्त उपकरण कष्टप्रद प्रतीत होते हैं—

प्यारे बिनु सुखद लगे दुःख दैन।
लागत मलय समीर तीर सों चन्द लग्यो जिय लैंन।।

बसन्त उत्सवादि वर्णन नवम घाट—यह उत्सव के वर्णनों का घाट है जिसमें बसन्त, होरी, फाग, फूलडोल-हिण्डोरा, अक्षयतृतीया, सावनी तीज, पवित्रा एकादशी, दिवारी, गोवर्धन पूजा के कलातमक प्रसंग हैं जहाँ प्रकृति की छटा एवं उत्सव ऋतु पर्व अनुसार साज-सज्जा के अत्यन्त सुन्दर वर्णन हैं। स्वकीयात्व भाव से युगल क्रीड़ा के सुमधुर

रति प्रसंग भी हैं, पदों की चित्रोपमना अनूठी हैं, चित्रकला, संगीत, प्रकृति, वस्त्राभूषणयुक्त परम्परागत उपमानों सहित नखशिख–चित्रण, शृङ्गारिक हाव-भाव, मधुरस उपासनात्मक महोत्सव सभी एकमेक हो गये हैं।

नाम संकीर्तन वर्णन दशम घाट—कलियुग में ईश्वर के नाम–संकीर्तन की महत्ता का प्रतिपादन इस घाट में वर्णित है। आज चित्त-वृत्ति अन्यत्र कहीं ठहर नहीं सकती अतः उच्च स्वर में कृष्ण का गुण-गान ही भक्ति का सहज साधन है। इसका महत्व निरूपित करते हुए आचार्यश्री ने मानव को प्रेरित किया है—

रामकृष्ण केशव हरिगावो, मन माधव पद लै उरझावो।
झांझ लाल मिरदंग बजावो, तनु तरु ते अघ विहंग उडावो।।

दुर्लभ मानव देह प्राप्त कर जीवन को सार्थक बनाने के लिये नाम स्मरण की सर्वाधिक महत्ता है। भौतिक सुख–सम्पदाओं में लिप्त रहने वाले प्राणी नित्य बद्ध जीवों की कोटि में आते हैं तथा युगों पर्यन्त नरकगामी बने रहते हैं। गीतामृतगंगा के इस घाट में ऐसे जीवों की मुक्ति का उपाय निम्न छन्द में अवलोकनीय हैं।

राधे कृष्ण राधे कृष्ण राधे गोविन्द,
राधे कृष्ण राधे कृष्ण गोकुलचन्द।
राधे कृष्ण राधे कृष्ण मदन गोपाल,
राधे कृष्ण राधे कृष्ण गिरधरलाल।।
राधे कृष्ण राधे कृष्ण गोपीनाथ, राधे कृष्ण राधे कृष्ण मंगल गाथ।
राधे कृष्ण राधे कृष्ण श्यामा श्याम, राधे कृष्ण राधे कृष्ण मंगल नाथ।।

कंसवध लीला वर्णन एकादश घाट—'जब जब होहिं धरम की हानि, बाढ़हिं असुर महा अभिमानी' तभी ईश्वर का अवतार होता है। कंसवध में कृष्ण का यही स्वरूप दृष्टिगोचर होता है।

पुष्करादि तीर्थ वर्णन द्वादश घाट—इस घाट में पुष्कर, प्रयाग, वृन्दावन, मथुरा, काशी आदि तीर्थ स्थलों का संक्षिप्त वर्णन किया है। गंगा, यमुना, सरस्वती का पवित्र जल पल भर में ही तन-मन को पाप-ताप से मुक्ति दिला देता है। गंगा के पावन जल की शरण मांगते हुए आचार्यवर वन्दना करते हैं।

ए जी गंगा तरल तरंगा हरिपद रंगा।
तुव जल संगा कीट विहंगा होत है शत्रु अनंगा।।

दरशि सुत्तापिन अति ही पापिन करत तुरत भवभंगा।
तव चरण शरण मांगत कर जोरै 'वृन्दावन' जन संगा ।।

सर्वरस मिश्रण वर्णन त्रयोदश घाट—गीतामृत गंगा का यह घाट सर्वरस मिश्रित होने से सर्वाधिक वृहद् घाट है। इसका प्रारम्भ भक्ति-भावना से हुआ है। मन को सम्बोधित करते हुए राम का नाम लेने की प्रेरणा दी हैं ताकि काम, क्रोध, मद, लोभ, मोह आदि से मुक्ति मिल जाये। अपने को पतित मानते हुए ईश्वर से उद्धार की प्रार्थना की है तो कभी यशोदा मैय्या के द्वारा बाजे बजाते हुए, कपूर की बाती युक्त कंचन थाल द्वारा बालकृष्ण की आरती किये जाने का वर्णन हैं।

गांधर्वोपवेद संक्षिप्त विवरण चतुर्दश घाट—गांधर्वोपवेद के आधार पर इस घाट में विलक्षण रूप से शास्त्रीय संगीत की विविध राग-रागनियों एवं विविध वाद्य यन्त्रों का वर्णन किया गया है। उदाहरणार्थ—

निषद ऋषभ गांधार अरु, मध्यम धैवत पांच ।
पंचम षड्ज में द्वै मिलै, होहि सप्तसुर सांच ।।
ग्राम तीन एहैं कहै, भद्र मध्य अरुतार ।
बाढ़या इन ही दर्शनि तैं रागनि को परिवार ।।

श्रीवन्दावनदेवाचार्यजी महाराज संगीत के विशेषज्ञ थे। सगीत शास्त्र पर उनका अच्छा अधिकार था। उन्होंने कृष्णगढ़ के राजकुमार सांवतसिंहजी एवं घनानन्दजी को संगीत की शिक्षा दी थी। अतः "गीतामृतगंगा" में काव्य के अतिरिक्त संगीत की भी प्रधानता है। यह 'चतुर्दश घाट' तो उनके संगीत ज्ञान के प्रदर्शन के लिये ही लिखा गया है। संगीत की महत्ता प्रतिपादित करते हुए आपने लिखा है—

नाद ब्रह्म गांधर्व है, या बिन सुर नंहि नृत्य ।
नहीं गीत या बिन कहू ताते इह है नित्य ।।
उठत वायु तें नाद हैं, बातैं सुर संघात ।
सुर तं उपजन राग सुनि, जन विह्वल ह्वै जात ।।

वस्तुतः "गीतामृतगंगा" की कणिका-कणिका सरस, सुखद है। प्रत्येक तरंग संगीत की गति से थिरकती है। हाव-भाव एवं गति विलास से अपने भावों को अभिव्यक्त करने में पूर्ण समर्थ है।

—डा० सन्तोष शर्मा
प्रवक्ता—हिन्दी, जी सत्यसाई कालेज फार वीमेन, जयपुर
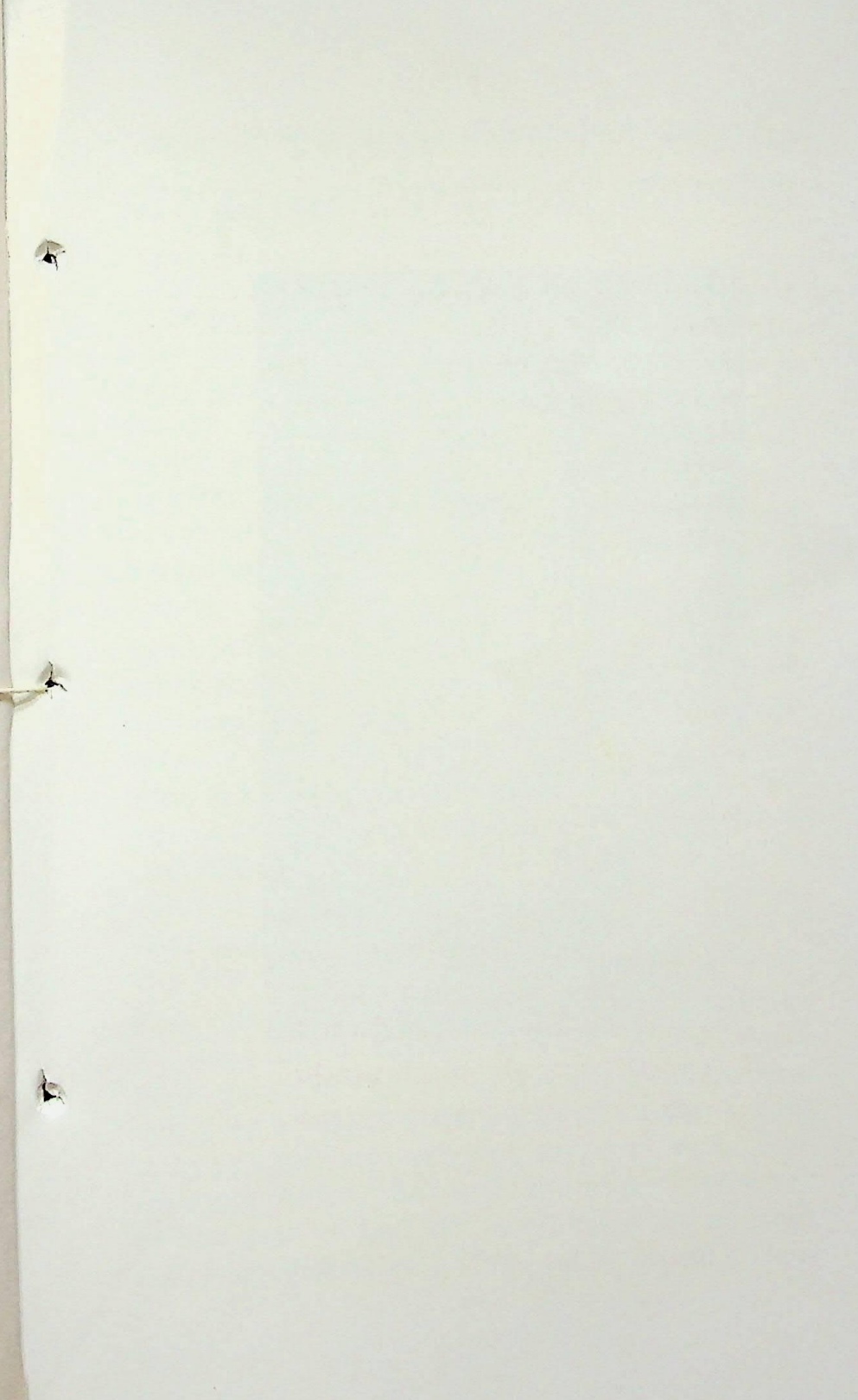
॥ श्रीराधासर्वेश्वरो जयति ॥
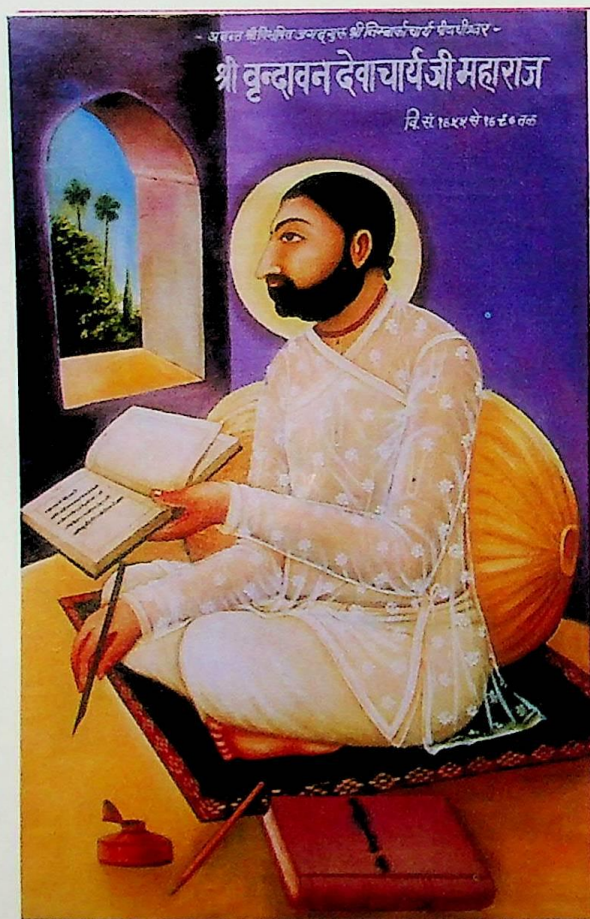
अनन्त श्रीविभूषित जगद्गुरु श्रीनिम्बार्काचार्य

श्रीवृन्दावनदेवाचार्यजी महाराज

अनन्त श्रीविभूषित जगद्गुरु श्रीनिम्बार्काचार्यपीठाधीश्वर

श्रीवृन्दावनदेवाचार्यजी महाराज

श्रीवृन्दावनदेवाचार्यजी का उत्तर-मध्यकालीन सन्तों-धर्माचार्यों में बहुत ऊँचा स्थान है। वे श्रीनिम्बार्क सम्प्रदाय के प्रधान आचार्यपीठ निम्बार्कतीर्थ (सलेमाबाद) के वि० सं० १७५४ से १७९७ तक पीठाधीश रहे। उनका व्यक्तित्व बहुमुखी प्रतिभा, अतीव साहस, विद्वत्ता, तपश्चर्या, सरलता और साथ-साथ रसिकता से समन्वित था जो जन-जन से लेकर राजा-महाराजाओं, विद्वान्, पण्डितों और महर्षियों, सभी पर अपना अमित प्रभाव छोड़ता था। अनेक राजे-महाराजे उनके गुणों के अनुसरणकर्ता, उनकी महती कीर्ति के गायक थे। अनेक राजरानियाँ उनके दर्शन कर अपने को महाभागा मानती थीं और अपनी अजस्र काव्य-धारा में उनको विरुदावली का बखान करती थी। श्रीवृन्दावन-देवाचार्यजी संगीत के भी महान् आचार्य थे। कृष्णगढ़ नरेश महाराज सावन्तसिंहजी जो पीछे सन्त नागरीदासजी के नाम से प्रसिद्ध हुए, श्रीव्रजानन्द आचार्य, हिन्दी साहित्य के महाकवि घनानन्द आदि उनसे दीक्षित ही नहीं, काव्य एवं संगीत-शास्त्र के भी शिष्य थे। कृष्णगढ़ नरेश महाराजा राजसिंह की पत्नी बांकावती, राजकुमारी सुन्दरकुंवरि उनकी शिक्षित भक्त थी। उस समय के प्रकाण्ड पण्डित और दार्शनिक श्रीजयरामशेष ने भी श्रीवृन्दावनदेवाचार्यजी के चरणों में बैठकर विविध शास्त्रों का अध्ययन किया था और उनसे दीक्षा भी ग्रहण की थी। अनेक कवि, विद्वान्, पण्डित, राजपुरुष एवं सम्भ्रान्त नागरिक उनकी सौम्यता, गम्भीरता और परोपकारप्रियता के अनन्य उपासक थे। आचार्य श्रीवृन्दावनदेवाचार्यजी का पंजाबी, मारवाड़ी, बंगाली, मैथिली, व्रजभाषा आदि पर अपूर्व अधिकार था। सम्बन्धित प्रादेशिक भाषा में जब वे भक्तजनों के बीच उपदेशामृत की वर्षा करते तो वहाँ के लोग आत्मविभोर होकर उनके अनन्य कृपापात्र बन जाते थे। सादगी और सरलता ऐसी कि जो शिष्य अथवा भक्त एक बार सम्पर्क में आता वह उनसे इतना घुल-मिल जाता कि सदा-सदा के लिए यह समझने लगता कि आचार्यश्री की मुझ से अधिक किसी पर कृपा नहीं है। राज-

कुमारी सुन्दरकुंवरि के एक छन्द से उनके भक्तों के हृदय की अनन्यता का सहज अनुमान लगाया जा सकता है—

ये ही कुलदेव मेरे, ये ही शुभ सेव्य मेरे,
ये ही गुणभेव मेरे, इनही कों भाय हौं।
ये ही मति गति मेरे, ये ही मातु पितु मेरे,
ये ही बन्धु सुत मेरे, इनही कौं धाय हौं ।।
ये ही पक्षधारी मेरे, ये ही हितकारी मेरे,
ये ही ऋद्धि सारी मेरे, इनही कौं चाय हौं।
श्रीगुरु कृपा तें, पाय अमृत अभय भेव,
ताहि तजि आन भजि काहे विष खाय हौं ।।

श्रीनिम्बार्क-सम्प्रदाय की परम्परा के अनुसार श्रीवृन्दावनदेवाचार्यजी का सखी नाम "मनिमंजरी" था। वृन्दावनदेव नाम होने के कारण वे साक्षात वृन्दावनाधीश के नाम-रूप-गुणों से संयुक्त थे। हिन्दू-मुसलमान, शासक एवं प्रजाजन सभी का आपके प्रति सच्चा अनुराग था जिसका मूल कारण आपकी सादगी एवं जन-जन के उपकार में निरत रहना था। महापण्डित जयरामशेष ने आचार्यचरण की इसी रूप में वन्दना की है—

श्रीवृन्दावनदेवाय गुरवे परमात्मने।
"मनोमंजरि" रूपाय युग्मसंगानुचारिणे ।।
भजेऽहं वनाधीशदेवं महान्तं, महासौम्यरूपं जनानां सुशान्तम्।
सदा प्रेममत्तं महाप्रेमगम्यं, मुखे राधिकाकृष्णलीलासुरम्यम् ।।
(पं० शेषजयरामदेव)

आचार्य व्रजानन्द ने "यशोदातनय! स्वामिन्! द्विजराज! महेश्वर! प्रसीद त्वं महादेव!" कहकर उन्हें साक्षात् नन्दनन्दन माना है और उनकी निरन्तर कृपा का वरदान माँगा है। परन्तु उपर्युक्त दोनों प्रशस्तियों से अधिक महत्वपूर्ण जयपुर नरेश महाराज द्वितीय जयसिंह की काव्याञ्जलि है जिसमें उन्हें साक्षात् नारायण, सच्चिदानन्द रूप, वेदों में पारंगत स्वयं परमात्मन् कहकर सम्बोधन है। जयसिंह द्वितीय अपने समय के अत्यन्त प्रभावशाली राजपुरुषों में थे। इन्हीं के निमन्त्रण पर श्रीवृन्दावनदेवाचार्यजी सम्वत् १७५६ में आमेर पधारे। वहाँ सवाई महाराज ने इनका अद्भुत स्वागत-सत्कार किया

और राजप्रासाद में इनकी पधरावनी हुई। इन्हीं के आदेश से सवाई महाराज ने सम्वत् १७६९ और १७७५ में दो महान् यज्ञों का समायोजन किया। इनमें भारत-भर के प्रसिद्ध विद्वान्, सन्त-महन्त और आचार्यों को आमन्त्रित किया गया। इन यज्ञों में अग्रपूजा के योग्य आचार्यचरण श्रीवृन्दावनदेवाचार्यश्री को निर्धारित किया गया। जिस स्थान पर इन अद्भुत यज्ञों का समारोह सम्पन्न हुआ वह आज भी आमेर से बाहर परशुरामद्वारा के पास विद्यमान है।

गुलाबी नगर जयपुर के निर्माण और बसावट का शुभारम्भ भी इन्हीं आचार्यचरण के आदेश से सवाई महाराजा जयसिंह ने माघ कृ० ५ संवत् १७८४ में किया था। विभिन्न वैष्णव-सम्प्रदायों के आचार्यों और महात्माओं को भी यहाँ बसने का निमन्त्रण दिया गया और उनके लिए आवश्यकतानुसार मठ-मन्दिरों का निर्माण भी कराया गया। यह सब कार्यक्रम भी महाराजश्री के परामर्शानुसार ही किया गया।

श्रीमद्भगवद्गीता आदि अनेक आर्ष ग्रन्थों में भगवान् के पृथ्वी पर अवतार लेने का मुख्य कारण भू-भार को दूर करना और धर्म-संस्थापना बताया गया है। भगवान् के पार्षद भी समय-समय पर अवतीर्ण होकर पापों का विनाश एवं धर्म का प्रचार करते हैं। निम्बार्क सम्प्रदाय के अनेक आचार्य इसी कोटि में हैं। आचार्य श्रीनिम्बार्क का दक्षिण अरुणाश्रम में उदय हुआ और उन्होंने उस समय समूचे देश में व्याप्त बौद्ध-जैनों की अनास्था एवं नास्तिकता समन्वित उपासना प्रणाली, महायानी अनाचार और वज्रयानी वीभत्सता का उच्छेदन कर शकराचार्य से पूर्व ही "सखी सहस्रैः परिसेवितां मुदा" श्रीराधाकृष्ण की युगलोपासना का प्रवर्तन किया था। इससे समूचे देश में प्रेमाभक्ति का अलौकिक आलोक चारों और फैला और कुत्सित दुर्वासना की विभीषिका का समूलोच्छेदन हो सका। इसी कारण भविष्य पुराण में उन्हें भगवान् और समस्त वांछित फलों का दाता कहा गया है*। उनकी साम्प्रदायिक परम्परा में ३३ वें स्थान पर श्रीकेशवकाश्मीरि-भट्टाचार्यजी हुए जिन्होंने श्रीमथुराजी में दुर्दान्त यवन काजी के शिखोच्छेदन-तन्त्र का उच्छेदन कर व्रज-प्रदेश को यवन आतंक से मुक्त किया

---

* निम्बार्को भगवान् येषां वाञ्छितार्थ फलप्रदः।
उदयव्यापिनी ग्राह्या कुले तिथिरुपोषणे।। (भविष्य पुराण)

ग्रौर यहाँ पर श्रीराधाकृष्ण की सुखद शीतल-संस्पर्शिनी माधुर्योपासना को संजीवनी प्रदान की थी। श्रीहरिव्यासदेवाचार्यजी इन्हीं श्रीकेशव-काश्मीरिजी के प्रशिष्य थे। जम्मूक्षेत्रस्थ चटथावर ग्राम में उन्होंने पशुवलि ग्रौर नरवलि से सन्तुष्ट होने वाली देवी को दीक्षा देकर सात्विक वैष्णव पूजन-ग्रर्चन पद्धति का चतुर्दिक प्रसार किया ग्रौर नित्यविहार उपासना का रसिकतापूर्ण मार्ग प्रशस्त किया। श्रीहरिव्यासदेवाचार्यजी के १२ प्रधान शिष्य हुए, जिन्होंने सम्प्रदाय के द्वादश द्वारों की स्थापना की। उनमें से श्रीस्वभूरामदेवजी ने पंजाब में धार्मिकों के उपद्रव शान्त किये ग्रौर श्रीपरशुरामदेवाचार्यजी ने राजस्थान में पुष्कर के निकट फकीर मस्तिगशाह चिश्ती नामक तान्त्रिक यवन ग्राक्रान्ता से उस भूमि को निर्भय-निरापद ही नहीं वरन् सस्कार-युक्त किया था। भक्त मालकार महात्मा श्रीनाभादासजी "जगली देस के लोग सब परसुराम किये पारषद"* का बार-बार शखनाद करते हुए नहीं ग्रघाते।

श्रीवृन्दावनदेवाचार्यजी पूर्वाचार्य परम्परा में ३९ वीं पीढ़ी एवं श्रीपरशुरामदेवाचार्यजी महाराज की चौथी पीढ़ी में निम्बार्कतीर्थ (सलेमाबाद) पीठ के ग्राचार्य थे। उनके समय तक ग्राते-ग्राते राज-नैतिक, धार्मिक एवं सामाजिक परिस्थितियों में बहुत कुछ परिवर्तन हो चुका था। ग्राक्रान्त मुसलमान इस समय तक राजस्थान में प्रवेश कर चुके थे। वहाँ के ग्रधिकांश नरेशों ने उनको वश्यता स्वीकार कर ली थी। ग्रत: धार्मिक क्षेत्र में उनकी जोर-जबर्दस्ती मुसलमानी धर्म ग्रहण करने के निमित्त चल पड़ी थी। उनके ग्रतिरिक्त शैव, शाक्त ग्रौर नाथ सम्प्रदायों के ग्रनुयायी भी वैष्णव धर्म के विनाश पर तुले थे। इनमें शैव सबसे ग्रधिक संहारकारी थे। कहा जाता है कि उनके कोई "भैरों गिरि" एवं "लच्छी गिरि" गुसांई थे, जिन्होंने प्रत्येक दिन पांच वैष्णवों का संहार करने का व्रत ले रखा था। बात केवल इतनी थी कि किसी कुम्भ के ग्रवसर पर उनसे तीर्थ जलाशयों में नग्न स्नान करने का वैष्णवों ने वर्जन किया था। राजस्थान में रामानन्दी वैष्णवाचार्यों का भी ग्रच्छा प्रभाव था। उनके ग्राचार्य कृष्णदास पयहारी ने शैवों का दमन किया था ग्रौर गलता (जयपुर) में साम्प्रदायिक गद्दी की स्था-

---

* भक्तमाल—नाभादास कृत, छन्द सं० १३७

पना की थी। श्रीकृष्णदास पयहारी के बढ़ते हुए प्रभाव के परिणाम स्वरूप महात्मा बालानंदाचार्यजी का उदय हुआ, जिनका जयपुर की तत्कालीन धार्मिक एवं सामाजिक गतिविधियों में विशेष हाथ रहता था। इनके समय में दशनामियों के अत्याचारों के परिणाम स्वरूप अनेक वैष्णवों का नित्य संहार होता था। अतः धर्म एवं प्राणों के रक्षार्थ वैष्णव सम्प्रदायों का संगठित होकर विरोधी तत्त्वों से लोहा लेना अनिवार्य हो गया था। वैष्णवों के संगठन का यह महत्वपूर्ण कार्य श्रीवृन्दावनदेवाचार्यजी ने किया। उन्होंने आचार्य श्रीबालानन्दजी के सहयोग से जयपुर के पास ब्रह्मपुरी में वैष्णव सम्प्रदायों का विशाल सम्मेलन बुलाया जिसके संयोजक पद्माकर पुण्डरीक थे। इस सम्मेलन में तात्कालिक धर्म-संकट के निवारणार्थ त्यागी, वैरागी, वैष्णवों के सेना संगठन का सूत्रपात्र हुआ जो कालान्तर में अनी-अखाड़ों के नाम से प्रसिद्ध हुए। वैष्णवों के चतु:सम्प्रदायों का एक दूसरा सम्मेलन ब्रह्मपुरी से तीन कोस उत्तर की ओर श्रीवृन्दावनदेवाचार्यजी के सभापतित्व में सम्पन्न हुआ जिसमें संगठन के नैमित्तिक आचार, यम-नियम और ५२ प्रतिज्ञाओं आदि का निर्धारण हुआ था जिनमें से १३ निम्बार्क सम्प्रदाय की थी। इस द्वितीय सम्मेलन की भारी सफलता के परिणाम स्वरूप उस स्थान का नाम निम्बार्क-स्थान (वर्तमान में नीम का थाना) ही पड़ गया। यह सब वृन्दावनदेवाचार्य जी के अत्यन्त प्रभावशाली व्यक्तित्व का ही परिचायक है। उस समय वे वैष्णवों के चारों सम्प्रदायों के शिरमौर थे। किशनगढ़ राजकीय चित्रकोष में श्रीवृन्दावनदेवाचार्यजी का एक चित्र है जिस पर उनके प्रतापी एवं दिग्गज महान्त आचार्य होने की उपलब्धि का प्रभावी उल्लेख है। ऐसा प्रतीत होता है कि देश के धार्मिक एवं राजनैतिक ही नहीं, जन-जन के हृदय में उनके उपकार का जो ऋण था वह इस छप्पय द्वारा मुखरित होकर कवि वाणी से प्रस्फुटित हुआ है—

श्रीवृन्दावनदेव महान्तसे दिग्गज भये न होंहि छिति।
दिनकर लौं जगमग प्रताप जस जक्त अखंडित।
रसभाषा कविराज महादिग्विजयी पंडित।।

प्रति निबह्यौ ऐश्वर्य भूप भये आज्ञाकारी।
अन्त समै लौं परम धर्म मरजादा पाली।।

श्रीनिम्बादित्य पद्धति गहे हरिव्यासदेव गादी थिति।
श्रीवृन्दावनदेव महान्त से दिग्गज भये न होंहि छिति।।

दिग्विजयी महान्त आचार्य के अतिरिक्त उनके चमत्कारी सिद्ध रूप की प्रसिद्धि भी राजस्थान में कम नहीं है। जनश्रुति है कि एक बार सर्वसंहारीनाथ नामधारी एक शैव गोसांई को वैष्णवों के वध करने, मद्य-मांस के लिए जनसाधारण को सताने, नर मुण्डों और नर-कंकालों के ढेर के ढेर संग्रह करने का व्यसन था। इससे समग्र राज-स्थान चिन्ताग्रस्त था। एक बार उसका धावा श्रीवृन्दावनदेवाचार्यजी के एक वणिक् शिष्य के घर पर हुआ जिसके वैभव को देखकर वह भौंचक्का रह गया। उसने वणिक् से मांस-मदिरा के लिए बहुत-सा धन और उसके चार पुत्रों के नर-मुण्डों को मांगा जिसे सुनकर वणिक् स्तब्ध रह गया। उसने अनुनय-विनय की और कहा कि यह वैभव और संतति सब कुछ महाराज श्रीवृन्दावनदेवाचार्यजी का है। उनसे आज्ञा लेकर दूंगा। गोसांई बोला, "कौन वृन्दावनदेवाचार्य?" वणिक् ने कहा—'महान् योगी और परमसिद्ध सलेमाबाद पीठ के वैष्णवाचार्य श्रीवृन्दावनदेवाचार्यजी महाराज को कौन नहीं जानता?' वैष्णव नाम सुनकर तो वह और आगबबूला हो गया और खांडे को संभाल कर उसके ज्येष्ठ पुत्र की ओर दौड़ा। कोई चारा न था। वणिक् ने महा-प्रभु श्रीवृन्दावनदेवाचार्यजी का ध्यान किया और उनके द्वारा प्रदत्त मन्त्र को जपने लगा। तत्काल उसे ऐसा भान हुआ कि गुरुवर ने सुदर्शन चक्रधारी वृन्दावनविहारी से आर्तनाद करने का निर्देश दिया है। वणिक् ने वैसा ही किया और सबके देखते-देखते सर्वसहारीनाथ का हाथ जड़वत् रह गया, उसके शरीर के स्नायु कड़े पड़ने लगे। भयंकर पीड़ा से वह आर्तनाद करने लगा। उसकी मुद्रा भयंकर होती जा रही थी जिससे सब थर-थर कांप रहे थे। इस संकट की वेला में वणिक् ने पुनः गुरुदेव का स्मरण किया। कहा जाता है कि उसके उद्धार के निमित्त वृन्दावनविहारी अवतारी आचार्य श्रीवृन्दावनदेवाचार्यजी वहां तत्क्षण पहुँच गये और उन्होंने वणिक् के साथ सर्वसंहारीनाथ को वैष्णवी दीक्षा देकर उसका उद्धार किया।

संगीत के द्वारा श्रीवृन्दावनदेवाचार्यजी को मूर्च्छा, अपस्मार, कंप, मानसिक विक्षेप आदि व्याधिओं को तत्क्षण दूर करने की भारी प्रसिद्धि

है। श्रीवृन्दावनदेवाचार्यजी बड़े चमत्कारी आचार्य थे। इनके सम्बन्ध में कृष्णगढ़ के महाराज श्रीसांवतसिंहजी (श्रीनागरीदासजी) की बहिन राजकुमारी श्रीसुन्दरकुंवरि ने एक बड़ी चमत्कारपूर्ण घटना का उल्लेख किया है, जिसका सारांश नीचे दिया जा रहा है—

एक बार श्रीवृन्दावनदेवाचार्यजी अनेक वैष्णव सन्त-महात्माओं और सद्गृहस्थों के साथ तीर्थयात्रा पर गये। बहुत से तीर्थों में भ्रमण करती हुई यात्रा पंजाब के एक गांव में पहुँची। वहाँ आते-आते सूर्य-नारायण ढल चुके थे और यात्रा ने गाँव के पास ही एक बाग में पड़ाव डाल दिया। बाग बहुत विस्तृत और पुराना था। चारों ओर ऊँची-ऊँची प्राचीर थी और स्थान-स्थान पर बुर्ज बने हुए थे। सब यात्रियों ने सायंकालीन विधि-विधान से निवृत्त होकर विश्राम करने के लिए आसन लगा लिए। श्रीसर्वेश्वर प्रभु की सन्ध्याकालीन सेवा भी सम्पन्न हो चुकी थी और आचार्यश्री भी अपने पट-मण्डप में विश्राम कर रहे थे। अचानक देखते क्या हैं कि पास के बुर्ज से बड़े जोर की चीखने, चिल्लाने और कहराने की दर्दभरी आवाज आने लगी। कुछ वैष्णव उठकर उधर दौड़े। काफी खोजबीन की, किन्तु वहाँ कोई व्यक्ति दिखाई न दिया। हताश होकर फिर सब व्यक्ति अपने आसनों पर आकर बैठ गये। रात के सन्नाटे में कराह और क्रन्दन की ध्वनि फिर मुखर होने लगी। कुछ महानुभाव फिर उठे और सूक्ष्म दृष्टि से उस बुर्ज का निरीक्षण करने लगे। वहाँ कोई था ही नहीं जो दिखाई पड़ता। बुर्ज एकदम सूना और खाली था। अचानक किसी वैष्णव की दृष्टि दीवाल में ठुकी एक कील पर पड़ी। उसे लगा, जैसे आवाज इसी कील से आ रही है। कौतूहल-वश वैष्णव ने कील को काफी कोशिश करके उखाड़ डाला। कील के उखड़ते ही कराह और क्रन्दन समाप्त हो गया। वैष्णवों ने सन्तोष की सांस ली और निश्चिन्त होकर फिर अपने आसनों पर आकर लेट गये। पर इस बार दूसरी समस्या सामने आयी। एक छाया, कभी लुकती, कभी प्रकट होती, महात्माओं के आसनों के आस-पास चक्कर मारने लगी। कभी तो वह भैंसे के रूप में दौड़ लगाती दिखाई पड़ती और कभी सफेद बुर्राट कपड़े पहनकर इधर-उधर टहलती नजर आती। वैष्णव समाज बड़ा परेशान हो गया। दिनभर की यात्रा के उपरान्त हारा-थका तो वैसे ही था वह, इस पर अब एक क्षण के लिए पलक झँपाने का मौका भी नहीं मिल रहा था।

अन्त में ऊब कर उन्होंने आचार्यश्री के पास जाकर समस्त वृत्तान्त कह सुनाया। आपश्री उनके साथ शिविर से बाहर आये और छाया को अपना कमाल करते हुए देखा। प्रतिपल परिवर्तनशील और भयोत्पादक उस भूत बाधा को पहिचान कर आचार्यचरण ने थोड़ा-सा जल अभिमन्त्रित करके उधर फेंक दिया, जिधर वह छाया अदृश्य हुई थी। आपने सभी वैष्णवों को सान्त्वना देकर निर्भय किया और उन्हें आराम करने का आदेश दिया। आप स्वयं भी अपने विश्राम स्थल पर पधारे और पुनः शयन करने का उपक्रम करने लगे। तभी एक प्रेत मनुष्य का शरीर धारण करके आपके सामने प्रकट हुआ और शिष्टाचार-पूर्वक दण्डवत्-प्रणाम करने के उपरान्त बोला—'हे करुणासागर'! मैं इस बाग का चौकीदार था। अकाल मृत्यु होने के कारण मेरी सद्गति नहीं हो पाई और मैं भूत बनकर यहाँ बाग में ही रहने लगा। अपनी प्रकृति के अनुसार बाग में आने वाले व्यक्तियों को मैं अनेक प्रकार से परेशान करने लगा। मेरे इस उत्पात से मुक्ति पाने के लिए कुछ लोग एक दिन किसी मन्त्र-प्रयोक्ता (स्याने) को यहाँ लिवा लाये। उसने मुझे गिरफ्त में लेकर और मन्त्रित शलाका मेरे शरीर में ठोंक कर मुझे क्रियाहीन कर दिया। तब से मैं इसी प्रकार निरन्तर विलाप और प्रलाप करता रहा हूँ। आज आपके एक वैष्णव ने उस कील को उखाड़ कर मुझे मुक्त किया है और आपने जल छिड़क कर मुझे अपनी व्यथा आपसे कहने के लिए विवश किया है। आपके दर्शनों से मेरी अन्तरात्मा आज पहली बार आनन्दित, उल्लसित और पुलकित हुई है। मेरा आपसे करबद्ध यही निवेदन है कि आप मुझे शरण में ले लें। मैं अत्यन्त सौम्य और सुशील वैष्णव की तरह आपकी और आपके अनुगतों की टहल-चाकरी करता रहूँगा।

आचार्यश्री को उस पर दया आ गई। उन्होंने उसकी प्रार्थना स्वीकार कर ली तथा सभी वैष्णवों को भी अवगत करा दिया कि यह भूत जमात की सेवा करने के लिए इस यात्रा में हमारे साथ ही रहेगा। किसी भी व्यक्ति को इससे डरने की जरा भी जरूरत नहीं।

शेष यात्रा में भूत वैष्णवों की सेवा करता हुआ आचार्य-चरण के साथ ही रहा। सामान उठाना, भूमि का परिष्कार करना, डेरे-तम्बू लगाना आदि कार्यों को वह अदृश्य होकर ही अतिशीघ्र कर डालता।

अन्त में यात्रा की समाप्ति पर आचार्यपाद सलेमाबाद पधारे। यहाँ आकर आपने उस भूत की सेवा और आनुगत्य से प्रसन्न होकर उसकी मुक्ति के लिए छोटा सा अनुष्ठान करके उसे इस निकृष्ट योनि से मुक्त किया।

श्रीवृन्दावनदेवाचार्यजी स्वयं तो चमत्कारी महानुभाव थे ही, आपकी चरण-पादुकाएँ भी आश्चर्यशक्ति-सम्पन्न हैं। वे आज भी आचार्यपीठ में विराजमान हैं। जब किसी व्यक्ति को कोई ऐसा असाध्य ज्वर आता है जो दवाओं से ठीक न होता हो, तो उसका उपचार इन चरण-पादुकाओं के रजकणों के स्पर्श से सहज ही हो जाता है। उनका कवि रूप तो सर्वथा आकर्षक, परम पुनीत, रससिक्त और प्रमाभक्ति से ओत-प्रोत है। उन्होंने श्रीश्यामाश्याम की व्रजलीला और निकुञ्जलीला दोनों का समावेश अपने काव्य में किया है। उनकी "गीतामृत गंगा" गीत छन्दों का मुक्तक काव्य है जिसमें राधाजी के स्वकीया भाव पर विशेष बल दिया गया है। सुमधुर व्रजभाषा में इसकी रचना हुई है जिसमें लोक क्तियों, मुहावरों अनुप्रास, श्लेष, उपमा, रूपकों के यथावसर प्रयोग से इसका सौन्दर्य निखर आया है। एक पद—

नेह निगोड़े कौ पैंड़ौ हि न्यारौ।
जो कोइ होय कैं आँधौ चलं सु, लहै प्रिय वस्तु चहुँधा उज्यारौ॥
सो तो इतै उत भूल्यौ फिरै, न लहै कछू जो कोउ होय अंख्यारौ।
'वृन्दावन' सोइ याकौ पथिक है, जापै कृपा करै कान्हर कारौ॥

—डॉ० श्रीनारायणदत्त शर्मा
एम० ए०, पी-एच० डी०

अनन्त श्रीविभूषित जगद्गुरु श्रीनिम्बार्काचार्यपीठाधीश्वर

श्रीवृन्दावनदेवाचार्यजी महाराज

अनन्त श्रीविभूषित जगद्गुरु निम्बार्काचार्यपीठाधीश्वर श्रीवृन्दावनदेवाचार्यजी महाराज श्रीनिम्बार्क सम्प्रदाय के परम प्रतापी आचार्य हो गये हैं। आचार्यपीठ सलेमाबाद (अजमेर), जयपुर, जोधपुर, उदयपुर, बीकानेर एवं किशनगढ़ आदि राज्यों की तवारिखों में सं० १७३५ से सं० १७९७ तक आपके नामों का उल्लेख मिलता है जिससे ज्ञात होता है कि आपका जन्म संभवत: सं० १७०० के आस-पास हुआ होगा। सं० १७५४ में आप आचार्यपीठासीन हुए थे।

आपके अमित तेज से प्रभावित होकर जयपुर, जोधपुर, उदयपुर, किशनगढ़ आदि राज्यों के तत्कालीन नरेशों ने आपका आनुगत्य स्वीकार कर लिया था। कई उच्चकोटि के विद्वान् एवं कवि भी आपके शिष्य हो गये थे जिनमें पं० श्रीजयरामशेष, श्रीव्रजानन्दजी, श्रीघनानन्दजी, श्रीनागरीदासजी आदि का नाम विशेष उल्लेखनीय है। पं० श्रीजयरामशेषजी के पाण्डित्य से जयपुर के महाराजा श्रीजयसिंहजी द्वितीय तो बहुत प्रभावित थे। श्रीघनानन्दजी ने भी साम्प्रदायिक सिद्धान्त एवं उपासना पद्धति का पूर्ण परिचय इन्हीं से प्राप्त किया था। इन्होंने अपने गुरुदेव श्रीवृन्दावनदेवाचार्यजी के स्वरूप का वर्णन करते हुए लिखा है—

श्रीवृन्दावनदेवाय गुरवे परमात्मने। मनोमंजरिरूपाय युग्म-संगानुचारिणे ॥
भजेऽहं वनाधीशदेवं महान्तं महासौम्यरूपं जनानां सुशान्तम्।
सदा प्रेममत्तं महाप्रेमगम्यं मुखे राधिकाकृष्णलीला–सुरम्यम् ॥

इसी प्रकार महाराजा श्रीजयसिंहजी ने भी आपके चरणों में जो श्रद्धाञ्जलि समर्पित की है उससे आपश्री की विद्वता, शास्त्रार्थकुशलता, आराध्ययुगल की सेवा-परायणता, दयालुता आदि विभिन्न गुणों का सुन्दर परिचय मिलता है—

वादिनागकुले सिंहं भाष्याविरोधकारिणम्।
श्रीमन्नारायणं साक्षाद्वृन्दावनगुरुं भजे।

सर्वाचार्य्यमहार्य्यं वै महाप्रेमप्रवर्षिणम् ।
श्रीमन्नारायणं साक्षात् वृन्दावनगुरुं भजे ॥
भक्तपालं दयालुं च देवेशं रसिकेश्वरम् ।
श्रीमन्नारायणं साक्षाद्वृन्दावनगुरुं भजे ॥
श्रीराधाकृष्णरहस्यज्ञं युग्यसेवापरायणम् ।
श्रीमन्नारायणं साक्षाद्वृन्दावनगुरुं भजे ॥*

निम्बार्काचार्यपीठ, निम्बार्कतीर्थ (सलेमाबाद) के अत्यन्त सन्निकट महाराजा किशनसिंह द्वारा संस्थापित 'किशनगढ़' की राजधानी 'रूपनगर' थी। वहाँ के तत्कालीन राजा, राजमहिलायें ही नहीं अपितु सारा राज-परिकर ही आपका शिष्य हो गया था। राजा श्रीराजसिंहजी, राज-महिषी बांकावतीजी, राजकुमार श्रीसांवतसिंहजी (उपनाम नागरीदास), राजकुमारी सुन्दरकुँवरि एवं दास-दासियाँ भी आपकी कृपा एवं प्रेरणा से कवित्व शक्ति सम्पन्न हो काव्य-साधना में लग गयी थी। बनीठनी आदि इसी कोटि की महिलायें हैं। सचमुच, ऐसा उदाहरण हिन्दी साहित्य के इतिहास में अनुपम है।

राजकुमारी सुन्दरकुँवरिजी के ये उद्‌गार दर्शनीय हैं—

भक्ति मुक्ति ठाम श्रीपरशुरामदेव जू की गादी, है सलीमाबाद तहाँ पाप काँपही।
कोटि-कोटि जन्म सुकृत उदय तातैं, पावैं महाभागीजन सेवत सजापही॥
जहाँ कलिकाल के अँधियारे के तिमिरहर, वृन्दावनदेवजू प्रकट प्रभु आपही।
दीन के दयाल मोसी पतित निहाल कीनी, लीनी अपनाय अब बन्दौं यहि छापही॥

जयपुर के प्रसिद्ध कवि मंडन ने आपके अद्‌भुत तेज का वर्णन करते हुए लिखा है—

भये नारायणदेव कें श्रीवृन्दावनदेव। तिनके श्रीजयसाह ने करी चरण की सेव॥
श्रीवृन्दावनदेव को देत देव ऋषि दाद। रघुकुल श्रीजयसाह सों किय तप बलको बाद॥

किशनगढ़ के चित्रकोष में उपलब्ध चित्र सं० १४८ के पृष्ठभाग पर लिखित यह छप्पय भी आपकी कवित्व शक्ति, विद्वत्ता, धर्मपरायणता आदि का गान कर रहा है—

दिनकर लौं जगमर प्रताप जस जक्त अखंडित।
रसभाषा कविराज महा दिग्विजयी पंडित॥

---

* श्रीजयसिंह महाराज विरचित 'महागुह्यस्तव' श्लोक सं० १, २, ३, ५

अति निवह्यो ऐश्वर्य भूप भये आज्ञाकारी।
अन्त समय लौं परम धर्म मरजादा पाली ।।
श्रीनिम्बादित्य पद्धति बहे हरिव्यासदेव गादी स्थिति ।
श्रीवृन्दावनदेव महान्त से दिग्गज भये न होंहि छिति ।।

रचनायें—आचार्यश्री के संस्कृत एवं व्रजभाषा—दोनों ही भाषाओं में ग्रन्थ उपलब्ध हो रहे हैं। 'भक्ति सिद्धान्त कौमुदी'※ में भक्ति के स्वरूप का सुन्दर विवेचन है। समयानुरूप नवीन मतों के खण्डन के लिए इन्होंने ब्रह्मसूत्रों पर एक भाष्य★ भी लिखा था, पर अभी तक उपलब्ध नहीं हो पाया है। सम्भवत: प्रयास करने पर वह प्राप्त हो जाय। इनके अतिरिक्त व्रजभाषा में 'गीतामृतगंगा', 'दीक्षामंगल' और 'युगल परिवार चन्द्रिका' उपलब्ध है। 'गीतामृतगंगा' आपकी सर्वोत्कृष्ट रचना है।

गीतामृत गंगा—

'वृन्दावनहिमगिरि' से प्रवाहित इस 'गीतामृतगंगा' की रस-धारा में अवगाहनार्थ आचार्यश्री ने भक्तों की सुविधा के लिए इसमें चौदह घाटों का निर्माण कर दिया है। आमन्त्रण देते हुए कहते हैं—

वृन्दाबन गिरि तैं चली रस की उठत तरंग।
करहु स्नान नित भक्त मम इहिं गीतामृत गंग ।।

केवल भक्तों को ही नहीं, उदार आचार्यश्री विषयीजनों को भी इसका सेवन करने के लिए परामर्श देते हैं—

बक विषयीजन परस इहि वेउ विमल ह्वै जाउ।
जानि अजानि लगैं जु अय पारस करैं प्रभाउ ।।

इस रस-गंगा की पहली धारा ही कितनी सरस, सुखद एवं मनोहर है जिसके संस्पर्श मात्र से नित नव दूलह-दुलहिन प्रियालाल की मधुर झाँकी अन्तस्तल को पुलकित कर देती है—

मुरली मधुर बजाइ कैं जिन मोही ब्रजबाल।
सोई नित प्रति गाइये दिन दूलह गोपाल ।।

※ इसकी पूर्ति इन्होंने 'रसषर्डाषिचन्द्र' सं० १७९६ में की थी। ओरियन्टल मैनूस्क्रीप्टस् उज्जैन में सुरक्षित प्रति की पुष्पिका से ज्ञात।
★ 'भाष्यकारमहं भजे'—श्रीब्रजानन्दजी एवं 'वादिनागकुले सिंहं भाष्याविरोधकारिणम्—भक्त जयसिंहजी की उक्तियों से ज्ञात।

इस 'गीतामृत-रसगंगा' का प्रत्येक घाट रसिकों की रुचि के अनुरूप निर्मित है। प्रत्येक घाट पर एक विशिष्ट रस का समास्वादन होता है। किसी घाट से वात्सल्य रस की लहरें टकराती हैं तो किसी से नवयौवनमदमत्त लाल के रास-विलास से समुच्छलित मधुर रस की तरंगें—

आँगन खेलत बाल गोविन्द।
इन्द्रनीलमनि वरन श्याम तन नख शिख आनन्दकन्द ॥
विथुरि रही सिर कुटिल लटूरी मृदु मुसुकत मुखचन्द।
घुटुरुन चलत किंकिनी नूपुर बाजत मन्दहिं मन्द ॥
थिरहू रहत किलकि रींगत अति निरखि यशोमति नंद।
'वृन्दावन प्रभु' अद्भुत लीला गावत चार्यो छन्द ॥

आचार्यश्री की मधुमयी व्रजभाषा में उनके आराध्य-रसलम्पट लाल की एक और झाँकी का अवलोकन करें—

तेरी छवि देखि छके पिय नँना।
घूमत झुकत झिझकत झपकत, लाल-भये दिन रँना ॥
मानत न काहू कानि लगी टगी तोही सौं, फिरत न क्योंहू प्यारी सुख दै ना।
'वृन्दावन प्रभु' की उह सोभा निरखत, थकित ह्वै रहत दोऊ रति मैना ॥

भला, जिस महाभाग को लाल की इस छवि को निरखने का सौभाग्य मिल चुका हो, उसका मन संसार की किसी अन्य वस्तु में रम कैसे सकता है? वह तो 'बिना मोल की चेरी' हो जाता है—

इन नैंननि बेंचि दयो मन मेरो।
रूप अनूप लुभाइ लालची नैंकु करयो नहिं फेरो ॥
इहू उत जाय पाय सुख सारथी भयो जनम लौं चेरौ।
प्रीति पुरातन जानि तनक हूँ मो तन कियो न फेरौ ॥
मोहिं अकेली जानि आनि कैं मदन कियो है घेरौ।
''वृन्दावन प्रभु' विन अब निकसनकौं कहूं न पैयतु सेरौ ॥

इसीलिए आचार्यचरण लोगों को सचेत कर देते हैं कि इन निगोड़े नेहियों की होड़ा-होड़ी कोई मत करना, महा कठिन पंथ है यह—

महा कठिन इह लगनि नियोड़ी।
मत कोई नेह फन्द मैं परियो, करि नेहिन की होड़ा होड़ी ॥

चैन नैन देखै ही उपजत पलक ओट दुखपोटनि कोड़ी।
'वृन्दावन प्रभु' जात न छोड़ी अब पहिलैं जोड़त तो जोड़ी ।।

जिनको थोड़ा भी विवेक है, वे तो भूलकर भी इस मार्ग में पग न रखें। क्योंकि इसका मार्ग बड़ा बीहड़ है, कदाचित् साहस करके ऐसे लोग चल भी पड़ें, तो उन्हें उस 'वस्तु' की उपलब्धि नहीं हो सकती। इस निगोड़े पथ पर तो सफलता पूर्वक वे ही चल सकते हैं जो 'अंधे'* हों और जिन पर 'कारे कन्हैया' की कृपा हो चुकी हो—

नेह निगौड़े को पैड़ोइ न्यारो।
जो कोइ होय कैं आँधौ चलै, सुलहै प्रिय वस्तु चहूंघा उजारौ ।।
सो तो इतै उत भूल्यौ फिरै, न लहै कछु जो कोउ होइ अँख्यारौ।
'वृन्दावन' सोई याकौं पथिक है, जापै कृपा करै कान्हर कारौ ।।

ऐसे निपट प्रेम के स्वरूप का परिचय देते हुए आचार्यश्री कहते हैं कि यह प्रेम-देश निराला है। यहाँ अपने सुख की कोई कीमत नहीं। प्रियतम का सुख ही अपना सुख है। प्रियतम के सुख के लिए हमें दुःख उठाना पड़े तो भी उसके सम्मुख अपने दुःख का लेश भी प्रकाश नहीं होना चाहिए। विघ्न-बाधायें आहुति का कार्य करती हैं। नित नई उमंग, नित नया चाव। एक पलक का ओट भी कोटि-कोटि युग के सदृश प्रतीत होता है। सचमुच, नेही की गति तो कोई शिर कटा ही पा सकता है—

प्रेम कौ रूप सु इहै कहावै।
प्रीतम कौ सुख सुख अपनौं दुख, वा हित होत न नैंक लखावै ।।
गुरुजन बरजन तरजन ज्यों—ज्यों, रति नित—नित अधिकावै ।
दुरजन घर-घर करत विनिंदन, चन्दन सम सीतल सोउ भावै ।।
पलक ओट हू कोटि बरस सम, छिनक जोट सुख कोटि जनावै।
'वृन्दावन प्रभु' नेही की गति, देही त्यागि धरै सोइ पावै ।।

इस 'गीतामृत-गंगा' की कणिका-कणिका सरस है, सुखद है। प्रत्येक तरंग संगीत की गति से थिरकती है, हाव-भाव एवं गति-विलास से अपने भावों को अभिव्यक्त करने में पूर्ण समर्थ है। सहज ही इनमें

* स्वसुख की भावना से रहित अनन्य भावुक जन, जिनको उसके अतिरिक्त कुछ दीखता ही नहीं।

८० राग-रागनियों का समावेश हो गया है※ जिससे स्पष्ट हो जाता है कि आचार्यश्री स्वयं एक उच्चकोटि के संगीतज्ञ थे। इसीलिए कविवर श्रीनागरीदासजी, श्रीघनानन्दजी जैसे उच्चकोटि के कवियों की काव्य-साधना एवं संगीत आराधना आपके श्रीचरणों में ही हुई थी। दोनों ही आपके कृपापात्र थे। श्रीनिम्बार्क सम्प्रदाय के साहित्य-भण्डार को आपने और आपके शिष्यों ने इतना अधिक भर दिया कि आज भी यह गर्वोन्नत है।

इसमें कुल ५०१ पद, ८८ चौपाई, ७२ दोहे हैं। ब्रजभाषा के अतिरिक्त मैथिली, पंजाबी, बंगाली एवं राजस्थानी भाषा के पद भी सरस हैं। अलंकारों और मुहावरों का तो कहना ही क्या! आचार्यश्री के हाथों में आकर वे भी कृतकृत्य हो गये हैं। लोकोक्तियां 'लोकरंजक' के सान्निध्य से स्वयं ही चमत्कृत हो उठी हैं। अन्त में 'मधुरेण समापयेत्' के अनुरूप प्रियलाल की यह मनोहारी छवि अपने हृदय-पटल पर अंकित कर लें—

पिय प्यारे के संग हिंडोरैं झूलति मचकि-मचकि।
नील पीत पट फरहरात अरु, जात छीन कटि लचकि-लचकि॥
गावत राग मलार मधुर सुर, लेत तान अति हरषि-हरषि।
'वृन्दावन प्रभु' की छवि निरखत, गरजत घन वन वरषि-वरषि॥

—पं० गोविन्ददास 'सन्त'
निम्बार्कभूषण, धर्मशास्त्री
द्वैताद्वैत विशारद, पुराणतीर्थ

※ धनाश्री, पुरिया धनाश्री, देवगंधार, रामकली, विभास, विलावल, गौड विलावल, ललित, सारंग, गौड सारंग, खर, पंचम, मालश्री, श्री, शुभ कल्याण, श्याम कल्याण, कनडी, गौरी, चैती गौरी, त्रिवन गौरी, गौरी सोरठा, टोडी, भूपाली, अडानौं, पूरिया, पूरिया ईमन, पूरीया कान्हरौ, काफी, काफी वृन्दावनी, काफी मधुपुरी, परज, कलिंगड़ा, असावरी, विहागरो, केदारा, कान्हरो, दरबारी कान्हरो, वसन्त, गूजरी, मालकोश, भैरव, मल्हार, गौड़ मल्हार, भैरवी, ध्रूपद आदि।

श्रीगीतामृतगंगा की अकारादि क्रम से

❁ पद सूची ❁

पद	पृष्ठ सं०
अ	
अरी हांरी मोपै डारी सखी कछु मोहनी	१६
अनौखे छांडि लला लँगराई	१९
अजू तुम तो ऐसैं घिरियोगी सु	२६
अजू लेहु दह्यो जु कह्यो सु मह्यो व	२७
अजू दह्यो ऊ दियें निरो छूटि हो नांही	२७
अजू औ रजू ह्वै हैं सो ह्वै ई रहैगो	२८
अजू यैं रस में सब गोरस लाजै	२९
अजू वाल चलौ तुम्हैं कुंज दिखंये	२९
अजू जैहौं नहीं उंहि कुंज कैं नैरैं	३०
अदभुत छवि कछु गोपीनाथ	३७
अहो पांय परूं मोहिं जानदै प्यारे	४४
अहो पिय कैसैं मिलन हौं आऊं	५९
अब आये हैं पिय पांइन परन	७८
अलीन के संग ह्वै कुञ्ज गली न	८५
अब तौ सोवन देहु हाहारे	८७
अहो लाल इतै कित भूलि परे हो	९६
अहो लाल चलौ उतही अब जैये	९८
अहो भलैं अहो भलैं आपे मन भांवन	१०१
अन्त उदासी भये ब्रजवासी तो	१०५
अहो पिय महा कठिन मन कीनौं	१०६
अखै तृतीया त्रेता युगादि तिथि चन्दनी	१२४
अनन्त व्रत कियें तैं अनन्त भल पाइये	१३१
अरे प्रांन वन्धु कान हरि लीलो प्रांन	१६०
अन्तर कपटी जी हमसौं	१८०
आ	
आजु बधाई माई व्रजरायजू के धाम	२

पद	पृ० सं०
आजु अति प्रमुदित सागर नन्द	३
आंगन खेलत बाल गोविन्द	४
आजु सखि साल गिरह गोपाल को	४
आजु लाल की होत सगाई	५
आजु लाल की बरष गांठि है	६
आजु अति प्रमुदित है वृषभान	६
आजु लली की बरस गांठि हैं	७
आजु अमर पुर मंगल चार	७
आजु सखि बरष गांठ श्रीराम की	८
आजु विराजत मदन गुपाल	१३
आजु सखि वनते वनि आवत	१५
आजु भली विधि देखि कैं माई सु	१७
आजु दान दियें बिन जान न पैहौ	२३
आजु मैं देखे री राधा रवन	३४
आली वनमाली मन हरचो	३७
आली मेरो लैगयो हरि कैं प्रान	४९
आँखिन पांखि दई न दई किन	५६
आली मेरे नैंननि को तारो	५८
आँखिन क्यौंहूँ रहै हटकी री आली	५९
आजु नवल महल उज्ज्वल पर	६०
आठौं जाम बीतत हैं द्यौस ही	६०
आजु भलैं बानिक बनी पियारी	६१
आजु मिले कहुँ लालन बाल सौं	६४
आजु रास रच्यौ वृन्दावन तरनि तनैया तीर	६७
आये हैं लाडली लाल मनावन	७८
आजु सुख लूटत लाल विहारी	८६
आजु सखी सुरत जुद्ध दोऊ करत सजे	८७
आज विराजत युगल किशोर	९०
आजु वनैं वनमाली	९१
आजु तो गोपाल लाल कीनी हौं निहाल	९२
आजु श्याम कहा यहां काम तिहारौ	९३

पद	पृ० सं०
आलस भरे हैं लाल सारस से नैंन युग	९६
आजु इहिं बानिक की बलिहारी	९७
आजु विराजत हो अति नीके	९९
आजु मैं नीकें निहारी बिहारी	१०२
आ वैरी पिय प्रेम परेखो	१०५
आयो है मास सावन न आये मन भावन	१०७
आजु भलैं ही आये मन भाये प्रीतम सुजान	१०९
आयो है आयो है वसन्त	११०
आयो है बसन्त भयो मोहितौ अनन्त	१११
आंखिन लाल गुलाल न डारौ	११६
आयो-आयो आगम ऋतुराज	१२६
आई पावस ऋतु घनघौरें	१२७
आजु सखी सांवन पून्यौं सुहाई	१३१
आवति सांझ समैं सजनीन कौं	१३२
आजु चढ़े रघुवंशभान	१३२
आजु दिवाली को दिन नीकौं	१३३
आजु बडौ त्यौंहार दिवारी	१३३
आजु व्रजराज सुत धरयौ गिरिराज कर हरयौ	१३४
आयो जगत जनक चतुरानन	१५३
आयो नारद मुनिगण मंडन	१५३
आयो सुरराज गजराज चढयो महाबली	१५३
आरती करत यशोदा मैय्या	१५५
आतुर होहु न देखो पिया रे	१६१
आजु भलें वानिक वनैं विहारी	१६१
आली सांवरो सलौनौं मोंहि भावै	१६२
आजु सखी आवेंगे घनश्याम	१६३
आठौं याम बीतत द्यौंस ही गनत	१६४
आंखिन लागे किधौं तुमहीं वलि कैधौं	१६६
आवो वल्लभ जू मिलि चौपरि खेलैं	१७१
आरति गोकुल चन्द की देखो	१७४
आरति-आरति हरन मुरारा	१७४

पद	पृ० सं०
आरती करत यशोदा मैय्या	१७५
आजु बनी रमनी कमनी	१७८
आजु सखी घनश्याम	१७८
आजु दूलह वन्यौं कुंवर नन्दराय को	१८८
आजु व्याह सखि कुंजमहल में	१८९
इ—	
इहिं ठां कब दान लयो जु तिहारैं	२४
इह को हैंरी श्याम काम	३३
इहिं मग आय निकसे लाल	३८
इन सोचन लोचन होत सँवारौ	५६
इन नैंननि बेचि दयो मन मेरो	५७
इन नैंन निगोडनि गौंडि लई हौं	५७
उ	
उत डौरी लगी इत बौरी भई फिरौं	३५
उठि वैंठे प्रात मोद न समात गात	८९
उठि वैंठे दम्पति रस सम्पति भरे भोर	८९
ए	
एरी बाल तेरै विरह वेहाल	४२
एक समें नन्दलाल बाल के मिलन काज	४३
एरी निठुर बाल तोबिन लाल अनमनैं	७३
एती रिस काहे कौं करति प्यारौ तेरे आधीन	७५
ए दई भई गति कौंन	१०४
ए श्रीगंगा तरल तरंगा हरिपद रंगा	१५०
ए श्रीकालिन्दी इन्दीवर वरन	१५०
ए श्रीवानी, वेदनि बखानी, विधिशिव विधु मानी	१५१
ए प्रभु अब तौ मोहि सम्हारौ	१५६
एक समें हरि काहू प्रिया संग	१७०
एक समें वनितागन में	१७०
ऐ	
ऐरी बाल तै गोपालहिं टोनां कीनौं	४२

पद	पृ० सं०

ऐरी ग्वालि दाइल कीनैं	४२
ऐसी मन कबहूँ मति आनौं	७४
ऐसी बात काहे को कहति प्यारी परम उदार	९८

ओ

ओल्हरि आई श्याम घटा	१२७

अं

अंखियां ऊरझो सुरझैन क्यौं हौं	१६०

क

कहो गोरस को कहुँ दान भयो जु	२३
कहो जु कहौ यौंही आई हों दैंन	२४
करत कलोल तेरे लोइन लोल	४६
कठिन लगनि है नेह की वीतै सोई जानैं	५५
कन्हैया नाचैंरी, नाचैरी	६९
कब के बिहारो करत हहारी	७९
कहा करौं तू आई माई	८१
कहौ जु कहां तुम आजु की रैंनि बसे	९९
कपट की नेह जनावत प्यारे	९९
क्यौं करि दिन भरिए बिनु प्यारे	१०४
क्यौं हूँ नहीं चैंन सब लागे दुख दैंन आली	१०६
करत जल केलि गोविन्द व्रजसुन्दरी	१२४
कहा ऐसी चूक मोमें चूक से भये हौ मोसौं	१५५
करति मंगल नोराजन धरि कंचन भाजन	१७४
कृपा करिये हरिये अब कोप	१७७

का

कान्ह ठाढ़े री गाइन के गन में	१२
काके तुम को हो कस वातो	२३
काम के सुभट बाम तेरे दोऊ ईछन	४५
कान्ह सौं छांडि दै मान भटू	७६
कानन की काचो हो	७७

पद	पृ० सं०

काती सुदी एकादशी, जागे त्रिभुवन राई	१३५
कान्हवलो बल कंस बुलाये	१४६
कासौं कहौं सखि वेदनि मन की	१५६
काहे करै तू औषधि सजनी ?	१५६
काहे कौं हरत मन मेरो कारे हो कन्हैया	१५९
कि	
कियो करि मान कौहू प्रीतम सुजान सौं	१७५
क्री	
क्रीडत कालिन्दी तट गोपिन संग लीनैं	७१
कै	
कैसी रैंनि उज्यारी छाई	६५
कैसे री दोउ रास में नाचत नीके	६६
कैसो रैंनि अधियारी भारी	८४
कैसे नीके लागत नवनागर गिरिधरन	९१
कसे मिलौं सखी प्रीतम सौं	१५६
को	
कोई मैंनूं कान्ह बतावो नी सैयै ?	४९
कोप किये नित कौन बड़ाई	७५
कौ	
कौंन कैं नाहिन ह्वै है भयो	२५
कौन अविधि विधि कीनी कूरि	१०३
ख	
खयाल में लाल बुरो मति मानौं	११६
खे	
खेलत फाग सुहाग भरी	११७
खेलन लागी बिहारी सौं प्यारी	११८
खेलत फाग दोऊ रस भीनैं	११९
खेलत होरी किशोर किशोरी जू	११३
खेलत रघुवर राज समाज सौं	१२१

पद	पृ० सं०

खेलत होरी, गुरुजन चौरी, पिय संग गोरी १२२
खेलति चौपरि चन्द्रमुखी पिय १७२
खेलत चारयौं नृप दशरथ सुत १८५
खेलि तहां चौगान जान मनि चतुरंगनि लियें संग १८६

ग

गई मिलि कुञ्ज मैं पुञ्जनि-पुञ्जनि ३०
गई कर रास विलास सबै ८४
गरजत घन सघन वन छोटी १२८
गरवीली सो डोलै कहा विफरो १६६

गि

गिरिधारी को आँखि लगी अनियारी ३८

गो

गोकुल की गलिन मैं ग्वाल १२०
गोकुल चन्द हिंण्डोलें झूलत १३०
गोविन्द अच्युत राधा माधौ १३७
गोविन्दँ गोविन्दँ गोविन्दँ माधो १३९

गौ

गौरी गूजरी तैं मोह्यो गोकुल चंद री ४०
गौरी पूजन आई गौरो १२३
गौरी हे किशारी मोरो १५९
गौरी पनिहारी हरि सौं अटकी १८२

घ

घनश्याम घनश्याम प्यारा ७०

घा

घायल कीन्ही तैं कान्हर कारे श्याम ठगारे ३८

च

चली जशुमति पूजन जल वाई ३
चले गिरिराज तैं मित्र समाज मैं १३
चलै किन देखिरि गोविन्द १४

पद	पृ० सं०
चलौरो चलौ लालहि देखैं	१४
चलौ किन देखैं री गोविन्द	३६
चलौ री री चलौं खेलैं गुपाल सौं	११७
चलौरी चलौं खेलैं री व्रज	११८
चढि आयो आगम नृप अकाल वैरी पर	१२६
चलो हैं हिण्डोरैं जुरि मिलि झूलन	१२९
चम्पक को फूल न तो तन समतूल	१६५
चमू चतुरंग चमूपति ह्वै जिहिं	१७२
चा	
चांइन चांइन री गांइन दुहत गोपाल लाल	१६
चारयौं दूलह बनैं कुंवर अवधेश के	१८२
ची	
चीर हरे बलवीर जवै सव	२१
चु	
चुभी चित नैंननि नोंक तिहारो	४८
चै	
चैन सों रैंन को जागे कहूं तुम	९७
छ	
छवि देखे हरि देव की, कछु और न भावै	१७
छली उहिं छैल छबीलै कन्हाई	५४
छल बल करुंन अमचे आले	१०१
छा	
छांडि-छांडि रै लँगरवा	१८२
छै	
छैल भये नये देखन कौं	१५९
ज	
जय जय गोकुल राज कुमार	३२
जब जब लाल निहारौं तोंहि	४७
जब जब सुधि आवत उह मूरति	५८

पद	पृ० सं०
जतन-जतन क्यौं हूँ ल्याई हौं आई प्यारी	६३
जब जब सुधि आवैं वे सुख	१०७
जय जय हेऽजनि जननि यशोदे ?	१४३
जय जय जय श्रीगिरिवरधारिन्	१४३
जय जय श्रीवृषभानुसुते	१४४
जय वृषभानु सुता सखि ललिते	१४४
जय जय श्रीयमुने रविकन्ये	१४४
जय वृन्दे शन्दे सुख-कन्दे	१४५
जय जय श्रीवेङ्कटगिरिवासिन्	१४५
जय जय रघुवर करुणासागर	१४५
जय जय श्रीयमुना मनरमना रसदेवी	१५१
जय जय शंकर भव-भय मोचन	१५४
जय जय भव-भय विघ्न विदारण	१५४
जय जय वाणी ब्रह्मसुते	१५४
जय जय मीन-दीन जन रच्छन	१५९
जतन-जतन क्यौं हूँ ल्याई हौं आई	१७१
ज्यौं-ज्यौं करै प्यार पिय त्यौं-त्यौं तू रुषाई देत	८०
ज्यौं-ज्यौं पिय आवत सुनि इत नेरैं-नेरैं	१०९
जा	
जानैं जानैं हो पिय भलै	९२
जागे रैंन कहूँ चैंन दैंन लागे हमें	१००
जानैं जानैं जु जानैं हौं च्यांनै	१००
जानैं जानैं भलैं तुम राधा कौं बाधा दैं	१०३
जाकौं रमा रमण रखवारै	१५५
जागु रे मनुवां लैरे राम को नाम	१५६
जी	
जीवन मद छक्यौ छैल सल मिस गैल	३३
जै	
जैंवत नन्दकुंवर वृषभानु दुलारी	१७३

पद	पृ० सं०

जो

जो हरि नाम विसारैगो, सो जीती बाजी हारैगो १३७
जो पिय के मन में मन दीजै १५८

झू

झूंट रु सांच को लीजिये और ८०
झूलत दोऊ विहारी विहारनि १२२
झूलत फूले फूल कैं डोल १२३
झूलत दोऊ परस्पर हिय आंगन १२३

ठा

ठाढै हरि खरिक की पौरि सखि दौरि री ११
ठाढ़े दोऊ सघन कुन्ज की छैय्यां १२७

ड

डस्यौ दृग नागिनि कारी तिहारी ४३

त

तव तो मोसौं मानत ही रिस नैकु ही बात कहैं री १६
तव मूरति नैननि मांझ रही वसी ३९
तव मुख देखि-देखि हौं जीवत ४५
तनक-झनक-भनक सुनि १५८

ती

तीरथराज प्रयाग विराजत १५०

तु

तुम तो जदुवंशिन राव हुते २५
तुव नैंन कजरा रे ४३
तुम्हैं देखैं तै जानौं हौं देख्यौ ही करौं ४४
तुम बिन दृगन सुहात न और ४८
तुव सुख-सदन बदन बिनु देखें ७४
तुम तो भये हो भौंर ठौर ठौर वास लैंन ९२
तुम जिय कठिन नन्दनन्दन ९८
तुम बिन कैसें रहौं मन भावन १०७

पद | पृ० सं०

पद	पृ० सं०
तुम्हैं यौं क्यौं चहिये हौ प्रान ग्राधार	१६२
तू	
तूं सांई मैंडा है वे	१८१
ते	
तेरो ही ध्यान निरन्तर ग्रन्तर	३९
तेरी तिरछी चितौंनी किधौं बरछी है मैंन की	४५
तेरी छवि देखी छके पिय नैंना	६४
तेरो ग्रधर ग्रद्भुत सुधाधर	६४
तेरी ग्रांखिन कै सुकाजरवा झलकैं	१८१
तैं	
तैं वसि कीन्हौंरी बाल लाल गोपाल रँगीलौ	४०
तो	
तो मुख चन्द किधौं ग्ररविन्द	४४
तोरी ग्रँखियाँ मोरो ग्रंखियाँ लई चुराई	१८०
द	
द्दग वांननि मारि डारि	२१
दा	
दास प्रह्लाद हित हिरनिकश्यपु हरन	८
द्वापर जुग की ग्रादि तिथि ग्रखैतीज हरि राई	१२३
दु	
दुपहरी भई ह्वै है भूखो दई	३१
दुख तम दूरि भयो सब जीको	११०
दुग्ध फैंन सम सैंन मृदुल महा	१७०
दू	
दूध को उफान ऐसो मान कीजे भामिनी	७३
दे	
देखो रि देखो ग्रावत नन्द दुलारो	१४
देखिरी देखि छवि मदन गोपाल की	३२
देखिरी देखि कहत ही मौसौं	३७

पद	पृ० सं०
देखो मनसा की कुटिलाई	५७
देखो देखो लाल छवि लाडिली अनूप को	६२
देखो अचरज कनकलता चल	६२
देखिरी देखि प्यारी मनावत प्यारौ	७९
देखो विदेशी भये पिय प्यारे	१०४
देखौ व्रजराज सुत कियें नवसाज	११२
देखो न्हाय ठाढी रूप सिन्धु मथि काढो	१६४
देखति पिय आगम गज गामिनी	१६८
द्वै	
द्वै प्रिया एक समें इक आसन	१६९
ध	
धनि धनि आजु की घरी प्यारी	८६
धरि नेर्महिं स्वारथ साध्यो किधौं	९५
धा	
धांम ते वाम सु नांम सरोवर	१७५
धौ	
धौरी धूमरी पियरी-पियरी कारी	२२६
न	
नन्दनन्दन सखि लियैं चन्दन	१०
नन्द को आवैरी आवै	१८
नन्द को किशोर भयें मोर चितचौर	३४
नन्दलाला वंशीवाला बाला नी	३७
न्हाय आइ भई ठाडी प्यारी तिहारी	६०
ननद जिठानी कैं साथ ह्वै दीठि	६३
नख सौं लिखति भूमिका बैठी बावरी	७८
नन्दनन्दन देहि में दृढ़ भक्तिमीश भवत्पदे	१४०
ना	
नागरी नागर मण्डल रास में	६६
नाचत मोहन मण्डल महियां	६६
नाचत नागर नट वंशीवट जमुनातट	६९

पद	पृ० सं०
नांचै री दोउ बांहा जोरी	७०
नाचत अद्भुत गति भेदन गोपाललाल	७१
नागर नलिन नैंन सुनि-सुनि कलविंक वैन	८८
नि	
निकसी दधि बेंचन गोप वधू इत	२२
निपट कपट की खांनि कन्हाई	७६
नित नये नेह निवाहत मोहन	९४
निरखि देखि री कैसी इह राजत जोरी	१७८
ने	
नेह निगोड़े को पेंडो ही न्यारौ	५५
नेह को छेह न देह पियारे	९५
नेह की औषधि नेही ये जानैं	१५७
नेही सम सूर नहीं देही और देखिये	१५७
नेही सौं विदेही और जग कौंन है	१५७
प	
प्यारी तेरो वदन सुधाधर नीको	४५
प्यारी तेरे दृग जुग खंजन नन्दन	४६
प्यारी तेरे अंग अंग वानिक लखि	४६
प्यारी तोही सौं प्यारे कौं प्रेम है परम	७३
प्यारी मनाइ लई हरि प्यारैं	८१
प्यारी पिय तें मिलन काज धाई	८६
पतङ्ग को रंग है नेह तिहारौ	१०२
प्यारे विनु सुखद लगे दुख दैंन	१०३
पहलैं तो गुरुजन डर विरह झर	१०७
प्यारी के मनोरथ रथ बैठे लाल बिहारी	१२५
पवित्रा पहिरावो हरि	१३१
प्यारा लागो छोजी प्यारा थेतो म्हांनैं	१६१
प्यारी कौंन कौंन ठौर ते तू भौंरनि बिडारी है	१६७
पा	
पालनैं झूलत गोकुलचन्द	३

पद	पृ० नं०
पानी लैंन जांन न गैये	२०
पांइन परै हूँ मान सुन्यो कहूँ कान है	८०
पाव धरिये प्यारी बिहारी तिहारी	८४
पि	
पीव पीव बोलि रे पपीहा	१०८
पिय उरवशी मांझ बसी निज मूरति लखि	१५८
पिय मोहन पानिय मिल्यौ मन मिसरी-भयौ	१५९
पी	
पीठि दं नोठि तो बैठी क्यों हूँ	१७६
पौ	
पौढ़े दम्पति सुख सैंन	८८
पौढ़े योग की नींद मुरारी	१२५
प्रा	
प्रातहिं उठि लौनीं कैं लीये	४
प्रान पियारी मुख कंज लाग्यौ रूप सरोवर	६२
प्रात उठि आये अलवेले	९७
प्री	
प्रीति नई उरमांझ जगो पिय	३९
प्रीतम प्रान पियारे हौं	४८
प्रित करौ ठहराई कहूँ	९५
प्रीति की रीति निवांहनी	१०२
प्रे	
प्रेम कौ रूप सु इहै कहाव	४३
प्रेम की मरोरनि मसोसं मन मारिये	५८
प्रेम जलधि मन भयी मर जिया	१६३
ब	
बहुतै कछु गाल बजावति बाल	२६
बनी कठिन दुहुँ विधि कहा कीज	४७
बलि कीनी मनैं वलवीर जवैं	१३४

पद	पृ० सं०
बड़ी जू सुनौं समुझावति क्यों न	१६७
बी	
बीतति देखी जबै रजनी	८४
बु	
बुलायो हू काहू का क्यौं हू न बोलत	३६
बै	
बैठे कुसुम सेज पर जाई	८२
बैठि तहां मिलि गावन लागे	८२
बैठे सखि श्यामा श्याम अटारी	१२८
बैठो सोरह सिंगार कियें सुघर सोरह बरष की	१६०
भ	
भली कीनी भोर हू मो भवन पधारे मेरैं	९३
भली परिपाटी की पाटी पढ़े हौ	९६
भलैं हीं आये मन भाये लालन	९९
भलांहीं पधारया म्हाकै नन्दलाल	१०१
भले जू भले मन भांवन	१०२
भलैं ही पधारे मन भांवन	११०
भली बनि आई आजु की होरी	११५
भजेऽहं भजे केशवं कृष्ण-चन्दम्	१४२
भा	
भादौं सुदि एकादशी	१३१
भामा–धव माधव भैष्मी धव	१३९
भो	
भोजन कै लियैं संग सखांनि	३१
भोरहि तरुनि तलप उठि बैठी	८८
भोरहि मंगल आरति कीजै	८९
भोर हि सुमिरो युगल किशोर	९०
भौंन पधारे भलैं पियारे	१०९
भोर हि सुमिरौ श्रीगोविन्द	१७३
भोरहि मंगल आरति कीजै	१७३

पद	पृ० सं०

म

मह्रिजू ? ढोठहिं तो ढंग भलौ सिखायो ५
मन लै गयो सांवरो डारि ठगौरी ३५
मन मोहन मुरली तेंडी वे ३७
महा कठिन इह लगिन निगोड़ी ४७
महा कठिन इह प्रेम सगाई ५४
महा कठिन कहा कीजिये ५८
मन भावन सौं री दुराव न कीजै ७४
मन भावन आंगन पावन कीनौं ९४
मदन गोपाल तेरे हित १०६
मन भांवन आंवन की बतियां १०८
मथुरा तीन लोक ते न्यारी १५१
मनुवां मेरो हर लियो कान्ह ने १६४
मंजुल कुञ्ज लतानिकै पुञ्जतैं १६९

मा

माई मेरे मोहन गोंहन परचौ २०
माई ! मिलि जिन बिछुरौ कोइ ४९
मांन कियो हरि सौं हरि प्यारी ७२
मानिनि ? मान लै मेरो वचन ७५
मानिनि ! मान कह्यो किन ७९
मानहु की विधि अवधि करी है ८१
माई मिलि जिन विछुरो कोइ १०३

मि

मिलि सुख दै दुख दयो बिसासी १०५
मिसरी जल लौं मिलिकैं अब मोमन १७७

मु

मुकुट लकुट पर वारि हो गिरधारी ३६
मुसूकाय कैं तैं वृषभानु सुता ३८
मुसुक्यात मनैं मन सौंधैं सनैं ९३
मुरली भली बाजै सप्त सुरन सौं रलों १६२

पद	पृ० सं०

मे

मेरी सजनी हलधर वीर १६२

मैं

मैंन की ताप तैं मैंन भयो ३५
मैं पनलीनौं आजुते तुमसौं बोलौं नांही ९४

मो

मोहन जान दे यमुना पानी २०
मोहन मूरति सांवरे मोपैं ४७
मो दृग लगे नन्दलाल सों ५२
मोहि लई उहि नन्दकिशोर ५६
मोहन रास रच्यौ वंशीवट ६५
मोहि तो भरोसौ है तिहारी सब बातनि कौ १००
मोसो पतित न जग में और १५५
मोहन दे नैंन मारदे अब मैंनू १६०
मोहनी डारैं मारैं जाइ घनश्याम १६८
मो मन बस नहीं कहा करिये हौ १८०

मृ

मृगनैंनी, तुव शिर वैंनी १६५

य

यह ढुनि हायौ ढोटा री माई १८
यहाँ लौं भुराई दृग राखे ४८
यमुनातट झटपट घटई भरन लागी १६७

ये

ये दुखदाई माई बदरा गरजि-गरजि १०८
ये नैंन लालची रूप के १६१

र

रंग भरे लियें संग सखागन ११
रंग भरे लियें संग सखागन २१
रहो जु रहौ तुमसौं बोलत काहै १७९

पद	पृ० सं०
रा	
राधा राधा गावै मोहन	१९
रास मंडल रच्यौ रसिक हरि राधिका	६७
रास में नांचै मोहन लाला	६९
रास रच्यौ वृन्दावन राधा	७०
राजति है अति अद्भुत जोरी	९०
रामकृष्ण केशव हरिगावो	१३६
राधे कृष्ण राधे कृष्ण राधे गोविन्द	१३८
री	
री तैं मोहि लियो मोहन लाल	४०
ल	
लयौ चित चतुर विहारी चौरि	१७
लटकत लटकत आवै नन्द को इहिं	१८
लडवावरि लाल करी अति ही लग	७७
ला	
लालहिं देखन वाल चलीं है	१३
लाला भुलाये से डोलत काहू के	२६
लाल मेरी ईण्डुरिया दैरे	२८
लाल गुपाल सवै रस भीनौं	३०
लाल ? मनाई मनैं न गुसांईन	७६
लाल कहा तुम्हैं वानि परी	८७
लाल निहाल से डोलत हो उह	९४
लाल कबहूँ तो तनक दीजै हमैंउ दरस	१०१
लालन जू अब कौ तुम्हें धीजै	१६६
लै	
लेलै रे लैलै हरि नाम	१३७
लो	
लोइन लागनें लाल तिहारे	२०
लोचन दुख मोचन गिरिधारी	३६

पद	पृ० सं०
व	
वहु भांति के खेलन खेलत हैं	१२
वनितागन में हरि आवत हैं	१५
वर वट छतियां लगाई माई	१६
वनी कठिन कैसैं धीर धरै रे	२८
वरसानैं की जानि करी तुम	२९
वसी तुव मूरति नैंननि मेरैं	४६
वसन्त बँधावन चलो हरि को हरिन	१११
वसन्त मैं कन्त बिना को रहै री	१११
वगर वगर खेलत फिरैं हो गोकुल	११४
वरसानें की वनि-वनि बाला	१२६
वस कीनौं गुपाल तैं गूजरी गौरीं	१६५
वदी कहो किन ऐसी निठुराई	१७९
वहियां क्यौं मरोरी	१८१
व्रजरानी की गोद विनोद करै हरि	३
व्रज वनिता चित चौर री श्याम आवे	१८
वृषभानु जु दान मुकातें दयो	२४
वृषभानु जु नन्द जू न्यौंति सुनैं	५९
वा	
वांधै चिकन को पाग चिकनियां	१५
वालम की वतियां ही मीठी	७५
वांम क्यौं श्याम जु रोष तजौ करि	१७६
वि	
विलसत आजु सुरत सुख दम्पति	१७०
विधि शिव नारद पवनसुत	१८९
वे	
वे देखो आवत लाल बिहारी	१४
वेदहु ते व्रज रीति है न्यारी	१५२
वै	
वे थोरी गौरी मिलि आईं हौरो	११३
वैठे श्याम संकेत निकेत में	१६९

पद	पृ० सं०
स	
समझो कहा ग्राखिर होई गंवारि	२५
सखि ? देखिरी श्याम की सुन्दरताई	३३
सखि ग्राजु मैं देखेरी कुञ्ज विहारी	३४
सखि री ग्रावत है गोपाल ग्रँदेशो	१०४
सखि री सुनियों हरि की प्रीति	१०५
सब सुखदाई पावस रितु दामिनि	१२६
सब निशि लूटी मोहिं ग्रनारी	१६६
सखि लँगर री संग लाग्योई डोलै	१६८
सब छोडि भयो मन तोहि में लीन	१७७
सजे तन भूषन वसन पियारी	१७९
सा	
सांझ समैं पहुँचे हरि पौरी	१६
सांवरे रै पनियां लै जानैं दैं	१८१
सी	
सीसफूल शीशराजै विराजै मुख लौंनो	६१
सु	
सुनोरी ? तुम दूधपूत भरी	५
सुनों को होरी को तुम जाति चली हो	२२
सुकुमार सिवार से मर्कत तार से	६१
सुनोरी सुनौं कान दे तान सखी	८२
सू	
सूनों लगै जग नीन्द गई	१७६
सो	
सोहै सुन्दर नन्दकुमर शिर सेहरा	१८८
श	
श्याम पैं श्यामा कियो जु पयान	८५
शि	
शिशुता को जीति काम लीन्हौं	१६३

पद	पृ० सं०

श्री

श्रीपुहकर निकर तिहूँपुर तीरथन को १४९
श्रीवृन्दावन प्रभु चिदानन्दघन १५२

ह

हरि नाचत गोपवधू मधि ६५
हरि हारी हहा करौं सोइ रहो ८८
हरि कौ हरि औगुन गुन मान्यौं १३५

हा

हाय मैंनु छोडि गया महबूब ४९

हि

हिण्डौरैं झूलति मचकि-मचकि १३०

हे

हेली वह चित लैगयो चौरि ४९
हेली हरि हरि लैगयो प्रान ५०
हेली मन तो परवश ह्वै गयो कहुँ लग न तन कौ ५१
हेली हरि मुख नलिन हिले मधुकर ५४

हो

होरी मांझ भोरी, कोऊ जोरी बिन रहत है ११६
हो होरी खेलौंगी श्याम सुजान ११७
हो हो हरि भले अकेले पाये १२२

हौं

हौं तो पचिहारी विहारी, मानति न प्यारी तिहारी ७७

ह्वै

ह्वै गयो मो मन तेरीय मूरति ४७
ह्वै गयो छिन मैं तन जु परायो ५७

॥ श्रीराधासर्वेश्वरो जयति ॥

श्रीयुगलकिशोर श्यामाश्याम

※ श्रीसर्वेश्वरो जयति ※

।। श्रीभगवन्निम्बार्काचार्याय नमः ।।

अनन्त श्रीविभूषित जगद्गुरु श्रीनिम्बार्काचार्यपीठाधीश्वर
श्रीवृन्दावनदेवाचार्यजी महाराज की वाणी—

गीतामृत गङ्गा

दोहा—

मुरली मधुर बजाइ कैं, जिनमोही व्रजबाल ।
सोई नित प्रति गाइये, दिन दूलह गोपाल ।।१।।
रसो वैस: श्रुति जो कह्यो, सोई सच्चिदानन्द ।
कहियत वेद पुरान में, परं ब्रह्म गोविन्द ।।२।।
ब्रह्म प्रभा जाकी कह्यो, ज्यौं रविकिरनि लसन्त ।
श्रीराधा आह्लादिनी, शक्ति वहै इहिं कन्त ।।३।।
एकाकी न रमें दुती, चाह भई जग आदि ।
रमत जोग्य श्रीराधिका, प्रकटी शक्ति अनादि ।।४।।
मूर्तिमान श्रृङ्गार हरि, सब रस को आधार ।
रस पोषक सब शक्ति लै, व्रज में करत बिहार ।।५।।
देखउ व्रह्मानन्द तैं, रमानन्द बढि आहि ।
नारद इहिं रस ही परयौ, लागि छाडिकैं ताहि ।।६।।
रसानन्द गांधर्व सुनि, थिर चर गति हो आन ।
तिनकी का कहिये दशा, जिनकैं पूरन काम ।।७।।
मृगशिशु अहियासौं बँधे, इहिंहित तजतजुप्रान ।
समझि न यासौं जो परयौ, सो पशु तैं अज्ञान ।।७।।
कह्यो जु श्रीभागौत में, वही पुरुष पशु रूप ।
सुन्यौ ब कबहुँ कान जिहि, गोविंदगीत अनूप ।।९।।

तातैं सबरसशास्त्र मथि सुमिरि जु श्यामाश्याम ।
"गीतामृत गङ्गा" रची, करि गुरु चरन प्रणाम ।।१०।।
रसिक भक्त कलहंस जे, ते इहिं करहु बिहार ।
जिनके हरिरसजलजबिनु, नाहिन और अहार ।।११।।
वक विषयीजन परस इहि, वेउ विमल ह्वै जाउ ।
जानि अजानि लगै जु अय, पारस करै प्रभाउ ।।१२।।
प्रथमहि जन्मोत्सव कहत, जो है सबको मूल ।
जाहिं सुनत मिटि जात है, तनमन वाचिक शूल ।।१३।।
वरण्यौ है इहि घाट में, बालकुमार चरित्र ।
जाहि गाय ह्वै जायँगे, कलिजुग जीव पवित्र ।।१४।।
जनम द्यौस को आदि लै, वरष अढ़ाई अन्त ।
वाल्य अवस्था कहत हैं, जे विद्वान महन्त ।।१५।।
ता आगे कौमार है, होहिं वरष जब पांच ।
ता आगे पौगण्ड पुनि, दोय पांच लौं साच ।।१६।।
ताते लै कैशोर है, सोलह के अवसान ।
या लागैं कवि कहत हैं, कितक वरषलौं ज्वान ।।१७।।

राग धवाश्री

आजु बधाई माई ब्रजरायजू कै धाम ।
रानीजसुमति कै भयो ढोटा, सबको पूरनकाम ।
घर-घर बंदनवार पताका, गावति मंगल भाम ।
नाचत गोप करत कौतूहल, अतिप्रफुलित बलराम ।
मागधसूत भाट वंदीजन, पढ़त विरद लै (लै) नाम ।
गज-रथ-हय-मोतीमानकमनि, नंद लुटावत दाम ।
दधि घृत दूध हरद की सरिता, बहिचलि ठाम हि ठाम ।
'वृन्दावन' तन-मन-धन वारत, निरखि मनोहरश्याम ।।१८।।

राग देव गंधार

आज अति प्रमुदित सागर नन्द ।
जशुमति उदर प्राचीदिश ही तैं, उ(दैभ)दयो गोकुल चन्द ।
असुर तिमिर गये मुदित भये हैं, उडुगन ब्रज जन वृन्द ।
'वृन्दावन प्रभु' भक्त चकोरनि, मिटे सकल दुख द्वन्द ॥१९॥

चली जशुमति पूजन जल वाइ ।
भादौं सुदी एकादशी, गौपी सकल बुलाइ ।
धरो सबैं पूजा की सामा, कञ्चनथार बनाइ ।
गावति गीतचली अहिवाती, आनंद उरनसमाइ ।
बाजत ताल मृदंग नगारे, सहनाई कर नाइ ।
घर-घर गोकुल नगर रह्यो, सबकैं उच्छव छाइ ।
मोदभरी लिये (गोद) लालको, चली अंबिकाधाई ।
आनन्दभार भरैं यौं हरैं, पहुँची जमुना जाइ ।
पूजि जथाविधि वरुण देवता, दीनी विप्रनिगाइ ।
सबहिनकौं पहिरावनिकीनी, लैनिजसदनजिवांइ ।
'वृन्दावनप्रभु' झुलायपालनें, फिरिफिरलेतबलाइ ॥२०॥

राग रामकली

पालनैं झूलत गोकुल चन्द ।
हुलराबति गावति नंदरानी, झुलवत मन्द हि मन्द ।
रतन जटित कंचनमय पलना, लटकन मनि मुकतानि ।
'वृन्दावनप्रभु' चरनअंगूठा, पिवत पकरि दुहँपानि ॥२१॥

राग विभास

व्रजरानी की गोद विनोद करै हरि,
मौद भरी यौं लड़ावति मैया ।

नये गावत गीत नचावति दैचुटकी तिहिं,
जो तिहुँ लोक नचैया ।।
समात न नन्द आनन्द में देखि सुतैं,
सु मनोरथ पूरच्यो है दैया ।
कब हूँ दिन ह्वै हैं बहू मो लला सु,
'वृन्दावन' जै हैं चरावन गैया ।।२२।।

राग रामकली

आंगन खेलत बाल गोविन्द ।
इन्द्र नीलमनि वरन श्याम तन, नख शिष आनन्द कन्द ।।
विथुरि रही सिर कुटिल लटूरी, मृदु मुसुकत मुख चन्द ।
घुटुरनचलत किंकिनी नूपुर, बाजत मन्दहिमन्द ।।
थि हू रहत किलकि रींगत अति, निरखि यशोमति नन्द ।
'वृन्दावन प्रभु' अद्‌भुत लीला, गावत चारचों छन्द ।।२३।।

राग बिलावल

प्रातहिं उठि लौनीं कैं लीये, लौंद लौंदगी देत ।
जशुमति मात डरावति झूंठैं, लै लै कर में वेत ।।
धरे विविध पकवान आनि तऊ, तिनहिं न देखत खात ।
दृढ़ कर गह्यो न छोरत क्यौं हूं, निज कर अंचर मात ।।
रोवत रगरत चरन धरनि पर, हठ जु हठीलो ठानत ।
'वृन्दावन प्रभु' माखन मथि मैया, देति तबै भल मानत ।।२४।।

आजु सखि साल गिरह गोपाल की ।
आबौ सब मिलि गावौ मंगल, छवि देखो जशुमति लाल की ।।
केशरिरंग वसन नख-शिख तैं, पहिरैं भूषणअंग ।
गावत गुन गन्धर्वगुनीजन, बाजत मधुर मृदङ्ग ।।

अरु बाजे बाजत नाना विध, चारण सूत पढ़त हैं छन्द ।
'वृन्दावनप्रभु' कर न्यौछावर, देत नबौंनिधि नन्द ।।२५।।

राग ललित (अथवा) गूजरी (उपालम्भ)

महरिजू ? ढोठहिं तौ ढंग भलौ सिखायो ।
सूने सदन पैठि उखल धरि, वा ऊपर इक सखा चढ़ायो ।।
उहिं कांधै चढ़ि आप छींकेते, लीनो दह्यो उतारि ।
आप खाइ अरु सखन खवायो, दीनों चहुँधों डारि ।।
भांडे फोरि मो सुत वारे मुख, दधि माखन लपटायो ।
'वृन्दावन प्रभु' मोहिं देखि कैं, भागि वहाँ तैं आयो ।।२६।।

सुनोरी ? तुम दूधपूतभरी, अस क्यों बोलत झूंठ ।
बनाइ वनाइ जेती बातैं कहो, कहाँ मोसुतकी ऊठि ।।
इह तौ अबही चलन सीखतु है, कहौ कहा या को वित्त ।
दह्यौ माखन जो खाय तो, है कहा थोरो इत्त ।।
तातैं मेरे सुत हि आइकैं, मत दीयौ करौ दोष ।
बिगरै सौ लेजाहु यहां तैं, मतिकरी मन में रोस ।।
इकलोती को पूत मोहिं, दयो बिधाता नीठि ।
'वृन्दावनप्रभु' माता कह्यौ तिहारे, पांयपरौं न लगावौ डीठि ।२७।

आज लाल की होत सगाई ।
आवौ सबै गोपीजन मिलि कैं, गावो मङ्गलचार बधाई ।
चोटी चुपरि गुहुँ सुत तेरी, छांड़ो चंचलताई ।।
वृषभानुगोप टीको दै पठयो, सुन्दरजान कन्हाई ।
तो कों जो इहि भांति देखि हैं, करि हैं कहा बड़ाई ।।
पहरि आभूषण-वसन अमोलिक, उन कौं देहु दिखाई ।
यह सुनि नंदनंदन उठि आतुर, बैनीबैठि गुहाई ।।
'वृन्दावनप्रभु' जशुमतिमैया हंसि-हंसि लेति बलाई ।।२८।।

राग ललित (अथवा) गूजरी

आजु लाल की वरष गांठि है, घर घर मंगलचार ।
बैठे नंद आनन्द भरे वनि, दीने खोलि भंडार ।।
विप्र सूत मागध बन्दी जन, जे आये उहिं वार ।
अभर भरे ऐसे सम्पतिकरि, जाइ न दूजै द्वार ।।
द्वार द्वार बँधी वन्दन माला, ब्रजबाला करि२जु सिंगार ।
आई लै लै भेंट न्यौछावरि, भरि भरि कंचन थार ।।
पीत वसन शिखनखतैं भूषन, पहिरे नन्दकुमार ।
देवविप्र गोधन करि पूजा, रतन सिंघासन बैठे उदार ।।
विप्र सवासनि करि टीको कही, चिरंजीवरहो पुत्रतुम्हार ।
कहैं सब पूरे पुण्य यशोमति, पुत्ररतन दीनौं करतार ।।
सबनि जिबयि पहिरावनि कीन्हीं, ब्रजरानी इकसार ।।
पीरौपहरि गोदलैबैठी, बढचौमैयाकैं मोदअपार ।।
बहिन सुनन्दा करीआरती, धरि बाती घनसार ।
बाजत बाजे दधि अरु हरदी, छिरकत नाचत ग्वार ।।
निरखि गोविंदचन्द मुख सुन्दर, घर अंबर भयौ जैजैकार ।
'वृन्दावन प्रभु' उछाव इहिं करत, सकल तिनकौ संसार ।।२९।।

श्रीप्रियाजू की बधाई (राग देवगांधार)

आजु अति प्रमुदित है वृषभान ।
कुंवरि जनमसुनि भुवन चतुर्दश, बाजे हैं निशान ।।
पुर वधू नव साज साजै, करत मङ्गल गान ।
सुरवधू मिलि सुमन वरषैं, चढ़ी विविध विमान ।।
वरसानु ईश द्विज वेदिं दीनन, भरे कोटि विधान ।
नन्द जशुमति सुनि बधाइन, दये खरिक खैलान ।।
नानाविध के बजत बाजे, परी सुनत न कान ।
'वृन्दाबन' जन लली ऊपर, वारि डारत प्रान ।।३०।।

राग विभास

आजु लली की बरस गांठि हैं, बरसाने बाजत सादानें ।
दान देत वृषभान जान मणि, गुणी करत गुण गानें ।।
घर घर मोतिन चौक साथिया, धुजा पताका वंदन वार ।
रम्भा खम्भअम्भ भरि२ घरे, क ंचनघट आंवनिभरि डार ।।
नगर नगर घर घर नाना रंग, वसन अमोलिकन छाये ।
मानो मघवा असवारी त्यारी, विविध विमान बनाये ।।
रस ओंपी गोपीं घर घरते, करि करि सुघर सिंगार ।
चलीगावती मंगलसामा, भरि भरि कंचनथार ।।
पहुँची जाय सकल जब द्वारैं, तहां भई भीर अनन्त ।
भीर निवारी सबै भीतर लई, कीरतिजू कै कन्त ।।
कीरति उठि आदर करिलीनीं, बैठाईं सब जाय ।
भूषन वसन अमोल सुताको, पहिरायेजु बनाय ।।
पीरो पहरि गोद लै बैठी, भावत मोद न अंग ।
गोप सबै छिरकत दधिहरदी, नाचतबजतमृदङ्ग ।।
टीको करि सबहिंन कह्यो ऐसे, अविचल रहौ सुहाग ।
इह कन्या नंदलाल पाहुनौं, भानभूप बड़भाग ।।
कीरतिजू पहिरावनि कीन्हीं, सकलवधूनि जिवांइ ।
'वृन्दावनप्रभु' प्यारीमुख लखि, कीरत लेत बलाइ ।।३१।।

श्रीवामन बधाई राग सारंग

आजु अमर पुर मंगल चार ।
अदिति कैं प्रकटभये अरिसूदन, वामन वपु अवतार ।
द्वार द्वार दुन्दुभि धुनि गाजत, सुर वनिता सजि क ंचथार ।।
गावत गीत चली अति आतुर, जुरि मिलि कश्यप द्वार ।

भई दसौं दिश विदिशु सुनिर्मल, मिटिगयो मेदिनिभार ।।
'वृन्दावन प्रभु' को यशगावत, विधिशिव बारम्बार ।।३२।।

(श्रीरामचन्द्रजी की वर्ष गांठ) राग गौड़ सारंग

आजु सखी बरष गांठ श्रीराम की, निजजन पूरन काम की ।
घर घर मंगल चार बधाई छवि, औरैं अयोध्या धाम की ।।
घनतन पीतवसन भूषनवर, पहिरें अनुजसमेत ।
अंगभंग लावन्य ललितसखि, मन्मथ मनमथिलेत ।
गजरथ अश्वपदाति असंखित, चहुँदिसि खरे सिंगारे ।
झांझमृङ्ग करनाइमझीरी, बाजतविविधनगारे ।।
गाबतगुनीं भाट चारनगन, वरनत बिरद नये ।
देत है मौज फौज हैंगे की, किन पै जात लये ।।
करत आरती मातकौंशिल्या फिरि फिरि लेत बलाय ।
'वृन्दावन' प्रभुसहित जानकी, सिंहासन बैठाय ।।३३।।

श्रीनृसिंह बधाई राग खट

दास प्रह्लाद हित हिरनि कश्यपु हरन,
खम्भते निकसि नरसिंध गाजे ।
गिरिगये गरभ सरब रिपु वधुनि के,
असुर सिंधुरहिं जिततितते भाजे ।।
बरसैं सब सुमन मिलि सुमनयाननि चढ़े,
अमर पुर विविध वादित्र बाजे ।
'वृन्दावनप्रभु' शरण पालन-करन,
धरत बहुभांति वपु भक्त काजे ।।३४।।

दशावतार (अवतार दिवस स्मरण) बधाई

* दोहा *

कहत जन्मदिन दशनि कै हैं लीलातन और ।
नित्यधाम में नित्य सब राजैं निज निज ठौर ।।३५।।

कृष्ण बसैं गोलोक में, जो हैं स्वयं प्रकाश ।
उहि प्रकाश व्रजभूमि है, जहां करैं नित वास ।।३६।।
प्रकटि चैतसित पंचमी,१ मीन रूप भगवान ।
ल्याये हनि शंखासुरहि, वेदनि धर्म निदान ।।३७।।
भये ज्येठ सुदी द्वादशी, कूर्म रूप अवतार ।
पृथ्वी धारी पीठि पर, अरु मन्दर आधार ।।३८।।
कृष्णा नवमी चैत्र की, दिन प्रगटे वाराह ।
रसा उद्धरी पैठिकैं, दुर्घट वारि प्रवाह ।।३९।।
माधव सित चौदस धरचौ, माधव नरहरिरूप ।
आदि असुरको मारि सुत, राख्यौ भक्तनिभूप ।।४०।।
भादौ सुदि की द्वादशी, वामन वपुधरि आप ।
बलिकौ छलि आपुहि बंधे, हरे सुरनि संताप ।।४१।।
माधव की सुदि तीज कौं, भये भारगव रूप ।
दुष्ट भूप संहारि कैं, किये विप्र सब भूप ।।४२।।
शुक्ला नवमी चैत की, दशरथ के भये राम ।
दंडक बन निःकंट करि, पूरे भक्तनि काम ।।४३।।
प्रगटे भादव छट्ठ कौं, कृष्ण भ्रात बलराम ।
कढ़े देवकी गर्भ ते, संकर्षण भयो नाम ।।४४।।
भये जेठ सुदी द्वैज कौं, बुद्ध रूप गोविन्द ।
निंदा करिकैं यज्ञ की, असुर भ्रमाये मंद ।।४५।।
ह्वै है जेठ सुदी छट्ठ कौं, कल्की श्री भगवान ।
करिहैं म्लेछनिकौ निधन, कर गहि कठिनकृपान ।।४६।।
भादौं बदि की अष्टमी, अरु रोहिणि बुधवार ।
अवतारी श्रीकृष्ण निज, प्रगटे हरन भू भार ।।४७।।

।। इति श्रीकृष्ण गीतामृत गंगा प्रथम घाट ।।

---

१ चैत्र शु० ३ । २ वै० शु० १५ कल्पभेद ।

* द्वितीय घाट *

दोहा—

अब वरनौं गोविन्द जो, लीला की पौगंड ।
ब्रज देबिनि आशक्ति की, उँहि वैतैहैं मंड ।।१।।

राग पंचम

नन्दनन्दन सखि लियैं चन्दन,
खौरि ठाड़े खरिक पौरि प्रान प्यारे ।
सरद ससि वदन दिये कुन्द कोर'
करदन सकल सुख सदन पर मदन वारे ।। (टेक)
झुकि रही पाग सिर सुरंग बायैं,
भाग लसत मृदु हंसत अधिकै सुहाये ।
अरुन आयत नैंन सकल सुषमा ऐन,
नचत मनौं मैंन नटुवा नचाये ।।
गंड मंड सुमणि मकर कुण्डल झलक,
अलक की रलक लखि पलक थाकैं ।
भृकुटी कमान सम बान कुंकुम तिलक,
सोई जन जानैं हिय लागे जाकैं ।।
तार उर हार मंदार माला वनी,
कंठ कौस्तुभ मनी अधिक छाजै ।
नील गिरि शिखर ते उतरैं मनौं,
गंग द्वै करत तप तपत मनौं मध्य राजैं ।।
चरन लपटाय रहे चारु कंचन लकुट,
वरनी न जाय मन हरन शोभा ।
मनहुँ थिर ह्वै रही चपल सोदामिनी,
तासौं रही लपटि मनि नील गोभा ।।

रुक्मरुचि वसन पर रुचिर मणिमय रसन,
श्यामघन वरन तन पीत उपरैनां ।
'वृन्दावन प्रभु' की माधुरी उदधिमधि,
मीन ज्यौं लीन भये निरखि नैंना ।।२।।

राग खट्

ठाढै हरि खरिक की पौरि सखि दौरि री,
देखि नख शिख तैं अंग-अंग शोभा बनी ।
चारु मुख चन्द अरविन्द से नैंन युग हंसत,
मन्द-मन्द रद मनहुँ हीरा कनी ।।(टेक)
अलकरही छूटि सब लूटि छवि जगत की,
पुंज-पुंज गुंजत मधुप सरस सौभैं सनी ।
श्याम अभिराम तन कनक सदृश वसन,
लसत पुखराज मिलि मनहुँ मरकत मनी ।।
खौरि कुंकुम कियें रही भृकुटी छियें,
पाग पचरंग पर रतन शोभा बनी ।
खचित कुण्डल मकर करन गिरिधरन कैं,
हरन मन जलज की माल राजत घनी ।।
तनक ही सैंन मैं मैंन कोटिक भ्रमत वरनि,
सकै कौन कवि अखिल उपमा खनी ।
नित्य निरखत रहत 'श्रीवृन्दावन प्रभु' कौं,
जे लिखी विधि विश्व में आव तिनकी गनी ।।३।।

राग पंचम

रंग भरे लियें संग सखागन, गोधन संग चले नट नागर ।
मुरली मुहचंग बजावत गावत, एक तैं एक बने गुन आगर ।। (टेक)

हरैं ईं हरैं बहु हास्य करैं, गिरिराज तरैं पहुँचे गिरिधारी ।
सारिद वारिद सी वन मैं सब, फैलि गई गैय्यां न्यारी यै न्यारी ।।
जाइ उहाँ गिरि कन्दर मैं फल, पत्र प्रसूननि माल बनाई ।
'श्रीवृन्दावनप्रभु' कौं तब ही,
अब दान लीला करिवे सुधि आई ।।४।।

राग गौड़ सारंग

बहु भांति के खेलन खेलत हैं, हडडूक बड़ी झुलनी भिडिराई ।
आइ गये सुधिकौं लघु भाई कि, औचक ही कहुँते चल भाई ।। (टेक)
इक ओर भये बलराम बली इक, ओर श्रीदाम सुदाम कन्हाई ।
होड परे भरे रोष महा कहैं, जीते हैं जीते हैं नन्द दुहाई ।।
च्यारि घरी दिन जांनि गैय्यांनि, करैं इकठी मुरली जु बजाई ।
'श्रीवृन्दावन प्रभु' की सुधि आई,
सुगायें आईं अलवाई ज्यौं धाई ।।५।।

राग मालश्री

कान्ह ठाढ़े री गाइन के गन में ।
कहा कहौं अनुपम शोभा री राजत,
मानों श्यामघन शरद घनन में ।। (टेक)
वंशी बजावत गावत मधुरैं सुर सुधि,
न रही सुनि काहू तन-मन में ।
'श्रीवृन्दावन प्रभु' की छवि निरखत,
कोउ न रहत अपअपनैं पनन में ।।६।।

राग श्री

धौरी धूमरी पियरी पियरी कारी, काजरि कहि कहि टेरत । (टेक)
वरह मुकुट शिर कामरि कांधै, दक्षिण कर पीताम्बर फेरत ।।

सुन्दर नागर नट यमुना (की) तट, लियें लकुट गाइंन निवेरत ।
सुधि न रही मोतन मैं तनकी,
'श्रीवृन्दावन प्रभु' की छवि हेरत ।।७।।

राग गौड़ सारंग

चले गिरिराज तैं मित्र समाज मैं, साज सवै नटराज को कियें ।
मृदु गावत वेनु बजावत हैं, पुलकौं पशुपंछी द्रमोऊ हियें ।।
रही अनिमेष ह्वै गैयां सवै, मन मोहुन रूप अनूप पियें ।
मुख चन्द मनौं अरविन्द से नैंन, बड़े लगनैं श्रुतिमूल छियें ।।
'श्रीवृन्दावन प्रभु' देखन कौं, ऊत चाहि रही सब घोष तियें ।।८।

राग शुद्ध कल्याण

आजु विराजत मदन गुपाल ।
नटवर वेश किये मन मोहन, उर वैजन्ती माल ।।
चित्रित नाना रंग श्याम अंग, काछैं काछिनि लाल ।
ग्रथित कुसुम पल्लव जूड़ा पर, सोहत बर्हीं पिच्छ विशाल ।।
गावत आवत गाइन पाछैं, वेनु बजावत परम रसाल ।
'श्रीवृन्दावनप्रभु' कौं देखन उठि, धाईं तजि गृह कारज बाल ।।९

लालहिं देखन वाल चलीं है ।
गृह गृह तैं सजि भूषण अम्बर,
मूल तैं काम लता सी फली हैं ।।
प्यास्यो ज्यौं नीर पै तीर ज्यौं टूटत,
यौं अति आतुर जाय मिली हैं ।
'श्रीवृन्दावनप्रभु' कौं अवलोकत,
मानहु मैंन की सैंन फली हैं ।।१०।।

राग देव गांधार

चलै किन देखिरि गोविन्द ।
लालपाग की झलक अलक पर, अलक मनो भव फन्द ।।
भौंह कुटिल दृग मंजु कंज से, निरखि मिटै दुख द्वन्द ।।
पीत झगा झीने मैं झझकत, श्याम अंग छबि अनुपम चन्द ।
'श्रीवृन्दावनप्रभु' सो सुत जिन, कै धन्य यशोमति नन्द ।।११।।

राग पञ्चम

चलौरी चलौ लालहि देखैं ।
कोटि काम अभिराम श्याम तन,
निरखि निरखि नैंननि फल लेखैं ।।

मदगयन्द गति आवत ह्वै हैं, वंशी अधर धरैं ।
नित नव रंगी ललित त्रिभंगी, नटवर वेश करैं ।

हम तन हेरि फेरि नीकैं सुर, नई नइ तान सुनें है ।
'श्रीवृन्दावनप्रभु' नेह को नातो, नैन की सैंन जनैं हैं ।।१२।।

वे देखो आवत लाल बिहारी, संग सुदेश सुवेश सखारी ।
सुनिये मुरली जु रली अधरामृत, औ उठी गोधन धूरि घटा री ।
ठौंर हि ठौर जु रौर परी सब, दौर चली पुर की वनिता री ।
रूप उजागर है नट नागर, सागर री गुन को गिरिधारी ।।
विमान चढ़ी गुन गान करैं, हरषें बरषैं सुमनौं सुर नारी ।
'श्रीवृन्दावनप्रभु' रूप निहारी कैं,
दीठि कहूँ न टरैं पुनि टारी ।।१३।।

राग कनडी

देखो रि देखौ आवत नन्द दुलारो ।
चाइन चाइन गाइन के संग, गोप वधूजन नैंननि तारो ।।

मुरली सुर लीन प्रवीन महा सु,
हरचौ चित गौरी वजाय हमारौ ।
'श्रीवृन्दावन प्रभु' अंग-अंग छवि,
निरखि-निरखि तन-मन-धन वारो ।।१४।।

राग पञ्चम

आजु सखी वनते वनि आवत, गावत श्याम सखागन में ।
गति गंजत मत्त गयन्द हु की, लखि कौंन रहै अपने पन में ।।
पगियां शिरलाल रही धुकि, भाल सुपीत झगा झलकै तन में ।
उपमा उमजी मन मैं इक यौं, सुमनौं चपला लपटी घन में ।।
घुघरारी लटैं लटकैं मुख ऊपर, रंजित है रज गोघन में ।
चित्र लिखी सी रहो हौं निहारि,
'श्रीवृन्दावन प्रभु' वृन्दावन में ।।१५।।

वनिता गन में हरि आवत हैं ।
मुरली मुहचंग वजावत गावत, तान तरंग उडावत हैं ।।
काहु कौं सैंन कैं वैंन कै, काहू को मैंन तरंग बढ़ावत हैं ।
'श्रीवृन्दावन प्रभु' आननचन्द,
विलोकि न मोद में मावत है ।।१६।।

राग गौरी

बांधै चिकन की पाग चिकनियां ।
चाइन-चाइन डौलै गांयन दुहतरी दोहनी लियें,
कर मोहनी डारत सोहनी सूरत ख़ासे को तनियां ।।
पीत पिछोरी कांधें सेली कुटिल,
कनौती फुलेल सों सनियां ।
'वृन्दावन प्रभु' की छवि देखि थकित,
भई हौं भरन गई ही पनियां ।।१७।।

सांझ समैं पहुँचे हरि पौरी ।
हरैं ईं हरैं पग पैंड धरैं वन, माल गरैं करैं चन्दन खोरी ।।
नन्दजु नन्दन लाय लियो हिय, आरति साजि यशोमति दौरी ।
न्यौछावरि आरति कै मुख चूं वि सु, लै अँचरा कर झारी रजौरी ।
भीतर जाय बैठाय तवै कह्यो, गोपिन मंगल गीत कहौरी ।
'श्रीवृन्दावन प्रभु' छप्पन भोग,
जिवाये दै दै अपनैं कर कौरी ।।१८।।

राग कल्यान

चांइन चांइन री गांइन दुहत गोपाल लाल ।
कनन कटक मकरा कृति कुण्डल, गरें धरें मुक्त माल ।।
सोहनी दोहनी करनो ईं कांधैं, कुंकुम विन्दु विराजत भाल ।
'श्रीवृन्दावनप्रभु' की छवि देखन,
गृह–गृह तैं दौरी व्रजवाल ।।१९।।

राग टोडी जौनपुरी

अरी हांरी मोपै डारी सखी कछु मोहनी,
उनि सांवरि सूरति सोहनी ।
धेनु दुहांव न गायरी खरिक में, जब लइ करते दोहनी ।।
वंकविलोकनि देखि कैं वा की, मदन वान नहीं कोहनी ।
'श्रीवृन्दावन प्रभु' पहलैं मंत्र पढि, मोसौं करी कीधौं वोंहनी ।।२०

राग धना श्री

तव तो मोसौं मानत ही रिस नैकु ही बात कहैं री ।
अब तो नेह बढ्यो दिन दिन नव,
खिरक में जाति दुहावन कै मिस ।।
घर वन मन लागत नहिं तेरो,

चकित भई चाहति अब चहुँ दिश ।
नये नेह की टैव यहै है पिय,
विन और सवै लागत बिश ।।
तव लाल हि लखि डरि भाजत ही,
दुरी रहत ही भौंन द्यौस निश ।
अब 'वृन्दावन चन्द' विलोकत,
मिटतन नैंन चकोरन की तिस ।।२१।।

राग षट् वा ललित

आजु भली विधि देखि कैं माई सु, आई गौवर्द्धन नाथ हि हौरी ।
एक ही अंग निहारि जो नारि रहै, अपनैं पन ताहि वदौंरी ।।
भाग बड़ो वनिता सुख विलसत, ल्याये जिनहीं चढि चौंरी ।
हम कुल कांनि मांनि निशि, वासर भई चंपक की भौंरी ।।
गई करन वश भई विवश, अब दई करी कछु औरी ।
'वृन्दावन प्रभु' पीछैं विकल,
भई फिरत आपकी गौंरी ।।२२।।

राग परज

लयौ चित चतुर विहारी चौरि ।
लाल पाग रही लटकि भाल पर, ठाढो ब्रज की खौरि ।।
एक दिना सखि रोकि रह्यो मग, गयो मेरी बहियां मरोरि ।
वश कीनी उन रसिक आपनैं, बांधि प्रेम की डौरि ।।
ता दिन तैं मैं सुजन बन्धु, पति सबसौं डारी तोरि ।
'वृन्दावन प्रभु' हाथ विकानी,
कहो कोउ बात करोरि ।।२३।।

राग ललित

छवि देखे हरि देव की, कछु और न भावै ।
निशिदिन देख्यो कीजिये, मन मैं यहि आवै ।।

अंग अंग शोभा समूह, कवि उपमा पावै ।
नैंन सैंन रस अंत मैंन, मनहुँ ललचावै ।।
वाम पांनि पर गिरि धरैं, हरैं हरैं मुसुकावै ।
गोपीजन मन मदन की, कल्लोल उठावै ।।
इन्द्र कोप हित करि गन्यो, सब प्रिया मिलावै ।
'वृन्दावन प्रभु' वाट घाट, देखन जिन्हें धावै ।।२४।।

राग गौरी

ब्रज बनिता चित चौर री श्याम आवै ।
लटकि लटकि चलै लाडिलौ, मुरली तान सुनावै ।।
तन सुधि तनक रहें नहींरी, तापर धुरपद गावै ।
घन तन पीत वसन सौदामिनी, आनन्द रस बरषावै ।।
'वृन्दावन प्रभु' माधुरी मूरति, निरखत कौन अघावै ।।२५।।

राग कनडी

नन्द को आवैरी आवै, बनतैं बन्यौ गोधन में ।
फूलन मुकुट और फूलनिके आभरन, गौरी राग गावैरी गावै ।।
अंग अंग शोभा की शोभा उठत, मानौं मदन लजावै री ।
'श्रीवृन्दावन प्रभु' की शोभा, निरखत मन न अघावै री ।।२६

लटकत लटकत आवै नन्द को ईहिं, मग मुरली की टेर सुनावै ।
चटक मटक कियें रहत सखी री, चितै चितै चितहि चुरावै ।।
श्रवन सुनत ह्वै जात वावरी, कनरी राग जमावै ।
'वृन्दावन प्रभु' वसि कर लीनी, और न कछू सुहावै ।।२७।।

यह टुनि हायौ ढोटा री माई ।
बड़े बड़े नैंन मैंन सरमानों, कर कंचन को सीटा री ।।
जा दिन तैं निरखी छवि छाकी, सहि न सकत पल ओटा री ।
'श्रीवृन्दावन प्रभु' मोहि लई,
मन परचौ प्रेम के झोटा री ।।२८।।

राधा राधा गावै मोहन, मुरली मधुर बजावै ।
बांकी पाग भौंह अति बांकी, बांके नैंन नचावै ।।
पनघट रहत रैन दिन ठाढौ, गज गति लटकि लखावै ।
युवतिन आवत देखि सखिन कौं, करि-करि सैंन बतावै ।।
कंदुक मिस कंचुकि टक टोरत, नैंकु न ढीठ सकाणै ।
'वृन्दावन प्रभु' ललित त्रिभंगी, लै लै तान रिझावै ।।२९।।

राग भूपाली

अनौखे छांडि लला लंगराई ।
बहुत अनीति सही मैं तेरी, खाति हौं वाप दुहाई ।।
चौरयो चीर कंचुकी फारी, यह सीखे चतुराई ।
जाहु-जाहु जैहो नहिं नीकैं, राखत नैंकु बड़ाई ।।
जित-तित नगर-नगर घर-घर में, इह नित कीरति गाई ।
निपज्यो निपुन नंदको नंदन, नारिन वचत पराई ।।
यह तुम लाड करौ उनहीसौं, जे तिहारे मन भाई ।
'वृन्दावनप्रभु' तुमहि पत्यातन, हौं इनि वातनि धाई ।।३०।।

राग गौरी

वर वट छतियाँ लगाई माई, मोहिं उनि लंगर कुंवर कन्हाई ।
बहियां पकरि मोहि लैगयो कहियां,
नहियां करन कीनी मन भाई ।।
क्यौं करि कितहुँ निकसिये सजनी,
जित देखौं तितहि मडराई ।
'वृन्दावन प्रभु' अति ही अचगरौ,
तजि हौं नगरौ इन बातनि धाई ।।३१।।

राग अडानौं

माई मेरे मोहन गोंहन परचौ,
कहा जानौं उन कहा धौकरचौ ।
बन वीथन घर घाट वाद मैं,
जित देखौं तित रहत अरचौ ।
कहा कहौं अंग अंग माधुरी,
मृदु मुसकनि मेरौ मन जु हरचौ ।
'वृन्दावन प्रभु' नन्ददुलारो,
नख शिख रूप भरयौ ।।३२।।

राग पूरिया ईमन

पानी लैंन जांन न गैये, या लंगर नन्दलाल पै री ।
साथ होत गृह द्वार हितैं, उठि गुरुजन ते जु सकैये ।।
नैंन सैंन मिलवत हँसि हेरत, टेरत बातन नैंकु चितैये ।
'वृन्दावन प्रभु' मोहनी मूरति, देखैं होत मन हौसनि अैये ।।३३

राग कनडी

मोहन जान दे यमुना पानी ।
मोहि लई तेरी इन चितवनि, सूधैं देखि गुमानी ।।
लाज भरी डर बदन माधुरी, निरखि न कबहुँ अघानी ।
कहिहैं जाय परोसनि घरतो, दहि हैं नदँद जिठानी ।।
सुनि हैं नाह अनाहक लरि हैं, सासु महा अनखानी ।
'श्रीवृन्दावन प्रभु' प्रीति निगोडी, रहत न क्यौंहूँ छानी ।।३४।।

लोइन लागनें लाल तिहारे, देखत ही हरैं नैंन हमारे ।
खंजन मीन कुरंग सरोरुह, जिनकी कटाछ पैं वारे ।।
व्रज युवती जन मन हरवे को, विधि मांनों टोना संवारे ।
'वृन्दावन प्रभु' मोल लई, बिन दामनि कान्हर कारे ।।३५।।

राग गौरी

दृग वांननि मारि डारि, अलबेले कुंजविहारी ।
घायल भई घूमत हौं डोलौं, दरशन बिन गिरिधारी ।।
मन उरझो सुरझैं नहीं क्यौंहूँ, अलकैं घूंघर वारी ।
'वृन्दावन प्रभु' सूरति ऊपर, बेर बेर बलिहारी ।।३६।।

राग ललित

चीर हरे बलवीर जवै सब, नीर मैं ठाढी पुकारति नारी ।
घर के सुनि हैं कहि हैं जु कहा हम, ठाढ़ी सबैं जल बीच उधारी ।।
अम्बर देहु हमारे लला हम, खाति हहा अब दासी तिहारी ।
कदम्ब चढ़े सब अम्बर लै हरि, बांधि दये तब डारिन डोरी ।।
सँवार की आई हैं होति अंवार, सुजीते लला तुमहीं हम हारी ।
'वृन्दावन प्रभु' लेहु कह्यौ सु,
सवै मिलि देहु दुहूँ करतारी ।।३७।।

।। इति श्रीगीतामृत गंगा पौगण्ड लीला वर्णन घाट द्वितीयः ।।

* अथ तृतीय घाट *

।। दोहा ।।

गोरस दान अनूप सुख, लेत बिहारीलाल ।
वह लीला वरनत सुनैं, होतजु रसिक निहाल ।।

राग पञ्चम

रंग भरे लियें संग सखागन, गोधन संग चले नट नागर ।
मुरली मुहचंग बजावत गावत, एक ते एक बने गुन आगर ।।
हरैं ईं हरै बहु हासि करैं गिरि, राज तरे पहुँचे गिरिधारी ।
शारिद वारिद सी बन में सब फैलि, गई गैय्यां न्यारी यै न्यारी ।।

जाय वहां गिरि कन्दर में फल, पत्र प्रसूननि माल बनाई ।
'वृन्दावन प्रभु' को तबही अब,
दान लीला करिवे सुधि आई ।।२।।

राग वृन्दावनी काफी

निकसी दधि बेंचन गोप वधू इत,
वाट में दानी ह्वै बैठे कन्हाई ।
बांधिके च्यौंतर मंडप छाय,
बनाय जगाति की ठौर बनाई ।।
कारकून पयादे ह्वै बैठे सखा,
सुसही करिवे को वही उ कराई ।
कान खसौलिकैं लेखनी औ,
मसिहू घसिकैं भरि दौति धराई ।।
इतनैं जितही तितते तरुनीनि,
सुढूलनि ढूलनि दोनी दिखाई ।
'वृन्दावन प्रभु' सैन दई,
मधुमंगल दीनी ब्रजेश दुहाई ।।३।।

सखा वचन

सुनों को होरी को तुम जाति चली हो ।
दान दै जाहु न गोरस को सु,
जुरी जु मिली दश वीश अली हो ।।
काकी सुता अरु काकी वधू,
तुम दीशति हो सब भांति भली हो ।
'वृन्दावनप्रभु' बोलत हैं,
तुम्हैं मारगते कहो काहे टली हो ।।४।।

गोपी वचन

काके तुम को हो कस वाती, कवते भये जगाती ।
ऐसे कहा डराये डरिये है, हम पैं तिहारी कछु थाती ।।
अपनैं अपनैं घर ठाकुर हैं, सब आंखि करत कापैं तुम राती ।
महा नृशस कंस राज में, मति कोऊ बात करौ घर जाती ।।
करि राखे नन्दराय लाड़िले, कबहुं न देखी शीरी ताती ।
निर्जन वन रोकत पर नारिन, धन्य तिहारी छाती ।।
गौरस मिस चाहत हो, गोरस ऐसे बड़े तुम घाती ।
'वृन्दावनप्रभु' अति न भली,
कछु रीति करो सबलोग सुहाती ।।५।।

सखा वचन

आज दान दियें बिन जान न पैहौ ।
कै तुम्हैं जान जु दैहैं तबै,
हमारी मन भांवति औल जो देहौ ।।
जानत हैं हम हूँ अब ज्वाव,
सुजाई कहूँ जो पुकार हू कैहौ ।
'वृन्दावनप्रभु' आज क्यौं हूँ गई,
काल्हिहुतो इहिं मारग ऐहौ ।।६।।

गोपी वचन

कहो गोरस को कहुँ दान भयो जु ।
कीनी नई जो सपूत काहू तउ, अपनी ही हद मैं सु लयौ जु ।।
अपनैं अपनैं घर ठाकुर है सब, दायजैं काहू कैं कोउ दयो जु ।
मान्यौं तो देव न भींति को लेव, कहाभयो जांनि बड़ो जो नयोजु ।।
सूझत नांहि न लाल तुम्हैं सुव, जांनिये आंखिन गूद छयो जु ।
'वृन्दावनप्रभु' बोलत हो बढ़ि, चाहत हो कछु भोग लयो जु ।।७।।

सखा वचन

कहो जु कहौ यौंही आई हों दैंन,
टका कहुं वै नहीं लेत दही को ।
गोधन सो धन और कहा यह,
जीवन है जग में सब ही को ।।
या बिन रूखो ही दीसैं सबै,
यह सर्बसु है सब गोपन ही को ।
जानति बूझति मानति हो बुरो,
'वृन्दावन प्रभु' बात कही को ।।८।।

गोपी वचन

इहिं ठां कब दान लयो जु तिहारैं ।
यह तो हद है वृषमानु जु की,
डरि हैं हम नाहिं न टेढ़े निहारैं ।
डांडे मैंड की बात है लालन जू,
निबहै सोई कीजिये सोचि विचारैं ।।
राजा भये तुम गोपनि के अब,
ऐसी करो सब कोऊ ज्यों ठारैं ।।
सपूत भये तुम नन्द जू कैं भलैं,
यौं कहा काहु को दैहौ निकारैं ।
'वृन्दावन प्रभु' आज क्यौं हू,
हम कीनी गई रहियो जु सकारैं ।।९।।

सखा वचन

वृषभानु जु दान मुकातैं दयो,
हमें होत कहा कहू और के रूठैं ।
छानी नहीं यह है कब हूँ,
कहि हैं सब बात बटाऊई बूंठैं ।।

लैहैंजु ठौंकि बजाय कैं दान,
गुमान तुफान करौ तुम झूंठैं ।
'वृन्दावन प्रभु' दैंजु गई तुम हीं,
बरसानैं बसी हो अनूठैं ॥१०॥

गोपी वचन

कौंन कैं नाहिन ह्वै है भयो, धन लालन जू इतरो अब थोरौ।
इहिं मारग ऐहैं नहिं कबहूँ, इतनौंई तो है तिहारौ अब जोरौ।।
ऐहौ कहूँ हमारैं उतहू समझो, मन में मति ही रस तोरौ ।
'वृन्दावन प्रभु मारो न गाल सु,
देखैं विलादि कै नीचैं हो कोरौ ॥११॥

सखा वचन

समझो कहा आखिर होई गंवारि,
करी बहुतें हम कानि तिहारी ।
ज्यौं ज्यौं गही नरमी हम त्यौं ही त्यौं,
मूड चढी बढि बोलति सारी ।।
बौंहनी तो कर जाहु न बोलत,
आई बड़े घर की जु सकारी ।
'वृन्दावन प्रभु' गोपनि राव हैं,
नन्द जु को घर छानों कहारी ॥१२॥

गोपी वचन

तुम तो जदुवंशिन राव हुते,
तउ आय गँवारनि मांझ पले हो ।
पूंछ बड़ो सु उडाइ है आप की,
लाभ तुम्हैं जु प्रवीन भले हो ।।

हमें तो सब जानैं गंवारि हैं ये,
अब तौ तुमहूँ हम मांझ रले हो ।
'वृन्दावन प्रभु' कैसे रहो तुम,
रोके गंवारनि चाल चले हो ।।१३।।

सखा वचन

बहुतै कछु गाल बजावति बाल,
निहाल मनौं करि डारैंगी काहू ।
तो हुतै वोंकी जो आई यहां सुनि,
सांकी हमौं सब भांति कैं वाहू ।
बातनि हीं वहरावति हैं,
ठहरावत नाहिं नैं देति जु ताहू ।
'वृन्दावन प्रभु' सूधई बोलत,
दै किन आपनैं मारग जाहू ।।१४।।

गोपी वचन

लाला भुलाये से डोलत काहू के,
सोचि विचारि सम्हारिकैं बोलौ ।
वे कोऊ और ही जानौं बधू जिन,
सों हँसि बोलि कैं आंखिन घोलौ ।।
उन को सन्मान करो तुम्हैं दान,
वे दैहैं सही उनसौं मन खोलौ ।
'वृन्दावन प्रभु' वैसा नहीं हम,
घेरी घिरैं इतनौं कहा जोलौं ।।१५।।

सखा वचन

अजू तुम तो ऐसैं घिरियोगी सु,
और कोऊ जिहिं भांति न घेरी ।

मारन काज जगाति इतैं उत,
खाई तुम्हैं बहुतैं चकफेरी ।।
हम तौ इत बातनि लागि रहे सु,
लखा जु भली मधुमंगल घेरी ।
'वृन्दावन प्रभु' दान लियें बिन,
जानन दैहैं करो बहु तेरी ।।१६।।

गोपी वचन

अजु लेहु दह्यो जु कह्यो सु मह्यो व,
रह्यो इहिं मारग अैवौउ जैवो ।
तांति हो बाजे तैं रागु लह्यो जु,
गह्यो तुम दाव कहैं ऊ रिसैवो ।।
जो रस ढूंढत डोलत हो इन,
वातनि सो रस नाहिं न पैवो ।
'वृन्दावन प्रभु' जाहु चले घर,
बातनि को कहा और ही लैवो ।।१७।।

सखा वचन

अजू दह्यो ऊ दियैं निरो छुटि हो नांही ।
श्याम तो दाम चुकाय के लैहें,
दह्यो हमरो समझो मन मांही ।।
सूधि में आय कैं जाहु अवैं,
ऐसी बातनि तो हम नाहिं सकाहीं ।
'वृन्दावन प्रभु' सूधि भयैं कहि,
हौं तिहारी करि हैं मन चाही ।।१८।।

गोपी वचन

अजू और जु ह्वै हैं सु ह्वैंई रहैगो,
लई इंडूरी तिहारे काहू संगी ।
हांसी में ह्वै जैहैं खांसो कछु,
नहीं वेगि मंगाय के देहु त्रिभगी ।।
तिहारो कछु ठाठ कुठाठ सो हैं,
मग लूटन को पकरी तुम झंगी ।
'वृन्दावन प्रभु' पीछो विचारत,
नांहि भये हो नये बहुरंगी ।।१९।।

गोपी वचन

लाल मेरी ईण्डुरिया दैरे ।
घास फूस की जानों मति तुम, रतन जटित वह है रे ।।
कोर कोर राखे हैं जाकैं, मोती अमोलक प्वैरे ।
मर्कत मणि चोटी गज मोतिन, झूमक हैं द्वै द्वै रे ।।
सखा संग ये ह्वै रहे मोटे, पर गोरस खै खै रे ।
कैसें पचैगी हमें यह तनको, यह न धरो हिय भै रे ।।
लै लै दान हिले हो बन में, खवरि परैगी अवै रे ।।
'वृन्दावन प्रभु' छुटि हो नाहीं, सरवसु ही दै कै रे ।।२०।।

श्रीकृष्ण वचन

बनी कठिन कैसैं धीर धरै रे ।
ढूण्ढौ भैय्या इनकी इन्डुरी, किन चोरी परी वगरैं रे ।
अपनैं ही मुंह कहत अमोलिक,
पावै जो याही तो झूंठी करै रे ।
यह सुनि धुनि मधुमंगल लै आयो,
कहां करैं कीरति पति सौं डरैं रे ।।

वा घर की यह बात जितीक,
कहै सु तितीक परैं ईं वरैं रे ।
'वृन्दावन प्रभु' दै इन्डुरी,
कह्यो सब मिलि याकैं पाय परैं रे ।।२१।।

श्रीकृष्ण वचन

वरसानैं की जानि करी तुम,
कानि सु रोष तजो रस मैं घर जैहो ।
अरिवी करिवी तुमसौं न कछु,
करि हैं जु सोई तुम ज्यों सुख पैहौं ।।
बड़े घर की तुम मौंहनी मूरति,
वौंहनी कैं समैं आई सवै हौ ।
'वृन्दावन प्रभु' मानि हैं लाभजु,
राजी ह्वै कैं तुम ही कछु देहौ ।।२२।।

गोपी वचन

अजू यैं रस में सब गोरस लाजै ।
हमारौ तिहारौ कछु दोइ नहीं सु,
सखानि हूँ प्याइयें आप हूँ पीजै ।।
टैंट कियैं रस बैंट ही टूटत,
जाउ सबैं किन राई न दीजै ।
'वृन्दावन प्रभु' मीत लंगोटिया,
आगैं कछू चतुराई न कीजै ।।२३।।

श्रीकृष्ण वचन

अजू वाल चलौ तुम्हैं कुंज दिखैये ।
पाहुनी हों हमारे तुम आजुसु, बैठि वहां रुचि सौं कछु खैये ।।

डीठि परी जबते तुम हो, तबते हमारे तिहारौ गुन गैये ।
विधि ऐसी अनुप तुम्हैं जु रची, लखि रूप तिहारौ न नैंकु अघैये ।।
जो कोउ आप सौं प्यारु करै, हठि अैवु कहा जु वहां चलि जैये ।
'वृन्दावन प्रभु' सुनियौ इक बात,
ही आपहू की सु हमैंउ सुनैये ।।२४।।

गोपी वचन

अजू जैहौं नहीं उहिं कुंज कैं नैरैं ।
तुमतो बहुतेरिय बात कहो, डरु लागत मोहिं अकेलैं अधेरैं ।।
वह तो अपने मन की रुचि है, बलि यों कोउ काहू कैं आवतु घेरैं ।
लालन जु रसुनां रहैगो कहैं, लेति हैं काल्हि कल्हां कहू छेरैं ।।
कहनौं कछु होइ यहां ही कहो, सुकहा समझी नहीं जात उजेरैं ।
'वृन्दावन प्रभु' दै हौं कहा,
कहौ उत्तर जो घर की कहुँ टेरैं ।।२५।।

गई मिलि कुंज मैं पुंजनि पुंजनि, गुंजै अलि मकरन्द के माते ।
बैठी तहां लता मंडप जाय, बिछाय बिछौंनां दये मन भाते ।।
दौंननि दौंननि आनि धरे, पान मिठाई मेवा रस राते ।
गोप सुतानि खवाय बनाय गये, मिलि मित्रनि आपहु खाते ।।
फूलन वीनन काज सखीन समाज, गयो सबही बढि ह्वांते ।
'वृन्दावन प्रभु' श्यामाजु श्याम,
मिले दोउ पूरन काम कलाते ।।२६।।

लाल गुपाल सवै रस भीनौं ।
चित चौर किशोर महा ही प्रवीनौं ।
लखि गोरसु है कहा सरवश दीनौं ।।
जिहि पांनिय बूडि गये दृग मीनौं ।
'वृन्दावन प्रभु' टौनों सो कीनौं ।।२७।।

राग सारंग

दुपहरी भई ह्वैहै भूखो दई,
सुत छाक तवै पठई व्रजरानी ।
मित्रनि संग विचित्र वे भोजन,
बैठि कै लैंन लगे जहां पानी ।।
चखावत चाखत परस्पर विस्मित,
देव लखैं वरषैं सुम ।
आपुस में कहैं निर्जर अद्भुत,
'वृन्दावन प्रभु' लीला लखौ तुम ।।२८।।

भोजन कै लियैं संग सखांनि,
पगे उत ही बहु भांति के खेलनि ।
फौज बनाय द्वै श्याम श्रीदाम,
लगे लरिवे फररांनि के सेलनि ।।
लरतैं लरतैं न हटैं दुहुं ओर,
सु आइ गये पुनि डेलनि डेलनि ।
पातन के छतनां करि ढाल,
सुमार गुपाल सवै लगे झेलनि ।।
कौहू धकाइ लैजांहि वे श्याम को,
श्याम सखा उनकौं लगे ठेलनि ।
देखत देव खरे नभ मैं मिलि,
'वृन्दावन प्रभु' की सब केलनि ।।२९।।

।। इति श्रीगीतामृत गंगा दान लीला वर्णन घाट तृतीयः ।।

❋ अथ चतुर्थ घाट ❋

दोहा

अब वरनत कैशोर की, लीला अद्भुत हैंजु ।
धर्मी है कैशोर वय, और सवै इहि मैंजु ।।१।।

राग कनड़ी

जय जय गोकुल राज कुमार, रसिक भक्तजन प्राण अधार ।
ब्रज खंजन नैंनी दृग अंजन, राधा उर मर्कत मणि हार ।।
ब्रजरानी लोचन जुगतारक, वारक निजजन-विघ्न अपार ।
जोगी जनमन अंजन मंजन, नामहीं भंजन पाप पहार ।।
विधि शिव ईश मान जब गुरु, करैं प्रिया पाइन परै बारम्बार ।
'वृन्दावन प्रभु' निगम अगम हू,
सुगम भयो व्रज में वस प्यार ।।२।।

राग खट

देखिरी देखि छवि मदन गोपाल की ।
जर कसी पाग पर लियैं परभाग कौं,
लसतमणि पेच सखी मिलै दुति भाल की ।
थिरकि रही चन्द्रिका चारु तापर अरी,
हरत मुसुकानि मन लोचन विसाल की ।।
जलज दुलरी ग्रींव मंजु गुंजावली,
पुंज गुंजत अली वास वनमाल की ।।
करन कुण्डल कनक कटक हीरा जटित,
मिलि धुनि नूपुरनिं किंकनी जाल की ।
'वृन्दावन प्रभु' की रूप गुन माधुरी,
जीव जीवनि इहै सकल व्रज वाल की ।।३।।

इह को हैंरी श्याम काम, मूरति सुवल अंश बाहु दीनैं ।
लाल पाग पर पर मोर चन्द्रिका, चन्दन खौरि कीनैं ।।
मो तन लखि मुसुकात, जलजोत से नैंन मैंन भीनैं ।
'वृन्दावन प्रभु' शोभा को वारिद, सींचत दृग मीनैं ।।४।।

राग काफी

सखी ? देखिरी श्याम की सुन्दरताई ।
तिहुँ लोक की शोभा सकेलि सबै,
इह मूरतिमानों विरंचि बनाई ।।
मन आवत यौं अपनी सब ही करि,
ह्यांहि चुक्यो रचना चतुराई ।
चन्द कहा अरविन्द गयन्द हू,
ढूढैं कहां उपमा नहीं पाई ।।
जिहिं अंग के संग लगैं दृग रंग सौ,
फेरे फिरैं न रहैं हीं लुभाई ।
काम के तन्त्र के मन्त्र के जन्त्र सु,
मोहन को जग भौंह री माई ।
हौं तो निहारि कै रीझिगई छकि,
लेत बलाय न चित्त अघाई ।
'वृन्दावन प्रभु' देखैं रहै पन मैं,
सु कहूँ ऐसी को है लुगाई ।।५।।

राग मालवगौड

जीवन मद छक्यौ छैल सल मिस गैल,
इहिं सिंधुर अरैल ज्यौं आवत गुपाल री ।
अलक गज गाह गन्ध अन्ध अलि फिरै,
घेरैं वाहु शुंड कंज शुकलावा वनमाल री ।।

घनन घनन धुनि घण्टकान होत कल नाना,
धातु विचित्र विराजै खौरि भाल री ।
सखा गडदार लियें फिरैं जाकौं जित प्यार,
'वृन्दावन प्रभु' देखैं होत हौं निहाल री ।।६।।

नन्द को किशोर भयें मोर चितचौर,
बनि आवत इहि और नित रसिक गुपाल री ।
लीनैं कर नवलासी फेरत विलासी श्याम,
नैंन मैंन गांसी लागै घूमत विहाल री ।।
पीत पाग बांधै कांधै उपरना पीत,
पियरे वरन धोती मोती श्रवन रसाल री ।
सखा कंध दियै बांह देखत चलत छांह,
'वृन्दावन प्रभु' देखैं परी प्रेम जाल री ।।७।।

राग शुद्ध कल्याण

आजु मैं देखे री राधा रवन ।
कोटि गुनी शोभा वाहु, ते सुनी हती जैसी श्रवन ।।
अंग अंग में वसत मौंहनी, वरनि सकै कवि कवन ।
अब 'वृन्दावन प्रभु' बिन, छिन हूँ मोहिं सुहात न भवन ।।८।।

राग काफी

सखी आजु मैं देखे री कुंज विहारी ।
वंशी धरैं गरैं गुंज की माल करैं,
तन चन्दन खौरि सुधारी ।।
कंज से नैंन सुहैं छवि अैन,
विलोकि मोपैं भुरकी हँसि डारी ।
ता दिन तैं दिन रैंन न चैंन सु,
दैन लग्यौ दुख मैंन महारी ।।

तौसौं कहूँ कहा रूप कहूँ ऐसी,
मैंन सी मूरति मैं न निहारी ।
'वृन्दावन प्रभु' सौं मोहि मिलाव,
तू तौसौं तो मेरो दुराव कहा री ।।९।।

राग वृन्दावनी काफी

मैंन की ताप तैं मैंन भयो,
मन मोहन की मुसकान बिलोकैं ।
सुन्दरता चिहुटचो नहिं छूटत,
चंचलता तजि मेरे-ऊ कोकैं ।।
फैलि परचौ सिमटे न क्यौंहु,
सुब सावन की सरिता जिमि रोकैं ।
'वृन्दावन प्रभु' ऐसी बनी,
उत नन्द जिठानी वैं डारत टांकैं ।।१०।।

राग मधुपुरी काफी

मन लै गयो सांवरो डारि ठगौरी ।
डार गहै जमुना तट कुंज की, गावत हो मधुरैं सुर गौरी ।।
पहिरैं मणि भूषण मोर किरीट, धरैं नक बेसरि केसरि खौरी ।
सुन्दरताई निहारत माई, सु लागे नहीं पलकौउ पलौरी ।।
सुनिकैं धुनि ध्यान ते न्यारे भये, सुनि मोहि रहे पशु पंछी द्रुमौरी।
ताहि कछू न सुहात लगि जिहिं,
'वृन्दावन प्रभु' प्रेम की डौरी ।।११।।

उत डौरी लगी इत बौरी भई फिरौं,
पौरि हुलौं अरी जान न पावौं ।
पानी चलौं तो जिठानी कौं आगै,
कै पीछै ह्वै ननँद तो देखि सकावौं ।।

भौरी वडौ लग्यौ कौरि रहै पति,
जौरि व काहु की ढीटि बचावौं ।
'वृन्दावन' मन होत याहि तन,
जारि छारि करि चरणकमल लगि जावौं ।।१२।।

राग सारङ्ग

लोचन दुख मोचन गिरिधारी ।
कोटि इन्दु छवि छीनत आनन, कानन कुण्डल दमकत भारी ।।
शोभासिन्धु कलोलत मानों, मनन मीन के जुगल वचारी ।
पाग पीत कछु छवीलि रिति सौं, दै दै जरकसी पेच संवारी ।।
लाल झगा पटुका हरियारा, अंग अंग भूषन वरनौं कहा री ।
मुरली मधुर बजाय कैं गाय कैं, मोपर प्रेम ठगौरी डारी ।।
'वृन्दावन प्रभु' वानिक देखैं,
को न जात मोह्यो नर नारी ।।१३।।

राग परज

मुकुट लटक पर वारी हो गिरधारी ।
मुरली बजाय गाय गौरी सुर, डोरी लगाइ सुधि हरी हमारी ।।
तन घनश्याम पीत पट चपला, खौरि मनौं धुरवा छुटे भारी ।
'वृन्दावन प्रभु' नैंन सैन में,
मोपर प्रेम ठगीरी डारी ।।१४।।

राग देवगंधार

चलौ किन देखैं री गोविन्द ।
मुरली अधर धरैं तिरभंगी, मृदु मुसकत मुख चन्द ।।
लाल पाग की अलक झलक में, कोटि मनोभव फन्द ।
'वृन्दावन प्रभु' सों सुत जिनकैं, धन्य जसोमति नन्द ।।१५।।

अद्भुत छवि कछु गोपी नाथ ।
अंग अंग जगमग नग भूषन, लखि न रहत मन हाथ ।।
अधर धरैं वंशी सुख राशी, कल हंसी प्यारी लियें साथ ।
'वृन्दावन' मानस नित विहरत, मदन मनोहर मंगल गाथ ।।१६

राग परज

देखिरी देखि कहत ही मोसौं, तेरो प्रीतम को है ।
इत मेरो मन मोह्यो सजनी, श्याम सलौनी मूरति सौ है ।।
अंग अंग प्रति अमित माधुरी, को धीरज धरि जो है ।
'वृन्दावन प्रभु' मुसुकि विलोकनि,
को न देखि तिय मोहै ।।१७।।

राग गौरी

मन मोहन मुरली तैंडी वे ।
सुनि धुनि मुनि मन ब्रज जन मोहै, मती ह्वै गई वैंडी वे ।।
कुटिल अलक अनियारी अखियां, मत्त दुरद गति ऐंडी वे ।
'वृन्दावन' तिरभंगी मूरति, छतियां खुवि रही मैंडी वे ।।१८।।

राग कनडा

नन्दलाला वंशी वाला बाला नी ।
लाय गया कछु मैंनु चेटक, मदन मनोहर काला नी ।।
की जाणां की कीतां कामणु, बिनु दिट्ठा बे हालानी ।
'वृन्दावन प्रभु' रूप लुभानी, हुई दिवानी वस नाला नी ।।१९।।

राग कालीगंड़ा

आली वनमाली मन हर्‍यो ।
जा दिन ते देखी उह मूरति, तन मन धन बिसर्‍यो ।।
लोक लाज कुल कानि सकल तजि, हरि निज रूप अर्‍यो ।
अब न फिरत फेर्‍यो कैसैं हूँ, परवस जाय पर्‍यो ।।

कल न परत नैकौ बिनु देखैं, उहि कछु मोहिं करचो ।
वृन्दावन प्रभु' नटगुपाल पर, सरवसु वारि धरचो ।।२०।।

राग गौरी

गिरिधारी की आंखि लगी अनियारी,
अबतो नहिं होत किहीं विधि न्यारी ।
दिनैं दिनैं सूकति जाति सखी, री मैंन मूंठि मनौं मारी ।।
कौन उपाय कीजिये सजनी मन, गुरुजन उर कांपत भारी ।
'वृन्दावन प्रभु' कहूँ मिलै जो तन,
मन ताप मिटै तब सारी ।।२१।।

घायल कीन्ही तैं कान्हर कारे श्याम ठगारे ।
नैंन मैंन सर सान चढ़े, मानौं भौंह कमान तकि मारे ।।
इहि वान घाव को वांनहिं औषध, याही ते प्रेम के पथ हैं न्यारे ।
'वृन्दावन प्रभु' वेगि दरश, दीजै दुखित करत ही हारे ।।२२।।

राग ललित

इहि मग आय निकसे लाल, कैहू वाल झरोखैं झांकी ।
हो तो थकित भई अलीरी, छवि निरखत दुहुँ धांकी ।।
तिहिं छिन छैल छवीलै लखि ऊंचै, लख्यो नीचैं नजर करि बांकी ।
'वृन्दावन प्रभु' कैं मानौं, तानि कैं दई काम सर पैना की ।।२३।।
मुसूकाय कैं तैं वृषभानु सुता, बलि मोहन पैं कछु मोहनी डारी ।
राधा ई राधा रटै न हटै, छिन देखन ठाठ ठठै गिरिधारी ।।
मोसों जतावन तोसौं कह्यो सुव, तू कहि उत्तर देत कहा री ।
'वृन्दावन प्रभु' जोरी बनी अब,
वे घनश्याम तू गोरी महारी ।।२४।।

तेरो ही ध्यान निरन्तर अन्तर, मंत्र ज्यौं जपै नाम ही तेरो ।
जाखिन झांकी कहूँ झिझकी झुकि,
ताखिन आंखिन कीनों बसेरो ।।
अब तो निरवाहु किये ही बनै,
बलि तोहिं लखे बिनु दाहु घनेरो ।
'वृन्दावन प्रभु' है गरजी,
अरजी दई मोकर छीरै न केरो ।।२५।।

प्रीति नई उर मांझ जगी पिय, नैंननि तेरिय चाह लगी है ।
देखैं बिना पलकौं न लगै पल, देखैं तैं लागि रहैई टगी है ।।
तेरो हि ध्यान रहे निशिवासर, और सवै चित चाह भगी है ।
'वृन्दावन प्रभु' कैं मन माननि,
तेरिये मूरति जाय खगी है ।।२६।।

बुलायो हू काहू का क्यौं हू न बोलत,
लाल तो देखन लालच डोलै ।
कबहूँक झरोखनि मोषनि ह्वै,
कबहुँ तो अटा चढ़ि नेननि तोलै ।।
घाट रु वाट फिरै वन वीथिनि,
केतकि वास लै भौंर ज्यौं लोलै ।
'वृन्दावन प्रभु' को गज गामिनि?,
चेरौ कियो वलि तें बिनु मोलै ।।२७।।

राग पूरिया धनाश्री

तब मूरति नैंननि मांझ रही वसि ।
सांचै ढरी सी भरी गुन रूप सौं,
चित्र लिखी सी सुमानौं रह्ी लसि ।।

देति हो लाख करोरनि मोज सु,
नैंकु बिलोकति हो जबही हँसि ।
'वृन्दावन प्रभु' को मन भामिनि,
बाँध्यौ है आंगी के बांधिवे में कसि ।।२८।।

राग नाइकी

री तैं मोहि लियो मोहन लाल, रूप सलौंनी बाल ।
अब तो विन तलफत सफरी लौं, पर्यो प्रेम के जाल ।।
लगे मदन के बान करेरे, फिरत भयो बेहाल ।
'वृन्दावन प्रभु' तोहि मिलै जो, करि राखै उर माल ।।२९।।

राग अडानौं

तैं वसि कीन्हौंरी बाल लाल गोपाल रँगीलौ ।
जिहिं मोही सगरी व्रजवनिता,
बन्यौं वानिक छैल छवीलौ ।
तुही तुहो रटत रहत रैंन दिन तन,
घनश्याम वसन ओढैं पीलौ ।
'वृन्दावन प्रभु' तेरे ही दरश,
कौं तरसत भिरत हटीलौ ।।३०।।

गौरो गूजरी तैं मोह्यो गोकुल चन्द री ।
चम्पक चन्दन कुन्द हुते सुब, लागति तो दुति ऊजरी ।।
सेवत कंज कुरंग दोउ बन, देखत नैन विसाल री ।
लेत खेह सिर सिंधुर निशिदिन, निरखत तेरी चाल री ।।
तुव नाद सुनत पिक पीन सुहातन, मंजु घोषा रही लजाईरी ।
बैंनी निरखै अहि कुण्डलि मिस, राखत देह दुराई री ।।
कंठ पोति मोतिन सर शोभा, उपमा कहा वखानौं री ।
कचुकी तजि कें कनक लता सौं, मनौं भुजंग लपटानौं री ।।

बिब गुलाल लाल लाली कहीं, आगैं अधर ललाई री।
मनौं राका उडु पति मैं सोहति, सन्ध्या की अरुणाई री।।
मुक्ता हार हियें हीं धुकधुकी, शोभा बड़ी अपार री।
मनौं कनक गिरि द्वैविच राजत, चन्द लियें परिवार री।।
नासा बेसरि राजहीं अरु, केशरि आड ललाट री।
मानौं प्रकट निहारियें, पीव मनोरथ वाट री।।
अलक लसैं सट कारी कारी, न्यारी यौं छवि देत री।
अरि बरि रहे मनौं शशि ऊपर, अहि शिशु अमृत हेत री।।
लागत श्रवन तरयौंनें लौनें, मृगमद वेंदी भाल री।
मनौं अरविन्द मकरन्द कौं, लेत मधुव्रत बाल री।।
भौंह सौंहनी नैना ढिग छवि, कछु वरनी न जाई री।
मृग निकन्ध नीलमणि जूवा, मनहुँ धरचौ उडुराई री।।
पीन उरोज नितम्ब बिम्ब भर, लचकति कटि अति छीन री।
टूटि जाय मति निरखि सखी जन, डरपति रहति प्रवीन री।।
नाभि कमल रोमावलि मानौं, अलि सुत निकसे सैल री।
किधौं नीलमनि फरस बंधी इह, कुच कंचन गिरि गैल री।।
हेम वरा सु चूरी श्यामल, कर कंचन बनैं जराई री।
पायल नूपुर ऊपर जू, जे हरि झमकत पाई री।।
अनवट बनैं अनौंठे विछिया, अंगुरिन पर छवि पाये री।
रचे कमलदल महल मनौं, विसकर्मा रमा सुहाये री।।
तन जोवन यौं जगमगै ज्यौं, खच्यौ रतन अमोल री।
रूप चुचानौं सौ परै, ज्यौं मुख रच्यौ तम्बोल री।।
अंगिया पीत मीत मन बांध्यो, नीवी बंधन जाल री।
सची घृताची मेनका, और तिलोछम नारि री।।
रति रम्भा उरवसी सुकेशी, तोपर डारि बारि री।
मृदु मुसुकिनि हारी जा दिन ते, तू भयो बावरौ श्याम री।।

पढि टौना मनौं ताही दिन, हठि भुर की डारी काम री।
तुही तुही बरराइ सुपन में, उठत लाल अलवेलौ री ।।
चलि देहि दिखाई 'वृन्दावन प्रभु',
कौ उठत लाल अलवेलौ री ।।३१।।

राग नाइकी

ऐरी बाल तै गोपालहिं टौनां कीनौं,
निशिदिन रहत तेरे रस भीनौं।
तेरोई ध्यान सुपन जागत में, लाल न अति आधीनौं ।।
सुनत अघातन तेरी बातन, करत मिलन की घात प्रवीनौं।
'वृन्दावन प्रभु' तुव दरशन विन, भयो बिना जल मीनौं ।।३२।।

राग ग्रासावरी

ऐरी ग्वालि दाइल कीनैं, क्यौं गुपाल ऐसे घायल।
चित वित हरि लीनौं मनमोहन कौं,
घूमत वान लागैं जैसे साइल ।।
भूली सुधि देहगेह खान अरु पान हू की,
निशिदिन तुही तुही रटत मन भाइल।
'वृन्दावन प्रभु' रस बस करि लीनैं अब,
कैसें बनैं भये अन खाइल ।।३३।।

राग भूपाली

एरी बाल तेरै विरह बेहाल, लाल किन लेहु सम्हाल।
निशिदिन नाम रटत तेरो ही, और पूछें बोलै आलबाल।।
कौन मन्त्र पढि डारयो तैं सु, व तोही देखे होत निहाल।
'वृन्दावन प्रभु' की देखि दशा, अब मोहिं परयौ जंजाल।।३४।।

राग कनडी

प्रेम कौ रूप सु इहै कहावै ।
प्रीतम कै सुख सुख अपनौं दुख, वा हित होत न नैंक लखावै ।।
गुरुजन वरजन तरजन ज्यौं ज्यौं, त्यौं त्यौं रति नित नित अधिकावै।
दुरजन घर घर करत विनिन्दन, चन्दन सम शीतल सोउ भावै ।।
पलक औट हू कोटि बरस सम, छिनक जोट सुख कोटि जनावै ।
'वृन्दावन प्रभु' नेही की गति,
देही त्यागि धरै सोइ पावै ।।३५।।

राग श्री टंक

तुव नैंन कजरा रे, पर वारे खंजन मृग वारे ।
अनियारे रतनारे ढरारे, मतवारे ऐसे मैं न निहारे ।।
अति चंचल तारे वड़ियारे, भारे तोमें पौंछि सँवारे ।
'वृन्दावन प्रभु' कान्हर कारे, प्यारे न्याय अपन पौ हारे ।।३६।।

राग टोडी

डस्यौ दृग नागिनि कारी तिहारी ।
रोम रोम गयो व्यापि प्रेम विष,
घूमत लहरनि लेत विहारी ।।
करि करि कोटि उपाय पचिहारे,
क्यौं हू जात न विथा सहारी ।
चलि 'वृन्दावन प्रभु' उपाय करि,
बंक विलोकनि मंत्र महारी ।।३७।।

राग सारंग

एक समें नन्दलाल वाल के मिलन काज,
भांवरी सी देत हुतौ वाही के सदन को ।
लाग्यो नयो नेह देह गेहऊ विसार्‌यौ उन
दिन दिन बढन लगी व्यथाई मदन की ।।

गृह ते सु चली कली बीनन मिस भली भाँति,
गली मांझ मिल अली साथ लियें तन की ।
'वृन्दावन प्रभु' अक भरी धन रंक जैसे,
कछुक सशंक साध पूरी सब मन की ।।३८।।

राग काफी

अहो पांय परूं मोहिं जान दै प्यारे ।
घर की लरि हैं न सह्यो परि हैं,
करि हैं जु परौसी चवाव हहारे ।।
आंखि निगोडी लगी न रह्यो,
परैं छीन वियोग भई हौं तिहारे ।
'वृन्दावन प्रभु' जाहि न हो डर,
सो पर पीर हिं जानैं कहारे ।।३९।।

राग ललित

तो मुख चन्द किधौं अरविन्द, ये मो दृग धोखैं परे ही रहैं री ।
देखन को अति आतुर हैं सु, इन्हैं ऊ चकोर कै भौर कहैं री ।।
ये सब प्रेम मनौं इन हीं बस, मोहू लियें फिरैं गैल गहैं री ।
'वृन्दावन प्रभु' रोके रहैं,
नहीं धाय परैं जब तोहिं लहैं री ।।४०।।

राग विहागरौ

तुम्हैं देखैं तै जानौं हौं देख्यौ करौं,
पर से जानौं परस्यौई करौं ।
जु महारास ऐंन वे वैंन सुनैं तैं,
सुन्यौं करौं चित्त न और धरौं ।।
मोद मिठास सुवास लियें तैं,
लियोई करौं रोम रोम ठरौं ।

'वृन्दावन प्रभु' अधरामृत पान,
किये ते जानौं इहां ते न टरौं ।।४१।।

राग गौड़ सारंग

तब मुख देखि देखि हौं जीवत ।
दूर ही भयें चकोर चन्द लौं, रूप सुधारस पीवत ।
ए दृग लगे पगे तोही सौं, आन सुपन नहिं छूवत ।
'वृन्दावन' रानी भयो तोपर, टूक टूक मन तो गुन सींवत ।।४२

राग केदारो

प्यारी तेरो वदन सुधाधर नीको ।
इह निशिद्यौस प्रकाशक दूनौं, उह दिन लागत फीको ।।
मित्र अस्त भयें होत उदय उह, इह उदय चहत मित हींको ।
उह दोषा कर कहियतु जग में इह, आकर गुन ही को ।।
उह नित घटत बढत छिन छिन में, इह नितप्रति परवी को ।
'वृन्दावन' इह नांहि विछोहक, कुच चकवा चकई को ।।४३।।

राग मालश्री, कामोद कल्यान

तेरी तिरछी चितौंनी किधौं बरछी है मैंन की ।
ह्वै जाति वारपार हति न सम्हार,
नैंकु भये हैं सुमार चलावनि सैंन की ।।
कसकत हिये नित निकसत क्यौं हू नाहिं,
कराहत कराहत थकी गति बैंन की ।
'वृन्दावन प्रभु' प्यारी देखौ गति न्यारी इह,
उहीं विधि लागति पुनि औषध बैन की ।।४४।।

राग कान्हरो

काम के सुभट बाम तेरे दोऊ ईछन ।
काजर कर वाल भृकुटी कमान, वान कुटिल कटाच्छ तीछन ।।

सुवष कटारी नौंक पलक हथवा सैं ढाल,
प्रति भट लाल पर चढिआये बिचछन ।
हाव भाव दाव घाव करि जीति 'वृन्दावन प्रभु'
प्रेम फांसि बाँधि बसि किये तिहीं छिन ।।४५।।

राग हमीर

प्यारी तेरे दृग जुग खंजन नन्दन ।
अति चंचल मुख मंजु कंज पर, नांचत हैं दुख कन्दन ।।
भृकुटी काम नरिंद फन्द मनौं, रच्यो इन ही हित फन्दन ।
'वृन्दावन प्रभु' दृग खंजन हू, विधये इन करि छन्दन ।।४६।।

राग ईमन

करत कलोल तेरे लोइन लोल, नील निचोल की ओट भये ।
ताकत पिय मन मृग की घातनि, सिखवत काम करोल ।।
बाजत छुद्र घंटिका कटि तट, बोलत मधुरे बोल ।
'वृन्दावन प्रभु' प्रेम रमनां, रच्यौ विधि अधिक अमोल ।।४७।।

राग पूरिया कान्हरो

प्यारी तेरे अंग अंग बानिक लखि, मानिक छवि दवि जात ।
सुधा सी सींचत पिय नैंन मान कौं, जब दुरि मुरि मुसुकात ।।
वचन रचन मन नैंन प्रान में, बसी रहति दिनि राति ।
'वृन्दावन प्रभु' तो बिन जोगति, होति सु कहति सकाति ।।४८।।

राग धनाश्री

बसी तुव मूरति नैंननि मेरैं ।
कैसैं चैंन परैं प्यारी अब, भली भांति बिनु हेरैं ।।
तनक किर किरी खरकति सोतो, नखसिख भूषन तेरैं ।
'वृन्दावन प्रभु' नेह अजन ते, खरकति और घनेरैं ।४९।।

राग विहागरौ

ह्वै गयो मो मन तेरीय मूरति ।
जो जो नजरि परैं जग मेरैं, सो सो दीखति तेरीय सूरति ।।
जवलगि तोहिं निहारौं नीकैं, तब लगि और सबै सुधि भूलति ।
कहि 'वृन्दावन प्रभु' मिलैं – विछुरैं,
दुहुँ विधि मो मति में तुही झूलति ।।५०।।

राग बिहागरौ

जब जब लाल निहारौं तोहि ।
तुम हौ वे हैं हौं इह इह कछु, नांहि रहत सुधि मोहि ।।
तन मन श्रवन रसन इन्द्रिन गति, रहति जु दृगनि समोइ ।
'वृन्दावन प्रभु' प्रेम तरंगनि, कहुँ जो कहन की होइ ।।५१।।

महा कठिन इह लगनि निगोड़ी ।
मत कोई नेह फन्द मैं परियो, करि नेहिन की होडा होडी ।।
चैंन नैंन देखै ही उपजत, पलक ओट दुख पोटनि कोडी ।
'वृन्दावन प्रभु' जातन छोडी, अब पहलैं जोडत तो जोडी ।।५२

राग परज

मोहन मूरति सांवरे मोपैं, डारी कछु ठगीरी रे ।
गृह वन मन लागत नहीं मेरौ, बिन देखे आवत ताव रे ।।
अटकी अब इह कान्ह कुंवर सौं, यैं कहैं गोकुल गांव रे ।
'वृन्दावन प्रभु' प्रीति कैं पाछैं, भई घर घर वदनांव रे ।।५३।।

राग नट नाइकी

बनी कठिन दुहुँ विधि कहा कीजे ।
इत गुरुजन डर धर धर करै छाती,
उत मोहन बिन छिनक न जीजै ।

लोक लाज घूंघट कियो चहिये,
दृग जानैं रूप निसक ह्वै पीजै।
'वृन्दावन प्रभु' देखैं मनोरथ,
होत इहै हिय लाख कैं लीजै ।।५४।।

प्रीतम प्रान पियारे हौं, तोपर वारि वारि डारि ।
मोहन मूरति सूरति तोरी, जबतैं नैंन निहारी ।।
वसि कर लीनी देखत ही इन, अँखियां कामन गारी ।
'वृन्दावन प्रभु' हियते न्यारे, हो जिन अरज हमारी ।।५५।।

चुभी चित नैंननि नौंक तिहारी, तुम सांचे बंक बिहारी ।
अब क्यौहुँ निकसत नाहिन, इह हौं केतौ पचिहारी ।।
न्याय फिरत घायल ज्यों बन बन, विकल भईं ब्रजनारी ।
'वृन्दावन प्रभु' गृह काजहू ते, क्यौं करि न्यारी विचारी ।।५६।।

राग नाइकी नट

तुम बिन दृगन सुहात न और ।
नींद रेन दिन वसी रहत ही, बाहू को नहीं ठौर ।।
अब कैसैं फींको जग भावत चाखे, रूप सलौनैं कौर ।
'वृन्दावन प्रभु' सुरझत नाहीं, परे प्रेम के झोर ।।५७।।

राग पूरिया धनाश्री

यहाँ लौं भुराइ दृग राखे ।
अबतो द्रोण सुत लौं मोहन के, रूप सांके पय चाखे ।।
और रूप चांवर के जल सों, फीके सकल करि नांखे ।
'वृन्दावन प्रभु' सौं रुचि मानी,
मानैंन गुरुजन कहि भये खाखे ।।५८।।

राग रामकली परज

माई ! मिलि जिन बिछुरौ कोइ ।
जरन मरन हिय परन गरन ते, इह दुख दारुण होइ ।।
प्रांण जांन कौं कण्ठ रहत लगि, ज्यौं अंकुर मुख तोइ ।
'वृन्दावन प्रभु' विरह न जानैं, जामैं वीतै सोइ ।।५९।।

हाय मैंनु छोडि गया महबूब ।
भौंह कमान दृग बाण अमा, घायल करि गया खूब ।।
घूंघर वाली जुलफैं मैंनूं मैंडा, वांधि कुलफ कीती काम ।
'वृन्दावन प्रभु' प्रेम दी डौरी, लाम गया बे काम ।।६०।।

कोई मैंनूं कान्ह बतावो नी सैयै ?,
घायल करि गया नी वन विचु ।
उस सूरति नूं बन वन ढूण्ढा, चित चौर मैंडा दये नी दये ।।
विरह दिवानी हुई उस कारन, किस मिस घर विच जये ।
'वृन्दावन प्रभु' बिन कछु नहीं भांवदा,
विरह आंच तन तये की कये ।।६१।।

राग नट नाइकी

आली मेरो लैगयो हरि कैं प्रान, सुन्दर श्याम सुजान ।
गृह वन वीथी ढूण्ढत डौलों, मारि गयो दृग वान ।।
घाइल भई सु मार दई हौं, बनत उपाय न आन ।
'वृन्दावन प्रभु' कौं बिनु देखैं, भांवत खान न पान ।।६२।।

राग गौरी सोरठा

हेली वह चित लैगयो चौरि ।
तैं इक दिन जो छैल गैल में, मोहिं दिखोयो निहोरि ।।हेली

एक दिनां पुनि मोहिं अचानक, मिल्यौ सांकरी खौरि ।
मन्द मुसकि मोचिवुक पकरि मुख, कियौ आप तन मौरि ।।
हौं सकुचनि नीचौ चाहौं, रह्यो नैंन नैंन सो जोरि ।
पुनि तौ देखत रूप माधुरी, वंधी प्रेम की डोरी ।।हेली
कहा कहौं वा मुख की शोभा, वारौं सुधानिधि कोरि ।
लाल पाग पर मोर चन्द्रिका, वंक अलक दई छोरि ।।हेली
नैंन कोक नद मोद भरे मो, अंखियां लीनी भोरि ।
रही न रोकी रूप पियासी, चली साथ ही दोरि ।।हेली
अब न लगै जिय कित हू मेरौ मारत मैंन मरोरि ।
जानत बूझत मेरी माई, लीनौं दु:ख बटौरि ।।हेली
तन तो परचौ सोच सागर मैं, उठत अनेक हिलोरि ।
महा कठिन है लगनि प्रेम की, सरवस लेत ढंढोरि ।।हेली
मैं कुल कानि बहुत डर कीनौं, मन मिल्यौ मैंड को तोरि ।
'वृन्दावन प्रभु' रसिक शिरोमणि, लई आप रस बोरि ।।६३।।

राग विहागरौ

हेली हरि हरि लै गयो प्रान, मेरो चित न धरत कहुँ चैन ।
विकल भई ढूंढत द्रुम, वेली कोऊ बतावै कान्ह ।।
एक दिनां इहिं डगर वगर में, कहूँ तैं कीनौं आवन ।
ता दिन तैं मोमन मटुकी मैं, दै गयो नेह जु जावन ।।हे०
सिर चीरा हीरा हिय दमकत, अरु वीरा भरैं गाल ।
मंद मंद व्रजचन्द आवहीं, मद गयन्द की चाल ।।हे०
रतन पेच पर सुन्हैरी तुर्रा, तापर शिखी शिखण्ड ।
घन पर मनौं दामिनी-दामिनी, पर सुरपति चाप अखंड ।।हे०
नौक लसत मोतीक विगोती तिहिं, जोती कछु वरनि न जाई ।
मनहुँ चन्द अरविन्द कली कैं, रहचौ मकरन्द लुभाई ।।हे०

अमल कमल दल नैंन मैंन सर, भौंह भंवर तति चांप ।
जब ते वै लागे अनुरागे, हिय मो ह्वै गयो कांप ।।हे०
झलमलात सखि ? लाल झगा में, नील मनी सम अग ।
मनहुँ सरसुती धार–धार, धसि राजत जमुन तरंग ।।हे०
हार विराजत उर गज मोतिन, अरु मनिकुण्डल श्रौंन ।
कटि पै पटु चटकीलौ सोहत, मोहत लखि नहिं कौन ।।हे०
रतन जटित पहुँची मोतिन, लर लपटि रही दुहुँ पांनि ।
मनों इन्दीवर तर लपटानौं, विमल नखत गृह आनि ।।हे०
हाथ लियें बहुरंग नवलासी मृदु, हांसी फांसी मनु प्रेम ।
देखत ही उह मदन मोहन छवि, छूटि जात सब नेम ।।हे०
वैजन्ती माला बनमाला, पहिरें सकल सुख ऐंन ।
'वृन्दावन प्रभु' इहिं बांनिक सों, बसि रह्यो मेरे नैंन ।।६४।।

राग गौरी

हेली मन तो परवस ह्वै गयो कहुँ लगै न तन कौ ।
नैंननि कौं चसक्यौ परच्यौ कल परै न छिन कौ ।।
जिय तो लौह भयो फिरै मन चुम्बक संगी ।
डारि दई भुरकी कछू पढि ललित तृभंगी ।।
बनि ठनि सुन्दर सांवरौ मोहि देत दिखाई ।
लाज काज घर कौ सवै तनकौ न सुहाई ।।
मोहिं देखि मृदुमुसुकि कैं कर कमल फिरावै ।
धुरपद अति ही लगनि के मधुरे सुर गावै ।।
तव तन सुधि न रहै कछू विहवल ह्वै जाई ।
कहा करौं कासौं कहूँ विधि कठिन बनाई ।।
मोहि करि राखैं द्वैज कौ तव चन्द जु नारी ।
अंगुरि पसारि पसारि कहै इह कान्हर प्यारी ।।

यौं ब्रज मैं कन-कन भई झूंठी ई बातनि ।
लोग चवाई नगर कौं करि पातनि-पातनि ।।
मैं कुल कांनि निगोडी आगैं कबहुं न देख्यौ निहारि ।
मिलन होय किहिं विधि कहौ संग दुरजन धारि ।।
तोहि पूछौं हौं कहा करों बनि ऐसी आई ।
'वृन्दावन प्रभु' सौं एकबेर तू मोहिं मिलाई ।।६५।।

राग गौडविलावल

मो दृग लगे नन्दलाल सों,
ननदी हौं अटकी नैंन विशाल सौं, ननदी ।
इन्द्र नील इन्दीवर घन छवि, छीनत श्याम शरीर री ।
भौंह चाप सर कुंकुम टीकौ, नासा राजत कीर री ।।न०
अचर बिंब मृदु हास चन्द्रिका, दशन सिषिरि मनि पांति री ।
चारु चिवुक अम्ब फल वादी, ग्रीव कम्बु मणि कान्ति री ।।न०
वदन शरद शशि अद्भुत देख्यौ, लियें इतौ परिवार री ।
ऊग्यौ रहत द्यौस निशि व्रज में, वरसि अमी रस धार री ।।न०
उर मर्कत मणि लसत कपाटी, वाहु मदन करि शुण्डरी ।
रोमाली ब्याली रच्छक मनौं, नाभि अमृत कौ कुण्डरी ।।न०
कटि अति छीन मृगेश हु कीतैं, जंघ सुरत रण थंभ री ।
पिंडुरीं मन्मथ तूण चरणयुग, अमल कमल सौरम्भ री ।।न०
नखर सखर दश पद्म राग से, पदतल ईंगुर रंग री ।
देखत ही उह मोहन मूरति, होत सकल दुख भग री ।।न०
पीत पाग रही वाम भाग धुकि, तापर शिखी शिखण्ड री ।
मानहुँ मेरु शृङ्ग पर ऊग्यौ, मघवा धनुक् अखण्ड री ।।न०
रतन पेच मणि कुण्डल राजत, छाजत उपम अनूप री ।
मनु उडुगण सेवत मुख चन्द हिं, जानि आपनों भूप री ।।न०

बेसरि प्रिया प्रेम वसि पहिरैं, अटकत जलज सुढार री ।
वदन कंज मकरन्द हिं मानौं, लेत शुक्र सुकुमार री ।।न०
आसावरी लाल को वागो, बन्यौं रह्यौ लगि अंग री ।
तन द्दुति वसन मिली अति अद्भुत, छवि को उठत तरंग री ।।न०
कण्ठ लसत गज मोतिन कण्ठा, तामधि धुक धुकि हार री ।
मनहुँ नील गिरि चहुँ दिशि गंगा, बैठ्यो दिन कर तीर री ।।न०
उर विशाल मनि माल रही फबि, छवि कछु वरनिन जाय री ।
मनु तमाल पर मदन मुनैंया, बैठी पांति बनाय री ।।न०
बाजू बन्द पहुँची मुंदरी कर,-कमल रही छवि छाजि री ।
मनु तमाल शाखा पल्लव जुत, फरि रही अधिक विराजि री ।।न.
पटुका बांधैं हर्यौ ऐंज दी, उपमा कहत सकात री ।
मनहुँ कलप तरुवर मधिलपटी, माधुरी लता सुजात री ।।न०
कटि किंकिनि ठन ठनन करत, रव लागत श्रवन रसाल री ।
करत करोल तमाल छांय तर, मनु हंसन के बाल री ।।न०
झनन झनन नूपुर धुनि पाइन, उपमा कहत विचित्र री ।
मानहुँ मदन मत्त गज शृङ्खल, बाजत चलत सुचित्र री ।।न०
कबहू मुरली लैजु बजावत, गावत रिषि सुर साधि री ।
तांन मूर्च्छना श्रुति सुनि सब की, जात श्रवन मन ब्याधि री ।।न.
मोहन खग मृग द्रुम वेली सब, नरनारिन कहा बात री ।
थावर जंगम जात ह्वै अरु, जंगम थिर ह्वै जात री ।। न०
श्रवन मयी सब देह होत तब, और न वृत्ति रहाय री ।
नाद ब्रह्म में सब जग दीशै, शिव समाधि टरि जाय री ।।न०
मद गज गति बलवीर धीर अति, लटकि चलत मुसुकाई री ।
तन-मन सुधि हरि लेत देह तब, नैंन मई ह्वै जाइ री ।।न०
सुरी किन्नरी नरी विश्व (तिहुँपुर) में, कोहै ऐसी नारि री ।
रहै आपनौं पन पतिव्रत लियें, एक ही अंग निहारी री ।।न०

यौं ब्रज मैं कन-कन भई झूंठी ई बातनि ।
लोग चवाई नगर कौं करि पातनि-पातनि ।।
मैं कुल कांनि निगोडी आगैं कबहुं न देख्यौ निहारि ।
मिलन होय किहिं विधि कहौ संग दुरजन धारि ।।
तोहि पूछौं हौं कहा करों बनि ऐसी आई ।
'वृन्दावन प्रभु' सौं एकबेर तू मोहिं मिलाई ।।६५।।

राग गौडविलावल

मो दृग लगे नन्दलाल सों,
ननदी हौं अटकी नैंन विशाल सौं, ननदी ।
इन्द्र नील इन्दीवर घन छवि, छीनत श्याम शरीर री ।
भौंह चाप सर कुंकुम टीकौ, नासा राजत कीर री ।।न०
अचर बिंब मृदु हास चन्द्रिका, दशन सिषिरि मनि पांति री ।
चारु चिवुक अम्व फल वादी, ग्रीव कम्बु मणि कान्ति री ।।न०
वदन शरद शशि अद्भुत देख्यौ, लियें इतौ परिवार री ।
ऊग्यौ रहत द्यौस निशि ब्रज में, वरसि अमी रस धार री ।।न०
उर मर्कत मणि लसत कपाटी, वाहु मदन करि शुण्डरी ।
रोमाली ब्याली रच्छक मनौं, नाभि अमृत कौ कुण्डरी ।।न०
कटि अति छीन मृगेश हु कीतैं, जंघ सुरत रण थंभ री ।
पिंडुरीं मन्मथ तूण चरणयुग, अमल कमल सौरम्भ री ।।न०
नखर सखर दश पद्म राग से, पदतल ईंगुर रंग री ।
देखत ही उह मोहन मूरति, होत सकल दुख भग री ।।न०
पीत पाग रही वाम भाग धुकि, तापर शिखी शिखण्ड री ।
मानहुँ मेरु शृङ्ग पर ऊग्यौ, मघवा धनुक् अखण्ड री ।।न०
रतन पेच मणि कुण्डल राजत, छाजत उपम अनूप री ।
मनु उडुगण सेवत मुख चन्द हिं, जानि आपनों भूप री ।।न०

बेसरि प्रिया प्रेम वसि पहिरैं, अटकत जलज सुढार री ।
वदन कंज मकरन्द हिं मानौं, लेत शुक्र सुकुमार री ।।न०
आसावरी लाल को वागो, बन्यौं रह्यौ लगि अंग री ।
तन दुति वसन मिली अति अद्भुत, छवि को उठत तरंग री ।।न०
कण्ठ लसत गज मोतिन कण्ठा, तामधि धुक धुकि हार री ।
मनहुँ नील गिरि चहुँ दिशि गंगा, बैठ्यो दिन कर तीर री ।।न०
उर विशाल मनि माल रही फब्बि, छवि कछु वरनिन जाय री ।
मनु तमाल पर मदन मुनैंया, बैठी पांति बनाय री ।।न०
बाजू बन्द पहुँची मुंदरी कर,-कमल रही छवि छाजि री ।
मनु तमाल शाखा पल्लव जुत, फरि रही अधिक विराजि री ।।न.
पटुका बांधैं हरचौ ऐंज दी, उपमा कहत सकात री ।
मनहुँ कलप तरुवर मधिलपटी, माधुरी लता सुजात री ।।न०
कटि किंकिनि ठन ठनन करत, रव लागत श्रवन रसाल री ।
करत करोल तमाल छांय तर, मनु हंसन के बाल री ।।न०
झनन झनन नूपुर धुनि पाइन, उपमा कहत विचित्र री ।
मानहुँ मदन मत्त गज शृङ्खल, बाजत चलत सुचित्र री ।।न०
कबहू मुरली लैजु बजावत, गावत रिषि सुर साधि री ।
तांन मूर्च्छना श्रुति सुनि सब की, जात श्रवन मन ब्याधि री ।।न.
मोहन खग मृग द्रुम वेली सब, नरनारिन कहा बात री ।
थावर जंगम जात ह्वै अरु, जंगम थिर ह्वै जात री ।। न०
श्रवन मयी सब देह होत तब, और न वृत्ति रहाय री ।
नाद ब्रह्म में सब जग दीशै, शिव समाधि टरि जाय री ।।न०
मद गज गति बलवीर धीर अति, लटकि चलत मुसुकाई री ।
तन-मन सुधि हरि लेत देह तब, नैंन मई ह्वै जाइ री ।।न०
सुरी किन्नरी नरी विश्व (तिहुँपुर) में, कोहै ऐसी नारि री ।
रहै आपनौं पन पतिव्रत लियें, एक ही अंग निहारी री ।।न०

हौं तो अँग-अँग छवि तरंग में, भई भँवर की नाव री ।
'वृन्दावन प्रभु' देखे हिं जीवूं, और न कछू उपाव री ।।६६।।

राग सोरठ कालिंगड़ा

हेली हरि मुख नलिन हिले मधुकर,
दृग तनक धरत नहीं धीर ।
इत उत चाहि चपल रस लोभी, रहत न जात चले वाही ढिग ।।
परम रूप मकरन्द लुभानैं, छुवत सुमन नहीं आन ।
'वृन्दावन' दिन रैंन प्रफुल्लित, भांन किरन वृषभान ।।६७।।

छली उहिं छैल छबीलै कन्हाई, मेरी माई ।
डारि दई भुर की हंसि हेरि कैं, हेली री ताते न और सुहाई ।।
एक दिना मेरौ नांव लै लै मुरली, मधुरैं सुर ऐसी बजाई ।
ता दिन ते मोहिं भूख न प्यास सु, श्यामहिं श्याम लगी वकवाई ।।
जागैं न चैंन सोयें दिन रैंन, वढै तन मैंन की पीर सवाई ।
बरजैं तरजैं कहैं बौरी भई इह, मात-पिता पति बन्धुर भाई ।।
मैं तो लई धरि शीश सबै सु, करौं कहा ईश जु ऐसी बनाई ।
कहो लख बात तजी नहिं जात,
सु 'वृन्दावन प्रभु' प्रेम सगाई ।।६८।।

राग वसन्त सारंग

महा कठिन इह प्रेम सगाई, याकी है माई अकथ कथाई ।
छिन इक विछुरैं कोटि दहन की दाह,
होत है पुनि मिलै कोटि शशि की सीराई ।
निशिदिन सूखति गुरुजन डर सब भूलति,
पिय जब देत दिखाई ।
'वृन्दावन प्रभु' नेही की गति,
दूरि धरैं शिर तिन हीं कछु पाई ।।६९।।

राग पूर्वी

नेह निगोड़े को पैंडो ही न्यारौ ।
जो कोई होय कैं आंधौ चलै,
सुल है प्रिय वस्तु चहूँघा उजारौ ।।
सो तो इतै उत भूल्यौ फिरै न,
लहै कछु जो कोउ होय अंख्यारौ ।
'वृन्दावन' सोई याको पथिक है,
जापैं कृपा करैं कान्हर कारौ ।।७०।।

राग बिलावल

कठिन लगनि है नेह की वीतै सोही जानैं ।
मोमैं वीतति जो दशा काहि कहौं को मानैं ।।
सजनी छिन विछुरैं जुग कोटि की जानौं हौं दुखिया ।
बहुरि मिलैं पल एकही मोसी नहिं सुखिया ।।
दृग चाहैं देख्यौ करैं उह सुन्दर मूरति ।
दुरजन डर कछु ना बनैं मन मांझ विसूरति ।।
तन तरसत पिय परस कौं दूभर दरशन ही ।
साथ फिरै मनमथ बली कर सांधैं धुन ही ।।
तनि-तनि मारत पंच वान घायल करि डारै ।
उहि समय मदन गुपाल बिना कहि कौन उबारै ।।
वीथी मैं सुनि वचन भन भनक भगि जाऊं झरोखैं ।
सासु ननद कन सुवनि लागि रहैं आयजु मोखैं ।।
द्वै चुम्वन विच लीह ज्यौं चित ह्वैजु रहै ई ।
उत देखन अखरै इत डरनि दहै ई ।।
तब मूर्छित ह्वै जाऊं प्रान परैं संकट माहीं ।
मारैं कुवचन वान सवै गुरुजनन दया नाहीं ।।

यौं दिन भरियें कौन भांति सोचन जिय सूकै ।
'वृन्दावन प्रभु' श्याम बिना को सुनैं अब कूकै ।।७१।।

राग चैती-गौरी

मोहि लई उहिं नन्द किशोर, मो मन चुभी दृगन की कोर ।
तव तैं कछू सुहात न मोकौं, सांच कहौं सजनी हौं तोकौं ।।
जब उह सुन्दर मूरति देखौं, तब अपनौं जीवन फल लेखौं ।
पलक हूँ ओट होत जब न्यारी, तब की कहियें कहा विथारी ।।
गुरुजन लाज काज गृह करिये, बाहिर दुरजन ते अति डरिये ।
नेही सम दुखिया नहीं कोऊ, सुखिया ऊ न मिबैं जब दौऊ ।।
'वृन्दावन प्रभु' प्रान पियारौ,
मिलै तब ही मो होय उबारौ ।।७२।।

राग कनडी

इन सोचन लोचन होत सँवारौ ।
को मिलवैं कब कौं नव भांति मिलै, मनमोहन प्रान पियारौ ।।
अशन वसन तन धन जीवन सब,
बा बिन लागत आकसौ खारौ ।
'वृन्दावन प्रभु' जीजैं कौन विधि,
पैंड़ैं परचौ विरहा बजमारौ ।।७३।।

आंखिन पांखि दई न दई किन ।
प्रीतम वदन नलिन मकरन्द हिं मधुप,
ज्यौं पी-पी आवति प्रतिदिन ।।
क्यौं हूँ चैन परै दिन रैंन सु मैंन,
दहै तन कौं छिन हीं छिन ।
'वृन्दावन प्रभु' विरह कसाई,
मोहि करी जकरी बकरी इन ।।७४।।

इन नैंननि बेचि दयो मन मेरो ।
रूप अनूप लुभाइ लालची, नैकु करयौ नहीं झेरौ ।।
इहू उत जाय पाय सुख सारथी, भयौ जनम लौं चेरौ ।
प्रीति पुरातन जानि तनक हू, मौतन कियौ न फेरौ ।।
मोहि अकेली जांनि आंमि कैं, मदन कियौ है घेरौ ।
'वृन्दावन प्रभु' बिन अब निकसन कौं, कहूँ न पै इतु सेरौ ।।७५।।

राग पूरिया

इन नैंन निगोडनि गौंडि लई हौं ।
मोहि वीच को कियें ये मारत, आप पगे मनमोहन पीसौं ।।
ये सुख-दुख सहैं देखैं अन देखैं, रूप लालची जानि आपनी गौं ।
'वृन्दावन प्रभु' कौं रहसि मिलैं,
विनु चैन नही कबहू मो जी कौं ।।७६।।

देखो मन सा की कुटिलाई ।
मैं दूती करि पठई अ पुही, रही लुभाय नहिं आई ।।
हौं देखत मग इक टक लागी, पगी लाल कछु न सुहाई ।
'वृन्दावन प्रभु' कहिये कौंन सों, जनम की हितू भई दुखदाई ।।७७

ह्वै गयो छिन मैं तन जु परायो ।
मोहिं बेचि पर हाथ अनाथ लौं,
साथ फिरत आपु ही अब धायो ।।
सदा संग ही रहत मित्र हो,
तनक तरस याकौं नहिं आयो ।
'वृन्दावन' अब कोउ न काहू को,
सुख पायो जब निज जिय भायो ।।७८।।

राग धनाश्री

आली मेरे नैंननि को तारो, प्यारौ कैसे भयो भावतु है न्यारौ।
जबलौं देखौं हौं उह मूरति, तब दशहूँ दिशि होत उज्यारौ ।।
पलक ओट भये कछु नहिं सूझत, तब सबही जग होत अन्ध्यारौ।
'वृन्दावन प्रभु' मनि बिनु अहिलौं,
फिरत अंध भयो प्रान विचारौ ।।७९।।

राग रामकली

महा कठिन कहा कीजिये, क्यौंहूँ रह्यौ न जाई।
मन उरझें सुरझै नहीं, तन तनन मिलाई ।।
इह गति भई थल मीन की, तलफैं अकुलाई ।
जल दरशै नहिं परस कौं, कछु बनैं न उपाई ।।
प्रेम तृषा त्यौं त्यौं बढै, रुचि नित अधिकाई ।
ज्यौं निरजुर षट मधुर कौं, निशिदिन तरसाई ।।
पलक कलप सम बीतई, अरु कछु न सुहाई ।
'वृन्दावन प्रभु' इह व्यथा, कहौं काहि सुनाई ।।८०।।

प्रेम की मरोरनि मसोसै मन मारिये ।
दृगनिकै साथ ह्वै विकानौं पर हाथ इह दीजै,
काहि दोष कहो कौन पैं पुकारिये ।
भूल्यौ धन धाम अब कहां घनश्याम,
आली विना काम देह यौं वियोगि आगि जारिये ।
'वृन्दावन प्रभु' कहूँ नैंकहू निहारिये सु,
तन-मन-धन प्रान वारि-वारि डारिये ।।८१।।

जब-जब सुधि आवति उह मूरति,
तब-तब सुधि भूलति सबही की ।
सुनि–सुनि श्रवन गुन देखन की,
लालसा लागि रही ही कबही की ।।

नख-शिख तै सोहनी देखी मोहनी,
रूप धरैं बंशी चितु जब ही की ।
'वृन्दावन प्रभु' अब फेरि मिलैं,
जो तपति मिटैगी तब ही की ।।८२।।

राग जैतश्री

अहो पिय कैसैं मिलन हौं आऊं, बिन मिलैं अति अकुलाऊं ।
घर गुरुजन बाहर दुरजन, भै देखन हू नहि पाऊं ।।
दौरी फिरत तकति वौरी लौं लगी, ढौरि तिहारे गुन गाऊं ।
'वृन्दावन प्रभु' मनकी वेदनि, तुम बिन काहि सुनाऊं ।।८३।।

राग काफी मधुपुरी

आंखिन क्यौंहूँ रहै हटकी री आली ।
परीं रसकैं चसकैं अब श्याम, सुरूप अनूप सुधा गटकी ।।
भीर हू भेदि कैं भाजि मिलैं, हठि लाज की पाज सवै पटकी ।
जीव की जीवनि प्रान को प्रान, उजागर नागर सौं अटकी ।।
पल हू न परै कल देखैं बिना, फिरैं बावरि ज्यौं दुखिया भटकी ।
'वृन्दावन प्रभु' वेगि दरश दीजे, मो पर काम करी कटकी ।।८४

राग वीरटोडो

वृषभानु जू नन्द जू न्यौंते सुनैं,
किये श्यामा शिंगार बनाइ के सोलैं ।
मन भांवन आंवन को जु उछाव,
सु आनंद मैं उमँगी अति लोलैं ।।
छिन आंगन मैं छिन छाति चढै,
छिन जाय झरोषै किंवारि ये खोलै ।
उतहू अति आनन्द है हरि के,
मनौं नैंन तुला धरि प्रेम हीं तौलै ।।

तयो सोनौं सो आंगु दिये मुख,

सौगुनौ कोइल सी कुहुकै जब बोलै ।

'वृन्दावन प्रभु' व्रजचन्द हिं देखन,

चन्द मनौं चपला चढ्यौ डोलै ।।८५।।

राग गौड सारंग

आज नवल महल उज्ज्वल पर, छवि सौं चढि ठाडी मृगनैंनी ।
मानहुं शरद सघन घन ऊपर, सौदामिनि दमकति सुख दैंनी ।।
नील वरन सारी तन गौरैं, जामधि झलकति सुन्दर वैंनी ।
मानहुँ दुरि रही श्याम घटा, तर मेरु संधि अलि सैंनी ।।
देखति उझकि-उझकि प्रीतम, तन वेधि कटाछिन पैंनी ।
'वृन्दावन प्रभु' कैं मनभामिन, वसी रहति दिन रैंनी ।।८६।।

राग सारंग

आठौं जाम बीतत हैं द्यौस ही,

गनत अज हूँ न आये मन भाये लालन ।

सुधिऊ न लई दई भई कछु चूक,

मोतैं किधौं बे रसिक कहुं पगेहैं अनत ।

पहिलैं उरझाय मन अब सुरझायो चाहौं,

घुरी रोम-रोम गांठि कछू न वनत ।

'वृन्दावन प्रभु वेतो बहु नाइक हैं,

करत कछु और कछु और ही भरत ।।८७।।

राग ललित

न्हाय आई भई ठाडी प्यारी तिहारी,

देखो बिहारी कछु छवि तरंग न्यारी है ।

हरन दुष्ट द्वन्द सुन्दर मुखारविन्द,

मंद हंसति जात लाल तन सारी है ।।

छूटि रहे वार सैंवार हू तैं सुकुमार,
मानौं मार जार पंगति पसारि है ।
'वृन्दावन प्रभु' दृग मीन फँसे तहां,
जाइ ऐसौ हौस नाइक मदन सिकारी है ।।८८।।

राग श्रीकंठ

सुकुमार सिंवार से मर्कत तार से,
कज्जल सार से वारनि-वारि सुकावति बाला ।
मार के जार सिंगार के चौंर से,
ऐडी छियैं पुनि ऐसैं विसाला ।।
श्याम घटा ते मनौं निकसें,
मुखचन्द दिपैं तन दामिनि माला ।
वृन्दावन प्रभु' ओट भये,
लखि पांनि पै रीझन नँद के लाला ।।८९।।

राग मारवौ

सीसफूल शीशराजै विराजै मुख लौंनो,
तिहुँ पुर मैं ऐसौ नहीं होनौं ।
मोतिन की झालरि सौं छत्र माथैं धरैं,
मानौं बेठ्यौ उडुराज महाराज सुठौनौं ।।
अलक रलक मानौं दुहुँ दिशि चौंर होत,
दृग जुग श्याम विन्द मृग छौनौं ।
तिलक सर कुटिल भौंहैं लीनैं कर धनुक धौहैं,
'वृन्दावन' होत सौंहै डारत पढि टौनौं ।।९०।।

राग गुजरी

आजु भलैं बानिक बनी पियारी ।
लहँगा लाल कसूंभी अँगिया, रुपहरी कोर केसरी सारी ।।

अंग-अंग नग भूषन भूषित, अरु राजत उर मोती हरारी ।
नानाफूल पल्लव जुत मानौं, फरी मूल ते कनक लतारी ।।
सारी किनारी बीच वदन की, उपमा कहूँ निहारी ।
मानौं रस वरषा कौ सूचक, भयो विधु मंडल सुखद महारी ।।
इत ऊत उमँगी फिरत उछाह में, मनौं कौंधनी चपलारी ।
'वृन्दावन प्रभु' निरखि-निरखि छवि, विवस भये गिरिधारी ।।९१

राग मालकोष पद

प्रान पियारी मुख कंज लाग्यौ रूप सरोवर ।
हरिमन मधुकर सुरति लगायें, प्रभवत रहत वाहि-वाही पर ।
गुरुजन भीति निश सकुच्यांई रहत अति,
मुकुलित होत देखि-देखि पिय दिनकर ।
'वृन्दावन' जाकौ शोभा मकरन्द गन्ध,
फैलि रह्यौ दशौं दिशि घर-घर ।।९२।।

देखो-देखो लाल छवि लाडिली अनूप की ।
छूटि रही लटा मानों दामिनी की छटा,
अटा पर ऊन ईशु मानों घटा रूप की ।
बरसत सरस त्यौंही त्यौंहि सरसत,
ललित लता नवीन पञ्च सर भूप की ।
'वृन्दावन प्रभु' चष चातकनि देत मोद,
रची विधि हरन हारि विरह दुख धूप की ।।९३।।

राग देवगंधार

देखो अचरज कनकलता चल, तापर पूरन चन्द ।
नील नलिन तापर द्वै राजत, तिनपर दोय मिलिन्द ।।
नीचै चम्पकली इक सोहति, तातर बिम्बी दोय ।
तिन मधि दमकति बीज दाडिमी, तरैं अम्ब फल जोय ।।

तातर द्वै लागति अति नीके, अरुन जु नलिन सनाल ।
तिन मधि द्वै श्रीफल भल दीसत, तिनतर वेलि सिवाल ।।
ताकै मूल अलौकिक वापी, बँधी कनक सोपान ।
तातर द्वै कदली द्वैं तिनतर, कनक केतकी कली समान ।।
तिनतर द्वै पुनि कमल अधोमुख, तिन दल पर दश इन्द ।
'वृन्दावन प्रभु' वनमाली, जिहिं रस सींचत गोविन्द ।।९४।।

राग नाइकी कान्हरा

ननद जिठानी कैं साथ ह्वै दीठि, नवोढा सु सैंन कैं ऐंन धसी।
आवत देखि कन्हाई कौं माई, डरी जू खरी तहां ते सुनसी ।।
लालन दौरि गही लइ अंक में, सोनैं ज्यौं काम कसोटी कसी ।
मानहुँ दौरि गही चपला घन, यौं घनश्याम कैं हियैं लसीं ।।
रोइ रिसाइ रही चुप ह्वै, अकुलाइ डरी पुनि देखि हंसी ।
'वृन्दावन प्रभु' नैंन अमी किल, किंचित सिंचित चित्त वसी ।।९५

राग दरबारी कान्हरा

जतन-जतन क्यौं हूँ ल्याई हौं आई प्यारी,
पाऊं जो वचन देहूँ तब ही चहन ।
कहति हौं हाहा खाइ लेति हौं बलाइ लाल,
छुवो जिन याहि देहु बैठी ये रहन ।।
रही भौंन कौंन दुरि दामिनी सी दीन ह्वै,
कैं लागी जलधार दुहुँ नैंननि वहन ।
ढकैं भुज बीच कुच रही कर गही नीवी,
देखिकैं दशा मोहिं बीत्यौ है गहन ।।
आतुर न होहु मधुसूदन रसिकवर मालती,
लता सी लागी अब ही लह लहन ।
'वृन्दावन प्रभु' चतुर विचारि देखौ,
मींडि मुरझाये रस पैहौउ इहन ।।९६।।

राग कान्हरो

तेरी छवि देखि छके पिय नैंना ।
घूमत झुकत झिमकत झपकत, लाल-लाल भये दिन रैंना ।।
मानत-न काहू कांनि लगी टगी तोहीं सौं,
फिरतन क्यौं हूँ प्यारी सुखदैनां ।
'वृन्दावन प्रभु' की उह शोभा,
निरखत थकित ह्वै रहत दोऊ रति मैंना ।।९७।।

तेरो अधर अद्‌भुत सुधाधर, करि-करि पान लाल भये हैं अमर ।
जाके दरश ही जीवत, समर जो जारचौ हर ।।
याही तैं वह दीनौं सुरनि, कौं मथि अपनें कर ।
वृन्दावन प्रभु' याही सौं रुचि मानी, जानि सब रस कौ भर ।।९८

राग श्यामकल्याण

आजु मिले कहुं लालन बाल सौं, डोलति फूली निहाल भई सी ।
झरोखनि मोखनि ही रहती लगि, देखन कैं बलि बौरि थई सी ।।
या लाज कैं ऊपर गाज परौ नित, जात ही काम की ताप तई सी ।
वृन्दावन प्रभु' अँग संग भलैं भयो,
सो तेरी लागत आजु गई सी ।।९९।।

।। इति श्रीगीतामृत गंगा कैशोर लीला वर्णन घाट चतुर्थः ।।

अथ पंचम घाट

दोहा—

अब श्रीयुगलकिशोर को, वरनत रास विलास ।
याही में सब रसनिकौ, दीसत प्रकट प्रकाश ।।१।।

राग पूरिया

कैसी रैंनि उज्यारी छाई, लगत सबनि मन भाई ।
अनुपम छवि लखि रास करन कौं, मन भयो कुंवर कन्हाई ।।
देखौ शरद प्रफुल्लित मल्ली, बल्ली और सुहाई ।
'वृन्दावन प्रभु' अघटित घटना, निपुन शक्ति है मांई ।।२।।

मोहन रास रच्यौ वंशीवट, सुनियत तत थेई-थेई-थेई-थेई रट ।
मुरली करषी ब्रजती हरखी, सुरखी न रही गृहते निकसी झट ।।
इकसार लगी हियमार की मार, सु हारन वार संभार रही पट ।
जाइ मिली सु हिली चपला सी,
खिली ढिग श्यामघटा नटकैं घट ।।
वरष्यौ चहुँ कोद सु मोद तहां,
घुरवासी रही छुटिकैं अलकैं लट ।
'वृन्दावन प्रभु' पीय प्रियान कैं,
प्रेम लता सुफरी चित कैं नट ।।३।।

राग पञ्चम

हरि नाचत गोप वधू मधि, मंडल कुण्डल लोल कपोलनि में ।
उघटैं गति भेद अनेक-अनेक, सु मोहन हैं मन बोलनि में ।।
सुन्दरताई कहां लैं कहौं, उपमा नहिं आवति तोलनि में ।
नैंननि वही रस सा भये, डोलत 'वृन्दावन प्रभु' ढोलनि में ।।४।।

राग कनड़ी

नागरी नागर मण्डल रास में, लेत दोऊ गति भेद नि भारी ।
तत्त किटि थौं किटि तकि थौं-थौं, उघटत मोहन नाचत प्यारी ।।
तक कुक नगतकि किकि धिथ्था,
　　　　उघटैं विहारनि नाचै विहारी ।
धिधिकट धिक्कट धिद्धिधिधी,
　　　　बाजै मृदङ्ग हू में गति न्यारी ।।
झिझि-झिझि रिमिझिमि रुणझण,
　　　　नन–नन नूपुर झणकारी ।
'वृन्दावन प्रभु' रीझि प्रिया–प्रिय,
　　　　कहत हरषि वारौं हौं वारी ।।५।।

कैसे री दोऊ रास में नाचत नीके। देखोरी दोऊ. । लागैंरी दोऊ.
उरप तिरप गति लेत होड परे,
　　　　चाहि चुरावत चित सबही के ।।
ता थुंगा–थुंगा तिथि तत थेई,
　　　　थेई उघटैं समूह सखी के ।
कुण्डल हलनि चलनि ग्रींवनि की,
　　　　निरख मदन रति लागत फीके ।
प्रिया वदन श्रमकन पौंछत पिय,
　　　　प्रिया पौंछत अंचर लै पी के ।
'वृन्दावन प्रभु' लाडिली लानन,
　　　　जीवनि रसिकन जी के ।।६।।

नाचत मोहन मण्डल महियां ।
जमुना पुलिन नलिन वन फूले,
　　　　मन्द पवन वंशीवट छहियां ।।

'वृन्दावन प्रभु' अद्भुत लीला,
तिहुँपुर मैं देखो नहिं कहियां ।।७।।

राग केदारौ

आजु रास रच्यौ वृन्दावन तरनि तनैया तीर ।
तैंसिय शरद रैंन उजियारी, तैंसेई विशद वसन पहिरें तन ।।
नाचत हीर मण्डल पर दोऊ, अँग-अँग फवि रहे फूलन भूषन ।
नृत्यत मानौ शशि मण्डल पैं, सौदामिनि कै संग सजल घन ।।
ताल मृदंग बजावत गावत, थेईथेई उघटि संगीत सखी जन ।
'वृन्दावन प्रभु' रीझि प्रिया प्रिय,
भरि-भरि लेत परस्पर अंकन ।।८।।

राग खट

रास मण्डल रच्यौ रसिक हरि राधिका,
तरनिजा तीर वानीर कुंजें ।
फूले जहां नीप नव वकुल कुल-कुल मालती,
माधुरी मृदुल अलि पुंज गुंजैं ।।
सुमन के गुच्छ अति सुच्छ चलवा तवल तरु,
मनौं चहुँदिशि चँवर करहीं ।
करतरव सारि शुक पिक सुनाना,
विहग नचत केकी मनहिं हरहीं ।।
त्रिगुन जहां पवन कौं गवन नित ही रहत,
बहत श्यामल तटनि चल तरंगा ।
विविध फूले कमल कोक कल हंस कुल,
करत कल कुणित जल विहंगा ।।

हेम मण्डल रचित खचित नाना रतन,
मनहुँ भू करन कुण्डल विराजै ।
वंश वीनादि मुहचंग मिरदंग वर सबनि,
मिलि मधुर धुनि एक बाजै ॥
नचत रस मगन वृषभानुजा गिरधरन,
वदन छवि देखि सुधि जाति रति मदन की ।
मुकुट की थर हरनि पीत पट फर हरनि,
तत्त थेई-थेई करनि हरनि सब कदन की ॥
दशन दमकनि हसनि लसनि अंग-अंग की,
अधर वर अरुन लखि उपम को है ।
दृग जलज चलनि ढिग कुटिल अलकनि,
झुलनि मनहुँ अलि कुलनि की पांति सोहै ॥
लाग अरु डाट पुनि उरप हुरमेंई,
तिरप एक ते एक गति लेति भारी ।
करत मिलि गान अति तांन वन्धान सौं,
परस्पर रीझि कहैं वारचौ वारी ॥
चारु उर हार वर रतन कुण्डल ललित,
हीर वर वीर श्रवननि सुहाई ।
नील पट पीत तन गौर श्यामल तन,
मनौं परस्पर घन औ दामिनि दुराई ॥
सखी चहुँ दिशि बनी कनक चम्पक तनी,
चन्द वनी इक एक तैं आगरी ।
नचत मंडल कियें चित्त दुहुँ तन दियें,
भूलि गई सकल अप अपनी सुधि नागरी ॥

रमत इहिं भांति नित रसिक शिरमौर दोऊ,
संग ललितादि लियें सुघर सुन्दरि अली ।
मनसि 'वृन्दावन' बसहु जीवनि धनां,
ब्रजराज सूनू वृषभान जू की लली ।।९।।

राग ईमन

कन्हैया नाचैरी, नाचैरी, नांचैरी गोपवधू मण्डल में ।
धिधि तां--धिधित्तां बाजै, मृदंग देखि कौन राचैरी ।।
देखौं सदा यह सुख 'वृन्दावन', जाचैरी जाचैरी जाचैरी ।।१०।।

रास में नांचै मोहन लाला ।
लाग डाट अरु उरप तिरप में, उछरति हे वनमाला ।।
तत्तरंग तक्किट किटि दिमि किटि तथुं,
गिटि तक दिगि तक थुंगादिमि-
दिमि किटि दिमिथो त्रुगड धां धिकि तकतथुं थुंग ध लंग,
तक धिधिगिन हस्तक भेद रसाला ।।
झेजएजग जिहि किटि थुंगा, क्कधिकिति उधटत हैं व्रजबाला ।
'वृन्दावन प्रभु' निरखि थकित भये,
शशि उडुगन ग्रह जाला ।।११।।

राग मालव

नाचत नागर नट वंशीवट जमुना तट,
ततथेई-थेई उघटत रामा अगनित री ।
मुकुट की लटक पटक दुहुँ पाइन की,
पोत पट चटक चाहि चिहुँटि रह्यो चित री ।।
मुख की मरक डढि अटकन मानि दृग,
गटक--गटक रूप पीवत अमीत री ।
'वृन्दावन प्रभु' मांन झटक--झटक लेत,
ठठकि रहत काम कटक सहत री ।।१२।।

राग कनडी

नांचै री दोउ बांहा जोरी ।
इत नन्दनन्दन रसिक लाडिलौ, उत वृषभानु किशोरी ।।
गौर श्याम भुज गहैं परस्पर, निरखि उपम उपजत मति मौरी ।
शोभा सर लाल नील कमल,
मनौं मिलें करत झकझोरा झोरी ।
मुकुट लटक पट चटक कटक कर,
चरण पटक मिरदंग वोरी ।
तत्त खिरिरिरि ता तननन नन,
सखी सुधरि उघटति चहुँ ओरी ।।
अलापत रागिनी राग तांन श्रुति,
लागि रही एकैं सुर डोरी ।
'वृन्दावन प्रभु' धुनि सुनि,
थिर चर मोह्यो जात न कोरी ।।१३।।

राग गारो, वा अरगजा

घनश्याम-२ घनश्याम प्यारा, नाचत ततथेई थेई-थेई भारा ।
तो सूरति पर ता तन नननन, तन मन धन वारा ।।
एहो प्रीतम बलि जाऊं बलि जाऊं,
नननननन हो नैंननिते न्यारा ।
'वृन्दावन प्रभु' वशि करि लीनी,
झांझन नननन नूपुर झनकारा ।।१४।।

राग बिहागरौ

रास रच्यौ वृन्दावन राधा, मोहन जमुना कूले जू ।
चैत चन्द सुख कन्द गुंज अलि, कुंज लता द्रुम फूले जू ।।

सीतल मंद सुगन्ध महावत, वहत पवन अनुकूलैं जू ।
ठौर-ठौर सुमननि के गुच्छा, छवि पावत अति भूले जू ।।
बाजत ताल मृदंग चंग वर, वंशीवट कै मूले जू ।
गावत नाचत मंडल कीयें, सजे सखिन के ढूले जू ।।
सुनि-सुनि धुनि अति मधुर मनोहर, शिव विरंचि सुधि भूले जू ।
'वृन्दावन प्रभु' कौ सुख निरखत, मिटत सकल तन शूलै जू ।। १५

राग भैरों

क्रीडत कालिंदी तट गोपिन संग लीनैं ।
सुन्दर विशाल नैंन सुरत रग भीनै,
मनौं मीन वाल उभय लोहित वपु कीनैं ।।
उरसि तिय नख प्रहार सोहत अति नीको ।
जाहि देखैं द्वैज चन्द लागत अति फीको ।।
औढ़ैं पट पीत वरन त्रिभुवन मन मोहैं ।
जैसे घन-माल मांझ दामिनि दुति सोहैं ।।
प्रफुल्लित बन शरद रैनि जमुन वहति धीरी ।
करि-करि निज करनि आप देत त्रियनि बीरी ।।
सुन्दर सब गोप नारि षटदश वैकेरी ।
जिनहिं देखैं अमर नारि लागति हैं चेरी ।।
केऊ सखी मिलि गान करत मुखतन केऊ हेरैं ।
केउ गटि कर कमल नाल प्रमुदित हैं फेरैं ।।
इहिं प्रकार करैं विहार 'वृन्दावन' महियां ।
हंसि-हंसि प्यारिन भेटि मेलत गर बहियां ।।१६।।

राग कान्हरौ द. वा. सा. वा. टोडी

नाचत अद्भुत गति भेदन गोपाल लाल, अरु ब्रज वाल ।
धुमां धुमक तिक धुम धुमक तिक धुम,
धुमक धिक अति विकट ताल ।।

ताथुं तकथुं तक तक धिक, तक धलांग तक थेई ।
'वृन्दावन प्रभु' गावत राग कान्हरौ,
सारंग वा टोडी श्रुति मूर्च्छना तान मान मिलेई ।।१७।।

राग वृन्दावनी काफी

बैठि तहां मिलि गांवन लागे ।
बीरी खाय खवाय परस्पर, तांन मांन सुनि अति अनुरागे ।।
मूर्छना रचनां श्रुति धरि भये, थिर जंगम थावर जागे ।
'वृन्दावन प्रभु' रीझि अपन पौ, भूलि गये दम्पति रस पागे ।।१८

।। इति श्रीगीतामृतगंगा रासक्रीड़ा वर्णन पञ्चम घाट ।।

❋ अथ षष्ट घाट ❋

दोहा

मान चरित सुनि लेहु अब, प्रेम कसौटी है जु ।
यामैं जानी परतु है, प्रिया पीय की पै जु ।।१।।

मांन कियो हरि सौं हरि प्यारी ।
रास विलास में पास कहूँ तिय,
और सौं पीय कीढीठि निहारी ।।
भौंन के कौंन में बैठि रही धरि,
मौंन उसासन लेत है भारी ।
भौंह मरोरि कैं त्यौंरिन फेरि,
वखेरि दये गहनैं अनखारी ।।
आली खरी बिलखांनी सी च्यांनी,
सुकीनी कहै ठकुरानी कहारि ।
'श्रीवृन्दावन प्रभु' दूति मनावन,
पठई रहै लगि कौरैं बिहारि ।।२।।

राग गारो

एरी निठुर बाल तोबिन लाल अनमनैं,
बैठे तैं इत मान अनोखो ठान्यौं।
चलि हठु तजि सजि अभरन अम्बर,
काहे करति सौतिन मन मान्यौ।।
शरद चन्द सुख कन्द मनोहर,
नाइक नन्दनंदन रस सान्यौं।
इहिं समैं 'वृन्दावन प्रभु' सौं जुदो,
ह्वैं वो याही मैं तेरो सयानप जान्यौं।।३।।

राग केदारौ

प्यारो तोही सौं प्यारे कौ प्रेम है परम।
तो हित विकल भये वै डोलत, तऊ न तू होति नरम।।
जिहिं इहिं भांति अपुन पौं दीनौं, तासौं रुखाई कौन है धरम।
सुनि-सुनि तेरो सुहाग भामिनो,
निशिदिन छेदि इत सौतिन परम।।
सब गुन पूरन रची विधि नारी,
पै न रच्यो काहू को तेरौ सौ करम।
चन्दमुखी ? चलि मिलि खिलिकैं,
हरैं किन 'वृन्दावनप्रभु' विरह घरम।।४।।

दूध को उफान ऐसो मान कीजे भामिनी।
वैठे कुंज भवन रमन गभन कीजै बीती,
जात बातन ही छोटी मधुयामिनी।
तो बिनु सलौंनी सब लागत अलौंनी,
जदपि निकट हैं अनेक शत कामिनी।
'वृन्दावन प्रभु' संग तूहीं यौं विराजति,
है जैसे हेम मानिक औ श्यामघन दामिनी।।५।।

राग विहागरौ

तुव सुख सदन वदन बिनु देखें, लालहिं अदन न सदन सुहात ।
मदन कदन अति देत बाबरी, रदन छदन रस क्यौं नहिं प्यावत ।।
कहा परी बांनि तोहि मानिनि? अब हित उपदेशन तो मन आवत।
नित उठि मान सयान कौंन इह, आप दुखी औरन दुख द्यावत ।।
वे निश दिन मुनि जन ज्यौं, ईशहिं तुव मूरति ही ध्यावत ।
'वृन्दावन प्रभु' गिरिधारी के, तू प्यारी औगुन हीं गावत ।।६।।

राग परज

ऐसी मन कबहूँ मति आनौं ।
मोकौं तजि पिय अनत पगे हैं, झूंठी सुनि-सुनि कानौं ।।
वे कबहूँ तुम सो नहिं दूजे, इत को इत ऊगो जो भानौं ।
तुम उनकी जीवनि वे तिहारी, तिहारी सौ निहचैं इह जानौं ।।
तिहारैं विरह विकल अति वेऊ, जैसैं होत देह बिना प्रानौं ।
'वृन्दावन प्रभु' सौं तजिये हठु, हौं तिहारी मेरौ कह्यौं मानौं ।।७

राग काफी

मन भावन सौं री दुराव न कीजै ।
मिलिये हँसिये खिलिये किये रौष,
यौंही तन कौ रंग रूप ही छीजै ।।
इत की उत की जो मिलावति नारि,
गंवारि उन्हें मति भूलि पतीजै ।
अपने मन की उन सौं कहिये,
अरु आप सबै उन की सुन लीजै ।।
मान में कौन सयान है सुन्दरि,
लीजै भटू सुख जो लगि जीजै ।
'वृन्दावन प्रभु' कैं तू ही जीवनि,
ऐसे तो ईठहि पीठि न दीजै ।।८।।

राग कल्याण

कोप किये नित कौन बड़ाई ।
जनम हीं तैं जानौं मेरी गुसांइन,
बैठी ए बैठी तू मौंन कमाई ।
केऊ पढी रस रीति औ नीति सु,
प्रीति की रीति जु गौरव ताई ।।
ताकौं तो ऊंट कटेरे ज्यौ भामिनि,
है दिन जामिनि ऐसी सुहाई ।
'वृन्दावन प्रभु' सौं कहिये कहा,
ऐसी अनोखी सौं प्रीति लगाई ।।९।।

राग अडानौं

एती रिस काहे कौं करति, प्यारौ तेरे आधीन ।
तुव मुख चन्द चकोर चतुर, मनि तू पानी वह मीन ।।
वे सिगरी चाहति लालन कौं, है लालन तेरे रस लीन ।
'वृन्दावन प्रभु' तेरे ही हाथ, बिकानौं अब चाहत कहा कीन ।।१०

राग कनडी

माननि ? मान लै मेरौ वचन, काहे कौं करत प्यारे सौं अनवन।
बातनि बातनि बीतति रजनी, छांडि दैरी ठन गन ।।
उदास है रास विलास सौं, तो बिन तोसौं लियें प्रीतम यौं पन ।
'वृन्दावन' स्वामिनि मुरि बैठी,
काहे हर्यो तब लालन को मन ।।११।।

राग केदारौ

बालम की बतियां ही मीठी, क्यों आई तू जा किन पूठी ।
नैंक सकातन जात पुकारिकैं, जो चोरी आंखिन हम दीठी ।।
इत तू हमहिं मनावन आई, उत कहुँ ह्वै है फिरत वसीठी ।
जो न सांच मानैं तो दिखाऊं, लिखी अपनैं कर जिनको चीठी ।।

तिन सौं कहौ बसाइ कौन की, नख शिख उपटे कवट की पीठी ।
काकौं दोष रची विधि हम,
कौं 'वृन्दावन प्रभु' विरह अंगीठी ।।१२।।

राग परज

निपट कपट की खांनि कन्हाई ।
मेरी सी मोसौं तेरी सी तोसौं, इह न मिटी है वानि ।।
काहू सों भेंट सहेट, काहूसौं काहूसौं नई पहिचांनि ।
'वृन्दावनप्रभु' वहु नाइक सौं, कीनौं नेह अजांनि ।।१३।।

कान्ह सौं छांडि दै मान भटू, इह मांगति दान हौं तोपैं अवै ।
लाल भयो लटू मानैं वृथा, अब तो बिन रास को ठाठ सवै ।।
दान न देहि तो सौंपि अमानति, देऊंगी चाहैगी मान जवै ।
'वृन्दावन प्रभु' सौं वदि आई,
हौं पैजु परचौ जशु मोहि फवै ।।१४।।

राग बिहागरौ

लाल ? मनाई मनैं न गुसांईन ।
हौं कितनौं समुझाई थकी रु,
वकी रिस सौऊं परी पुनि पाइन ।
मूरति पाथर की कौं बुलाऊं,
डुलाऊं सुमेरु तो राबरी नाइन ।
हीरेऊ तैं हीयो याको महा दृढ,
केतो कहो कोउ टांकउ भांइन ।।
जिन फेरौ अवै विच दूति निपूतिन,
और की और मिलावति डांइन ।
'वृन्दावन प्रभु' आपु ही जाइ सु,
कंठ लगाइ कैं लीजिये दांइन ।।१५।।

राग अडानौं

हौं तो पचिहारी विहारी, मानति न प्यारी तिहारी ।
रूप की उजारी भारी विधिना संवारी,
पैं ऐसी अनखारी नारी मैं न निहारी ।।
तुम जानौं प्रीति न्यारी और कासौं विसतारी,
ढिगही गयेतैं गारी देति सुकुमारी ।
'वृन्दावन प्रभु' ऐसी देखी मैं निठुर,
आजु मानि हैं न पांइ परै कहैं हू हहारी ।।१६।।

राग पूरिया

कानन की काची हो, लाल प्यारी तिहारी सुकुंवारि ।
झूठी सांची कहि-कहि भरमावति याकौं,
वै इत उत की दुखहाई नारि ।।
मैं तो बहुतेरी निहौरी भौरी अति,
ओरी पसारि कीनी मनुहारी ।
मानती न क्यौहूँ 'वृन्दावन प्रभु' आपुही,
मनाइये कंठ लगाइये पांवधारि ।।१७।।

लडवावरी लाल करी अति ही लग,
लागि न देति न काहू कौं प्यारी ।
तिहारी दुहाई न मनाई मनैं,
हम तो चतुराई कै कै पचि हारी ।।
पोठि दियें सम्हैं नीठिहू डीठि,
करै न धरै चित बात हमारी ।
पाइ छुयैं अनखाइ महा उहिं,
भाय सुहाय ठगौरी सी डारी ।।

सयानी कहैं क अयानी यहैं,
नहिं जानी परैं अति रूप उजारी ।
'वृन्दावन प्रभु' देखो तो जाइ,
मनाइ इतौ रस पैहो न भारी ।।१८।।

आये हैं लाडली लाल मनावन,
सूधैं तो नैंकु विसासनि जोइ ।
शोभा सदन मदन दुख,
भंजन वदन कहा रही गोइ ।
तेरी तो रिस ही मैं रस उपजत,
अनत इतौ रस हू मैंन होइ ।
'वृन्दावन प्रभु' तेरे गुनन तैं,
राखैं हैं रोम रोम मैंनाइ ।।१९।।

राग नाइकी

अब आये हैं पिय पांइन परन,
एतेहू पैं लाडिली तू लागी है लरन ।
चौंसठि कला प्रवीन तेरेई रस मैं लीन,
काकैं ऐसो नाइक है दुख को हरन ।।
कारे कजरारे दृग कीजै इन्दीबर ही से,
जेव करि राखे कोकनद कैं वरन ।
'वृन्दावन प्रभु' प्यारौ कंठ सौं लगाइ लीजै,
परै जैसैं सोचु जाइ सौतिन घरन ।।२०।।

राग अडानौं

नख सौं लिखति भूमिका बैठी वावरी,
तू ठाढ़े हैं द्वार लाल सुकुमार री ।

सखी अनमनी शुकसारि काऊ पढत न,
तजि बैठे सब तो हर अहार री ।।
वैसो न अपराध कछु सब गुन पूरौ प्यारौ,
उठि भरि अंक हौं कहति बारम्बार री ।
'वृन्दावन प्रभु' बिन हिय ताप जान विधि,
दोसत न आन कोउ करि तू विचार री ।।२१।।

माननि ! मांन कह्यो किन, मेरौ मनावत मोहन मीत ।
कबके हाहा खात लाल इत, देखत जात कहा घटि तेरो ।।
न कछु बात पर गहि एतो, हठु कीजै न कोप घनेरो ।
'वृन्दावन प्रभु' कौं कहै, तो पाइ पाइ कहावैं चेरो ।।२२।।

राग बिहागरौ

कब के बिहारी करत हहारी,
नैंकु हुंतो देखि इत दई की संवारी ।
काहे ऐती रिस करै उठि क्यौं न अंक भरै,
प्यारे कैं तो तोसी और देखति न प्यारी ।।
औरनि को कह्यौ मान तोरै जिन कान्ह कानि,
तेरी अपमानि वै चाहति हैं नारि ।
'वृन्दावन प्रभु' रूसें पीछै हूतो पछितैहो,
अवतौ न मानति हो बातौं हमारी ।।२३।।

देखिरी देखि प्यारी मनावत प्यारौ ।
परम सुजान प्रान हुँते वल्लभ,
हिय तें कबहुँ न कीजिये न्यारौ ।।
नाहक रही मरोरि हठीली,
भौंह कटीली कह्यौं मानि हमारौ ।

'वृन्दावन प्रभु' भये आधीन अब,
अति न भलो जोवन को गारौ ।।२४।।

ज्यौं ज्यौं करै प्यार पिय त्यौं त्यौं तू रुषाई देति,
ज्यौं ज्यौं परे पांइ तू ठठूंस ह्वै रहति है ।
लाल होत सन्मुख तब तू विमुख होति,
करत उह वीनती कछु न तू कहति है ।।
विपरीति रीति फल इहांहिं निहारि नीकैं,
चन्दन चन्द्रहू ते दाह तू लहति है ।
ऐसो हठ और नारी कैं निहारचौ मैं न,
'वृन्दावन प्रभु' प्यारी जैसो तू गहति है ।।२५।।

राग विहागरौ

पांइन परै हूँ मान सुन्यो कहूँ कान है ।
और तो रची विरंची तिहुँ लोक रूप संचि,
इहै बड़ो औगुन जु रंचक अयान है ।
सकल सुख दायक पायौ ऐसो नायक,
औड़ैं पैठि-पैठि दीनौं बहु दान है ।
'वृन्दावन प्रभु' ऐसी पहिलैं इ चढ़ाइ मूण्ड ऐसैं,
क्यौं रूठैं यैं जान्यौं रावरौ सयान है ।।२६।।

राग वृन्दावनी काफी

झूंठ रु सांच को लीलिये और,
यौं झूंठी यै बातनि क्यौं अनखाइयै ।
कला सब ही मे प्रवीन महा हौ,
अयानीयै होयजु तोहि सिखइयै ।।

पांइ परै पिय देखि इतैं वलि,
चूक परी गुनहगारी लिखइयै ।
वृन्दावन प्रभु' भांवती ह्वै (अन भांवती, ह्वै)
अनभांवति ह्वै मुख कैसे दिखइयै ।।२७।।

राग पूर्वी

मानहु की विधि अवधि करी है ।
तौलौं ही मान सयान भलौ विच,
जौलौं फिरै सजनी बिफंरी है ।।
तब तौ नहीं राखनौं जोगि जबै,
पिय मूरति आइकैं पाइ परी है ।
'वृन्दावन प्रभु' कौं गज गामिनी,
लागत तेरी रिसौं मिसरी है ।।२८।।

राग अडानौं

कहा करौं तू आई माई, तोसौं मेरी कछु न बसाई ।
नहों में पन लीनौं है ऐसो, अब क्यौं हूँ न मनौं मनाई ।।
वे तो महा कपट की सींवा, जिनकैं नांही प्रेम सगाई ।
तू तौ हितू जनम की मेरी, तो कह्यौ कैसै डारचौ जाई ।।
जिनके देश नगर घर-घर हित, ते कहा जानैं पीर पराई ।
'वृन्दावन प्रभु' बहु नाइक सौं, नेह कियो पीछैं पछिताई ।।२९।।

प्यारी मनाइ लई हरि प्यारैं ।
वचन-वचन बहु विनय बीनती,
निरखि अपन पौं सखि जन वारैं ।।
केलि सदन चले मुदित वदन ह्वै,
भुजा परस्पर अंसनि डारैं ।

'वृन्दावन प्रभु' दम्पति छवि देखैं,
ललिता राई लौंन उतारैं ।।३०।।

राग केदारौ

बैठे कुसुम सेज पर जाई, रचि राखी जो सखिन बनाई ।
खबावत खात परस्पर वीरी, आनन्द उर न समाई ।।
नाना विधि सौंधे सौं सौं, दे पिय प्यारी मन भाई ।
देखि परस्पर रूप गये छकि, सुधि न रही तन काई ।।
कोक कला पंडित गुन मण्डित, दोऊ रसिकन राई ।
'वृन्दावन प्रभु' दम्पति रस बातैं, करन लगे मन्मथहिं मनाई ।।३१

राग वृन्दावनी काफी

बैठि तहां मिलि गावन लागे ।
बीरी खाय खवाय परस्पर, तान मान सुनि अति अनुरागे ।।
मूर्च्छना रचना श्रुति धारि, भये थिर जंगम थावर जागे ।
'वृन्दावन प्रभु' रीझि अपनपौ,
भूलि गये दम्पति रस पागे ।।३२।।

सुनौं री सुनौं कान दे तान सखी,
कहा गावति प्यारी बिहारी के संग ।
बजावति वीन विशाखा प्रवीन,
कला सलिता ललिता लै मृदंग ।।
नाग्रदी नाग्रदी तत्ताग्रदीथा,
परनि परै दुहूँ आनि सुधंग ।
'वृन्दावन प्रभु' दम्पति रस सम्पति,
भरे वरसै मिलि अद्भुत रंग ।।३३।।

।। इति श्रीगीतामृत गंगा मान लीला वर्णन घाट षष्ठ ।।

।। अथ सप्तम घाट ।।

दोहा

दम्पति रति लीला अगम, अब वरनत भलि भांति ।
जिसमैं लाडिली लाल की, सब विधि परति कांति ।।१।।

कबहुँ न विछुरै जोरि यह, दम्पति जनमन चोर ।
सदा एकरस नेहमय, विहरत युगल किशोर ।।२।।

ज्यौं रविकर रवि सौं सदा, विलग न कबहुँ होयँ ।
त्यौं श्रीहरि अरु राधिका, छिनु न्यारे नहिं होयँ ।।३।।

जनमनरंजन हेतु प्रभु, रचे विविध विधि खेल ।
ज्यौं विलास लौकिक ललित, दम्पति रस की रेल ।।४।।

एक ईश सब लोक के, स्वामी श्रीभगवान ।
यातैं हो किस बाल में, परकीया का भान ।।५।।

ब्रज बनिता बनिता नहीं, नहीं काममय राग ।
श्याम सुधा निधि की कला, स्वाभाविक अनुराग ।।६।।

श्रीराधा सर्वेश्वरी, सर्वेश्वर व्रजचन्द ।
परकीया तिनको कहैं, ऐसो को मति मन्द ।।७।।

विविध भांति की नाइका, ज्यौं सरिता जग मांहि ।
श्रीराधा सर्वेश्वरी, वारिधि मांझि समांहि ।।८।।

सर्वोपरि नायक परम, परं ब्रह्म व्रजराज ।
मूल नायकनि सबनि को, कवि वरनन रसराज ।।९।।

हरि की लीला अटपटी, कोउ न पावै पार ।
मानव क्या ऋषि मुनि सभी, करि-करि थके विचार ।।१०।।

राग विहागरौ

गई करि रास विलास सवै,
अपनैं-अपनैं घर गोप किशोरी ।
मुरली करखी हरखी–हरखी,
उठि आई हुती घरके न की चोरी ।।
श्यामा जू कैं हित श्याम संकेत,
निकेत विराजि रहे गिरिधारी ।
'वृन्दावन प्रभु' प्यारी हु आइ,
निकेत करी सु पयान की त्यारी ।।११।।

बीतति देखी जबै रजनी, सजनी पठई पिय लैंन पियारी ।
बैठे हुते रजनी मधि के बनि, केलि निकुंज ही में गिरिधारी ।।
सहेट समौं लखि वेउ उतै, चलिये ऊठि यौं मनमांझ विचारी ।
'वृन्दावन प्रभु' लाडिलो पांइ सु,
जाइ परी कही हौं गई वारी ।।१२।।

पाव धरिये प्यारी बिहारी तिहारी,
निहारत बाट इतै दृग दियैं ।
मनोरथ रावरे पूरन काज सु,
आजु सिंगार बनाइकैं कीयैं ।।
कैंहूके वैंठे संकेत निकेत,
धरै इक आप कौ ध्यान हियें ।
'वृन्दावन प्रभु' अकुलात ह्वै है,
न डरौ चलि हौं तुम्हैं सीघें लियैं ।।१३।।

राग पूरिया

कैसी रैंन अँधियारी भारी, नखत मणि पांति दमकत सुखारी ।
ऐसी मैं श्याम सुजान पैं, बनि ठनि चलिये श्यामा प्यारी ।

सजि मृगमद अंग लेप, नीलमणि भूषण नीली सारी ।
'वृन्दावन प्रभु' मग देखत, ह्वै हैं आतुर कुंज विहारी ।।१४।।

श्याम पैं श्यामा कियो जु पयान,
औ श्यामा अपार अंधेरी में छाई ।
श्याम ही भूषन सौं धौऊ,
श्याम अनंग सहाई ।।
पहुँची जब जाय संकेत निकेत,
तहां मणि दीपनि ज्योति महाई ।
'वृन्दावन प्रभु' देखत ही उठि,
पौरी लौं दौरि कैं कंठ लगाई ।।१५।।

अलीन के संग ह्वै कुंज गली न,
चली पिय पैं सजि प्रान प्रिया री ।
धीर समीर कलिन्द जा तीर पैं,
बैठे जहाँ बलवीर विहारी ।।
शिखते नखलौं मुकता पहिरैं,
अरु सारी सुपेद रुपहरी किनारी ।
तारनि वृन्द लियैं चपला मुख,
चन्दहिं भेंटन आई कहारी ।।
फूलन सेज रची पचिआलि,
न छाय रही छवि सौं उजियारी ।
'वृन्दावन प्रभु' देखत ही उठि,
धाइकैं आय भरी अँक वारि ।।१६।।

राग केदारौ

प्यारी पिय तैं मिलन काज धाई ।
नूपुर की झनकार भई तिहिं वार,
मार मनों किलकार सुनाई ।।
मद गज गति लटकति लटकति,
लचकति कटि कुच वारन के भार ।
नख सिख भूषन साजै अरु,
सजैं ऊर गज मोतिन के हार ।।
'वृन्दावन प्रभु' उठि आदर करि लीनी,
कह्यो न परत भयो आनन्द अपार ।।१७।।

राग कान्हरौ दरबारी

धनि-धनि आजु की घरी प्यारी,
पधारी पिय पैं बनि ठनि ।
बढ़ी छवि दून री चूनरी पहिरै,
चूनि अंगिया कसि बाँधी तनि-तनि ।।
नख सिख रूप भरी विधि आप,
करी कर अति कमनी मनि ।
'वृन्दावन प्रभु' आइ धाइ अंक भरी,
लीनी कीनी रसभीनी सुरत रंगनि ।।१८।।

आजु सुख लूटत लाल विहारी,
बैठे चित्र – विचित्र अटारी ।
ज्यौं–ज्यौं पिय निरखत मुख,
त्यौं-त्यौं हंसि-हंसि उर लपटाति पियारी ।

चुम्बन दै पुनि लै लज्जित ह्वै,
छिन ह्वै जाति नियारी ।
'वृन्दावन प्रभु' तब अंकन भरि,
रीझि प्रकाशत कामकला री ।।१९।।

आजु सखी सुरत जुद्ध दोऊ करत सजे ।
कटि किंकणि नूपुर रुण झणकत, रति उछाहक बाजे बजे ।
धीरज हरष गरव मद अमरष, ये अति सूर समर हित गजे ।।
भय शंका लज्जा श्रम आलस, ये ब्यभिचारी कायर भजे ।
अधर हरौल भये अति घाइल, कुच गोलहु पर पर्चौ अति भार ।
दशन कटारी तीछन नख गन, भई तरबारनि मार ।।
कुटिल कटाच्छ दुहुँ दिशहू ते, वरषत वान कतार ।
'वृन्दावन प्रभु' कौं रीझि मदन नृप,
मोद इजाफो देत अपार ।।२०।।

राग विभास

अब तौ सोवन देहु हाहारे ।
सारी रैंन जगेरु जगाईं
लगत न नैंन तिहारे ।।
तुम्हें तो पर्चौ बातनि को चसको,
करत करत नहिं हारे ।
'वृन्दावन प्रभु' अमृतहू को कोऊ,
खाइ अजीरन करत कहारे ।।२१।।

राग केदारौ

लाल कहा तुम्हैं वानि परी, रस ना रहैगो कहूँ बात खरी ।
मोहि तो आवत नींद निगोडी, जगावत आनि घरीये घरी ।।
है जिनकैं यह भूख महातिय, ते इन बातनि ही मैं डरी ।
'वृन्दावन प्रभु' कंज करीर के, फूलन की गति एक करी ।।२२।।

राग विहागरौ

हरि हारी हहा करौं सोइ रहो,
अब चाहौ कहा तुम हारे न हौ ।
प्यारी तिहारी की सौंहे तुम्हें,
अब तो कछु प्यारे जो मोहि कहौ ।।
तुम तौ जिहिं बात के पैंडे परौ,
फिरि ही फिर वाही की गैल गहौ ।
'वृन्दावन प्रभु' गोरस खायो,
परायो याते इतौ खेद सहौ ।।२३।।

राग देवगंधार

पौढ़े दम्पति सुख सैंन ।
परम कोमल सुरत लीला, श्रमित पायें चैंन ।।
परस्पर भुज अंश दीनैं, सकल सुख के ऐंन ।
'वृन्दावन प्रभु' प्रेम माने, कछुक मुकुलित नैंन ।।२४।।

राग विभास

भोरहि तरुनि तलप उठि बैठी,
अलप अलस युत दृग जल जात ।
अंग-अंग रति चिन्हनि भूषित,
देखि मुकुर मुद उर न समात ।।
छुट्टि रही अलक अधखुली पलकनि,
अधर सुछत तन तोरि जंभात ।
'वृन्दावन प्रभु' रसिक शिरोमनि,
निरखि-निरखि छवि छिन न अधात ।।२५।।

नागर नलिन नैंन सुनि सुनि कलविंक वैन,
उठि बैठे सैन पर रसिक रहावनैं ।

सौंधैं रंगमगे रति रंग मांझ पगे,
रैंन कै जगे लगैं परम सुहावनैं ।।
घूमत झुकत झपकत झिझकत मैंन,
मदमातैं बोलैं वचन तुतरावनैं ।
'वृन्दावन प्रभु' आली देखि-देखि जालिन,
मैं पावैं सचु गावैं मिलि मदन बधावनैं ।।२६।।

राग विभास वा. भैरव

भोरहिं मंगल आरति कीजै ।
मंगल सदन वदन जोरी कौं, निरखि निरखि कैं जीजै ।।
मंगल नाम कृष्ण गोविन्द, हरि गोपीजन प्रिय लीजै ।
'वृन्दावन प्रभु' त्रिभुवन मंगल, यश सुधा श्रवन पुट पीजै ।।२७

उठि बैंठे प्रात मोद न समात गात,
करत रसीली बात अति ही विचच्छन ।
उरझी लट सौं लट पट सौं उरझे पट,
हारन सौं हार दृग–दृग तन मन ।।
नखनि के छत उर महावर पीक मानौं,
उगे द्वैज शशि सांझ गौर श्याम घन ।
कछुक मुकुलित नैंन सकल शोभा के ऐंन,
निरखत पायें चैंन दुरि सखी जन ।।
'वृन्दावन प्रभु' ऐसी माधुरी पर वारि,
डारौं कोटि–कोटि रति औ मदन ।।२८।।

राग बिलावल

उठि बैठे दम्पति रस सम्पति भरे भोर ।
चन्द मन्द द्युति देखि दोऊजन, सुनि कलविंकनि शोर ।।

आलस वलित अरुन लोचन, वर मानौं मत्त चकोर ।
पिवत परस्पर वदन चन्द्रिका, इक टक भये दुहुँ ओर ।।
पीक लीक अंजन रंजित अंग, छवि न फबी कछु थोर ।
'वृन्दावन' तन मन धन, वारत निरखत नन्द किशोर ।।२९।।

राग विभास

आज विराजत युगल किशोर ।
अंग अंग रति रंग सनैं दोऊ, उठि बैठे शय्या पर भोर ।।
नैंन मैंन मद घूमत झूमत, चारु चिकुर विथुरे चहुँ ओर ।
'वृन्दावन प्रभु' दम्पति सुख सम्पति,
　　　　हैं रतिपति रति की चित चोर ।।३०।।

राग देव गंधार

भोर हि सुमिरो युगल किशोर ।
कुंज महल मैं रतन पीठ पर,
　　　　बैठे नित्य कृत्य करि भोर ।।
रति विनोद कहि–कहि मृदु मुसुकत,
　　　　प्रिय सखि तन निरखत दृग कोर ।
'वृन्दावन प्रभु' दम्पति सुख सम्पति,
　　　　ललितादिक देखति चहुँ ओर ।।३१।।

राग श्री, विलावल

राजति है अति अद्भुत जोरी, कहा वरनैं कविजन मति थोरी ।
सजल नील घन वरन विहारी, सौदामिनि दुति राधा गोरी ।।
इन्द्र नीलमणि दुति दामोदर, कुन्दन दुति वृषभानु किशोरी ।
श्याम तमाल लाल मनमोहन, कनक लता कीरतिजा भोरी ।।

मरकत मणि नन्दलाल लाडिलो, हाटक थेहा वन्योरी ।
'वृन्दावन' दम्पति छवि ऊपर,
सरवस वारि डारत तिन तोरी ।।३२।।

राग बिलावल

आजु वनैं वनमाली ।
अधर मधुर अंजन दुति राजत, भाल महावर लाली ।।
अटपटे पेचनि वागें मरगजैं, नील वसन गज चाली ।
'वृन्दावन प्रभु' रैन उनींदै, झिझकत झपकत नैंन विशाली ।।३३।।

।। इति श्रीगीतामृत गंगा अभिसार सुरत सुरतान्त लीला वर्णन सप्तम घाट ।।
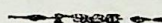
अथ अष्टम घाट

दोहा

सुनि-सुनि खंडित वचन जिहिं, पंडित नायक वाल ।
होत निहाल सो खंडिता, वरनत हौं अब वाल ।।१।।

राग विभास

कैसे नीके लागत नवनागर गिरिधरन ।
याही ते अधर अंजन रंजित कीनें,
प्यारे लाल डीठि के डरन ।।
अरुन उनींदे नैंन बोलत हो आधे बैंन,
ऐंडे वैंडे परत हैं रावरे चरन ।
जांनियतु आजु रैंन जागे अनुरागे,
कहुँ आपु निज देवता को जागर करन ।।

पाग की ललाई भाल झलकत जावक सी,
अंग की झलक पट भयो नील वरन ।
'वृन्दावन प्रभु' ही रिझांवन,
किधौं मेरी रीझि लागी मन हीं हरन ।।२।।

राग बिलावल

जानैं जानैं हो पिय भलै, हो बोल के सांचे ।
मोसौं वदि संकेत गये हे, जांय और सौं राचे ।।
नैंन थके मग जोवत-जोवत, कौन चूक बलि ह्यांते वाचे ।
'वृन्दावन प्रभु' दोष न तुमकौं, बहुत ठौर सौं काचे ।।३।।

राग टोडी

तुम तो भये हो भौंर ठौर-ठौर वास लैंन,
यातैं न निवास कहूँ रावरौ निहचल ।
ढूँढत फिरत द्रुम बेली घनवन पढे,
इहै पाटी तातैं जानत हो छल बल ।
चाखे नाना रस याते नहीं मन वश,
रैन दिन क्यौंहू अब तुम्हें न परत कल ।
'वृन्दावन प्रभु' जेव तुमते न दूजौ,
जानैं तातैं है विषाद इह उनहीं को पल-पल ।।४।।

राग रामकली

आजु तो गोपाल लाल कीनी हौं निहाल,
तुम कैसैं उहिं बाल इत आवनहूँ दये हो ।
भूल्यो सब काम तुम आठौं जाम वाके,
घाम इत उत मँडरात ऐसे वश भये हो ।।
घर-घर चवाव तउ तुम में समाव बढ़ौ दिन,
दिन दूनौं भाव वासौं विकि गये हो ।

'वृन्दावन प्रभु' अब ऐसोइ है नेह,
नयो नई वह नाइका अरु नायक हू नये हो ।।५।।

राग विभास

भली कीनी भोर हू मो भवन पधारे मेरैं,
तऊ तुम प्यारे लाल लागत हो जिय कौं ।
मोकौं तो तिहारौ इह दरशन हू दूभरु,
है धन्य वह ऐसे सुख देत जो तिय कौं ।।
रति के चिन्ह एव कहैं देत वाकौं सुख,
मोकौं दुख लिख्यो सो दोष दीजें कौन कौं ।
'वृन्दावन प्रभु' अब वाही कैं पधारो,
घर मनावति ह्वै है बैठी मिलिबे के सौंन कौं ।।६।।

राग ललित

आजु श्याम कहा यहां काम तिहारौ ।
चाम के दाम चलावत जो उहिं,
बाम हीं कैं अब धाम सिधारौ ।।
निशि जाम वितीत करौ जु वहां,
सुव नाम कौं और कैं आवौ संवारौ ।
'वृन्दावन प्रभु' ह्वै है धाम न्याव,
राम कैं आगैं तुम्हारो हमारो ।।७।।

मुसुक्यात मनैं मन सौंधैं सनैं, बनैं स्याम गनैं-गनै पैंड धरौ ।
मृदु मूरति आरस सौं लपटी, कपटी उपटी उर वीर बरौ ।।
उह संग खरौ जिहिं रंग-रंगे, मिलि जाहि अनंग की ताप हरौ ।
'वृन्दावन प्रभु' दूरि रहो, न छियो हिये ते कबहूँ न टरौ ।।८।।

राग जैतश्री

मैं पनलीनौं आजुते तुमसौं बोलौं नांही ।
अंखियां जो देखेंगी देखौ, समझौंगी मन मांही ।।
कपट नेह सौं देह जरति है, मति मेलौ गर बांही ।
'वृन्दावन प्रभु' चाहौ वै, बातैं वे तो भईं दगांही ।।९।।

राग विभास

नित नये नेह निवाहत मोहन,
गोहन और कै काहै परै हौ ।
तुम कौं तो परयौ रस को चसको,
बश कौंन को जो इहिं ढार ढरे हौ ।।
तुमतो ब्रजराज के नन्दन लाज,
बहाइ दई न दई तैं डरे हौ ।
'वृन्दावन प्रभु' मति आगैं कहावो,
कछु च्यांनैं रहौ सब गुनन भरे हौ ।।१०।।

राग ललित

लाल निहाल से डोलत हो उह,
बाल कहूँ उर माल भई है ।
प्यारी के अंग सुदेशनि की,
तुम्हैं मैंन मनौं सिकदारि दई है ।।
भौंर ज्यौं भांवरि देत हुते,
सब द्यौसन की रस भूख गई है ।
'वृन्दावन प्रभु' काहे छिपावत,
कीरति तौ सब ठौर छई है ।।११।।

राग विभास

मन भावन आंगन पावन कीनौं ।
दांवन घांवन आंवन कै इत, प्यारी रूठावन जांवन दीनौं ।

रूप रिझांवन प्यांवन सावन, चांवन सीरे किये दृग मीनौं ।
'वृन्दावन प्रभु' गांवन-गांवन, गांवन वाही को नेह नवीनौं ।।१२

नेह को छेह न देह पियारे ।
तुम तो नेह कियो घर-घर, कौ ताहि समेटत हारे ।।
एक ठौर ठहरात न ढिक सौं, श्याम नैंन के तारे ।
इतनौं तो हम हमहूँ समझति, हैं इत न ढरैं इह ढारे ।।
मधुकर रीति-प्रीति करवाये, स्वाद मिष्ठ खटु खारे ।
'वृन्दावन प्रभु' परे जु चसकें, कापै जात निवारे ।।१३।।

प्रीति करौ ठहराई कहूँ,
बहराई हिं जानत हो सब कौं ।
रास में कीनौं प्रकाश इहै,
गुन भूलत नां हम हूँ तब कौं ।।
पहिलें सब सों करि केलि रिझाइ,
लै एक हि छांडि गए हम कौं ।
सोऊ तो पूरो परचौ न कछू,
वाहूँ सौंपि गये विरहा यम कौं ।।
केऊ रचे विधि ऐसे उन्हें,
नहि कोमलता तन कौं तनकौं ।
'वृन्दावन प्रभु' केवल स्वारथी,
पूछि देखौ अपनैं मन कौं ।।१४।।

राग ललित

धरि नेमहिं स्वारथ साध्यो किधौं,
तुम प्रेमहु सौं पहिचांनि करी है ।
नखतैं शिखलौं कपटाई लै मूरति,
मोहनी डारि विरंचि धरी है ।।

उहिं मोहनी मोहति डोलति है,
मुरली अधरामृत लै जु भरी है।
'वृन्दावन प्रभु' मोहै नहीं अस,
को सुर किन्नर नारि नरी है ।।१५।।

अहो लाल इतै कित भूलि परे हो।
जैये उतै इन द्यौंसनि मे करि,
हौं सलखैं जिहिं होत हरे हो ।।।
नये चाखत हो रह भौंर भये,
इन बातनि कौं चतुराई भये हो।
'वृन्दावन प्रभु' कपट कल्पतरु,
मूलते लै सब झूंठ फरे हो ।।१६।।

राग जौंनपुरी टोडी

भली परिपाटी की पाटी पढ़े हौ, इन बातनि घातनि केती रढ़े हौ।
नखशिख झूंठ भरे मन मोहन, जानत हौं विधि आप गढ़े हौ।।
सकल कला गुन पंडित ताई मैं, तातहु भ्रात तैं आग आप हो।
सौंहनि खात बड़े परभात, प्रतच्छहि तो रति चिन्ह मढ़े हौ।।
नेह जनावन आये हो मोसों, सुभाइ इतैं कहुँ आइ कढ़े हौ।
'वृन्दावन प्रभु' जानत मोहनी,
ऐसे हू पैं पुनि चित्त चढ़े हौं ।।१७।।

आलस भरे हैं लाल सारस से नैन युग,
जा रस पगे हो सोई पारस करि पाई है।
सब सौं रुखाई दियें डोलत कन्हाई,
तुम तिहारै जिय जानि इत स्वारथ सगाई है।।

सु उहू करिलेहु दिन च्यारिक सुहाग,
भाग जौलौं और ठौर कहूँ प्रीति न लगाई है।
कपटी हौ 'श्रीवृन्दावन प्रभु' तऊ रूप रीझि,
आंनि फँसैं वाम जो विचारी कांमताई है ।।१८।।

चैंन सों रैंन को जागे कहूँ तुम,
लैंन कहा इत लालन आये ।।
जानत फैंन बनावत बैंन ए,
सेंन के चिन्ह क्यौं जैं हैं छिपाये ।।
नैंन ते सेंन ते काजर काढत,
बारेई ते घर चौरी सिखाये ।।१९।।

राग विभास

आजु ईहिं बानिक की बलिहारी ।
आलस वलित ललित शोभित, तन सुरत चिन्ह गिरिधारी ।।
अंजन अधर गंजन मधुकर, दुति अरुण सरोज बिहारी ।
लट पटी पाग रही वाम भाग, धुकि तापर पीत पिछोरी डारी ।।
रस पागे जागे निशि झपकत, लपक अलक अनियारी ।
मनहुँ राहु दुहुँ दिशि शशि ऊपर, रह्यो कर काढि कटारी ।।
खंडित वचन रचन उर मंडित, अब हि थ्या संचांरी ।
'वृन्दावन प्रभु' चारु कपोल,
तमोल की छाप विराजति भारी ।।२०।।

राग नाइकी विभास

प्रात उठि आये अलवेले,
अलसात श्याम वाम मुकुर लै दौरी ।
रीझि को बनाव आजु बन्यौ है,
विहारी लाल डारत फिरत ठगौरी ।।

सुकर मुकुर लैकैं सुकर मनावौ,
देखि बैठी यहां छिन पौरी ।
'वृन्दावन प्रभु' सकुचि मुसुकि बोले,
हम को तो बल्लभ तुम हीं होरी ।।२१।।

राग मतूवौ

तुम जिय कठिन नन्दनंदन, पिय निज हिय हेरि निहारौ ।
तुम करो ध्यान आन-आन ही, को हम करैं ध्यान तिहारौ ।।
हम तजी लाज काज गृह को, सुख तुम बिन लागत खारौ ।
'वृन्दावन प्रभु' या करतूति पै,
क्यौं हँसि हेरि ठगौरी डारौ ।।२२।।

श्रीकृष्ण वचन राग पूरिमा

ऐसी बात काहे को कहति प्यारी परम उदार ।
प्रांन को प्रान जीव जीवनि तन, नैंन वैंन मन तू आधार ।।
तुव मुख चन्द चकोर मोर दृग, मोर मुदिर कच भार ।
'वृन्दावन प्रभु' तौ देखे जीऊं,
तूं रमनी! मनि मो उर हार ।।२३।।

राग मधुपुरी काफी

अहो लाल चलौ उतही अव जैये ।
हमारी वहनी रिष मांनैं हिंगी,
मन राखन क्यौं हमारो इत ऐयै ।।
हमसौं इतनौं कहा अन्तरु है निज,
मोद विनोद हमैंऊ दिखैये ।
'वृन्दावन प्रभु' आये इहां मुंहु,
हाथ परै न कछू इत पैये ।।२४।।

राग नट

आज विराजत हो अति नीके ।
लाल तुम सौंधें सनैं घनैं, रैन उनीन्दे भये भाये जीके ।।
आजु रैंन रति मांनी जासौं, भाग्य बड़े ता ती के ।
मुख मीठे दीठे नख शिखलौं, कपटी हो हरि ही के ।।
ठौर-ठौर रस लैंन काज तुम, लच्छन सीखे अली के ।
'वृन्दावन प्रभु' औरनि सौं, क्यौं भये फिरत हो फीके ।।२५।।

कहौ जु कहां तुम आजु की रैंनि बसे ।
नैंन अरुन तन चन्दन वन्दन, ओंठनि अंजन अधिक लसैं ।।
पीक लीक लगि श्याम कपोलनि, मनौं अनुराग कसौटी कसे ।
'वृन्दावन प्रभु' हे बहु नायक, भोरैं भलैं इत आय फंसे ।।२६।।

कपट कौ नेह जनावत प्यारे, भोरैं भये भलैं मेरैं पधारे ।
लोइन कोइन लाली खुली, अरसौं है एसौं हैं न होत हैं तारे ।।
अटपटे पाइन धरत धरनि पर, लटपटे पाग के पेच संवारे ।
'वृन्दावन प्रभु' इहिं वानिक सौं,
देखि भये दृग शीरे हमारे ।।२७।।

राग भैरव

भलैं हीं आये मन भाये लालन,
अति अरसाये याते जाय पौढि रहिये ।
हमें तो तिहारे सुख-सुख है अधिक प्यारे,
आप इत आंवन कौ काहे दुख सहिये ।।
जित रुचि मानी जग जानी जाकी प्रीति रीति,
नीति तौ यहै है अब वाही सौं निवहियें ।
वृन्दावन प्रभु' तुम हो परम सुजान यातैं,
सब ही को समाधान होत योंही चहिये ।।२८।।

राग ललित

मोहि तो भरोसौ है तिहारी सब बातनि कौ,
लाइक हौं नायक मन भायक सब ही के ।
तुम सौ चतुर और कोउ है न काहू,
ठौर रसिकन शिरमौर परम उदार जी के ।।
मुरली बजाय गाई रूप दरसाई तरसाय,
तरसाय चित हेरन का का ती के ।
रावरी बड़ाई अब कीजे कहा लौं 'वृन्दावन प्रभु'
आपनैं काज कौं पढ़े हो बहौत नीके ।।२९।।

जागे रैंन कहूँ चैंन दैंन लागे हमें,
आय मैंन मदमाते नैंन बैंन तुतराते हैं ।
महावर लाल भाल मरगजी माल उरवंक,
नख अंक दुति मयंक से सुहाते हैं ।।
मुकरत काहे चाहे करत हो आपनैंइ लाइक,
बहु नाइक ते कौंन सौं सकाते हैं ।
'वृन्दावन प्रभु' बनि आई इन बातनि मे पानैं,
परै काहू कैं न देखे सीरे ताते हैं ।।३०।।

जानैं-जानैं जु जानैं हौं च्यांनै, रहौ इहै पाटी पढ़े बहुतै हौ सयांनैं ।
बात बनैं न गनैं कछु लंपट, संपट ही कोन खोलै न मानैं ।।
आनैं हौ घेरि दई परे पानै हौं, मू देऊ सौं रति-रति रंग में सानैं ।
रानैं भये बहु नायक कै याते, ठांठां दये तुम प्रेम के थानैं ।।
भीरी मिली व्रज की वनिता, सब वैसिन कैं न परै कहूँ पानैं ।
निसानैं बजावत काम करौ अब, कूह्लरि में गुर फोरत छानैं ।।
दियें कानैं कहूं उरझानैं कहूँ दृग, तानैं कहूँ कित हू हौरि छानै ।

'वृन्दावन प्रभु' दानैं भये भले ठानैं,
फिरौं इहिं बात के बानैं ।।३१।।

अहो भलैं अहो भलैं आपे मन भांवन ।
रति रंग रंगे अँग सुहाये, देखि-देखि नैंन शिराये ।।
झिझकत झपकत श्याम उनीन्दे, किन धौं आजु जगाये ।
'वृन्दावन प्रभु' उहिं रस वश, भये ऐसे रीझि रिझाये ।।३२।।

राग गारौ

भलांहीं पधारचा म्हांकै नन्दलाल,
म्हे तो थांनें देखतां ही हुवा छां निहाल ।
म्हांकै तो नैंण प्राण थेई छो प्यारा जी,
थांकै तो म्हां सारिखी घणी छै बाल ।।
आंख्यां थांकी रैंण उणीन्दी अटपटी थांकी चाल,
'वृन्दावन प्रभु' कांई आछौ लागै छै अमक तो थांकैलाल ।।३३

छल बल करुन अमचे आले,
पाहुन-पाहुन डोले शीतल झाले नन्दा चे कुमार ।
नखांचे चिह्न तुमचे आंगी, कोठे झाले हे तू सांगी ।
रांती जागले निजुन रहा, हाथी घेऊन दर्पण पहा ।
'श्रीवृन्दावन प्रभु' तुमी बहु नाइक,
या च करणे हा अति पाइक ।।३४।।

लाल कबहूँ तो तनक दीजै हमैंउ दरस ।
निपट निठुर न हूजे नेह करि, प्राण पति कीजै दई को तरस ।।
छिनक न होते ही ते न्यारे, कै बीते बिछुरें केतेऊ बरस ।
'वृन्दावन प्रभु अब बेई बड़ भागिन,
हैं आज काह्नि जिनसौं हौ अरस परस ।।३५।।

राग अडानौं

भले जू भले मन भांवन, अब लागे दरस हू को तरसावन ।
विरमि रहे गये अवधि बीति, कैं जब कहि गये हे आवन ।।
भूलि गये कैंतो अपने काज, को परत हुते हठि पावन ।
'वृन्दावन प्रभु' बहु नाइकी, के जानत हो सब दावन ।।३६।।

राग सारंग

पतंग को रंग है नेह तिहारौ ।
दिन चार तौ चटकीलौ लगै,
बहुरचौं परि जाइ सु फीकौ फिकारौ ।।
ऐसीये पाटी पढ़े धुरते तन,
साँवरो है मन तैसौई कारौ ।
'वृन्दावन प्रभु' कारे पै रंग,
न दूजौ चढ़ै तिहारो कहा चारौ ।।३७।।

प्रीति की रीति निवांहनी, महा कठिन है लाल ।
तुम तो फिरत नये रस चाखत, उह सांची है वाल ।।
उह नित सूखत इहि दुख दाधी, रोवति परि वेहाल ।
'वृन्दावन प्रभु' तुम बहु नाइक, यातैं फिरहु खुस्याल ।।३८।।

राग वृन्दावनी काफी

आजु मैं नीकैं निहारी बिहारी,
पियारी तिहारी नई जु भई है ।
चन्दन पांति की कांति कहां कहा,
श्यामा लै वा समतूल दई है ।।
कही न परै विधि की रचना मणि,
अद्‌भुत लै कपि कंठ नही है ।

'वृन्दावन प्रभु' जैसे कौं तैसौ,
मिलै तब ही रस बात सही है ।।३९।।

राग बिहागरौ

जानैं जानैं भलैं तुम राधा कौं बाधा दैं,
औरनि सौं करो नेह विशेखौ ।
रंग तो श्यामन ढंग कोऊ गरैं गुंज,
धरैं शिर पंख जु वेखौ ।।
दाख की बेलि कटेरौ कहां सुइ हू तो,
भयो करहाई को लेखो ।
'वृन्दावन प्रभु' भान सुता तिहारे,
मुंह लायक आरसी देखो ।।४०।।

राग सारंग

माई मिलि जिन विछुरो कोइ ।
जरन मरन हिय परन गरन ते, इह दुख दारुण होई ।।
प्रान जान कौं कंठ रहत लगि, ज्यौं अंकुर मुख तोइ ।
'वृन्दावन प्रभु' विरह व्यथा, जानैं जामे वीतै सोइ ।।४१।।

राग रामकली वा परज

प्यारे विनु सुखद लगे दुख दैंन ।
लागत मलय समीर तीर सो, चन्द लग्यो जिय लैंन ।।
अशन वसन तन डसन भये सर, मारत तनि-तनि मैंन ।
'वृन्दावन प्रभु' नैंन निगोडनि, चैंन नहीं दिन रैंन ।।४२।।
कौन अविधि विधि कीनी कूरि ।
जिय मन प्रान एक करि दुहुँ के,
निपट निठुर करि नीने दूरि ।।

तन तचि विरह सदन सूनैं लौं,
जरि वरि छार भयो चकचूरि ।
'वृन्दावन प्रभु' बिनु कैसे जीवौं,
जो तन मन जिय जीवनि मूरि ।।४३।।

राग टोडी

ए दई भई गति कौंन ।
जवते बिछुरे लालन आली, सूनैं लागत तीनौं भोन ।।
विरह व्यथा सम और न दूजी, न्याय करति न्यारी सह गौंन ।
'वृन्दावन प्रभु' को ही कौ हूँ, इह कछु समझति हौंन ।।४४।।

राग पूरवी

क्यौं करि दिन भरि ए बिनु प्यारे ।
मन तो साथ फिरत उनही कौं, तन इत जिय वैं न्यारे ।।
सुजन बन्धु घर अशन वसन, ए सारे लागत खारे ।
'वृन्दावन प्रभु' विरह धार मैं, हमकों वे छिटकाय सिधारे ।।४५

राग रामकलि वा सोरठि

देखो विदेशी भये पिय प्यारे, हौं कैसे जीवू दयारे ।
जो एको छिनक कहुँ सजनी, होत न हे नयनन ते न्यारे ।।
इतनैं उ अन्तर डर निज घर में, भूषन वसन न धारे ।
कै अव बीच किये विधि दुहुँ, के गिरि वन देश नदी नद नारे ।।
महा कठिन ये प्रान-प्रान बिनु, रहत जू दई सँवारे ।
मन सांचौ प्रेमी 'वृन्दावन प्रभु', संग फिरत छांडि सुख सारे ।।४६

राग परज

सखी रो आवत है गोपाल अंदेशो ।
जिन सौं रास विलास कियें मिलि, तिनको अब सुपनैं न संदेशो ।।

जांनि मानि पहिचांनि तजी सब, जाय मधुपुरी केशौ ।
'वृन्दावन प्रभु' कारो कपटी, जानति हैं हम तैसौ ।।४७।।

सखी री सुनियों हरि की प्रीति ।
तोरत नैंको वार न लाई, इह कुटिलन की रीति ।।
मनहुँ जानि पहिंचाननि कबहूँ, इह उन सौं हम ठानी ।
जाइ मधुपुरी कुब्जादासी, लै कीनी पटरानी ।।
इह उर साल हमारैं सालत, किहिं विधि आ(यु)वु वितैवो ।
'वृन्दावन प्रभु' पर कर मन दै, अवै परचौ पछितैवो ।।४८।।

आवै री पिय प्रेम परेखो ।
कितीक दूरि मधुपुरी संदेशो, नैंकु न दयो आली री देखो ।।
निपट निठुर हियो कीनौं कबहूँ, नांहि नेह सों लेखो ।
'वृन्दावन प्रभु' कुबजा राचे इह,
पुनि काम कियौ जु विशेखो ।।४९।।

अन्त उदासी भये ब्रजवासी तो,
नाइक प्रेम की डारी क्यौं फासी ।
दासी करी जग हांसी भई पै,
तऊ सुधि क्यों हूँ लई न विशासी ।।
दई न दई हैं दया कबहू जिनकौं,
अब तेऊ हैं प्रेम प्रकाशी ।
'वृन्दावन प्रभु' छाती तिहारी सी,
जो करै तो होय प्रेम की हासी ।।५०।।

राग कनडी

मिलि सुख दै दुख दयो बिसासी ।
सुख तो तनक भयो सुपनौं सौ,
बिछुरैं अब दुःख भयो सहवासी ।।

सासन लै सकिए गुरुजन डर,
डारि गयो गर प्रेम की फांसी।
'वृन्दावन प्रभु' कठिन बनी अति ह्वै,
गई अव इह हांसी ते खांसी ।।५१।।

राग गारौ

मदन गोपाल तेरे हित, मैं गृह वित तजि दीन।
बिन देखें तेरी मूरति तलफौं, ज्यौं जल बिनु छिन मीन।।
अलबेली तेरी बंक विलोकनि, मो मन तो हरि लीन।
'वृन्दावन प्रभु' सुध्यो बिसारी, महा कठिन हिय कीन।।५२।।

राग बंगाली

अहो पिय महा कठिन मन कीनौं।
जबते सिधारे यहां ते लालन, कबहुं पत्र नहीं दीनौं।।
जो तुम्हें ऐसी करनी ही बलि, क्यौं चितवित हरि लीनौं।
'वृन्दावन प्रभु' हम तन तुम, बिन होत दिनैं दिन छीनौं ।।५३।।

राग वसन्त सारंग

क्यौं हूँ नहीं चैंन सब लागे दुख दैंन आली,
प्यारौ प्रान दूरि कछु बात न कहन की।
देखि-देखि पाती छाती काति सी बहति मेरें,
ताती-ताती झर उठैं विरह दहन की।।
कहि-कहि अवधि राख्यौ अब तक जिय में तो,
अब तो न सूझैं विधि याके रहन की।
'वृन्दावन प्रभु' श्याम वैतो प्रेम पूरे इहैं,
पैं न होत आवन सु अपनैं लहन की ।।५४।।

राग बंगाली

पहलैं तो गुरुजन डर विरह झर,
उर उठति ही हरैं–हरैं ।
सुलगि-सुलगि पुनि बूझि-बूझि जात ही,
झरोखां मोखां कोउ न जरि परैं ।।
कहा कीजे अब तो दूरि गमन कीनौं उठी,
महाज्वाल तातैं अंग-अंग पर जरैं ।
'वृन्दावन प्रभु' बिन जांनि मोहिं एक ली ए,
मारै मार अरु बाकी सेना कैसैं दुखभरैं ।।५५।।

राग मल्लार

जब-जब सुधि आवैं वे सुख, तब-तब दुखते नैननि नीर झरैं ।
जागैं हूँ न चैन दिन रैंन हुँ न नींद, परै कहो कैसैं-कैसैं कैए दिन भरैं।।
महादुसह इह विरह हू तव, याते निशिदिन अंग-अंग जरैं ।
'वृन्दावन प्रभु' बिन कठिन ये प्रांन,
मेरे रहत हैं कोऊ दिन गरैं परैं ।।५६।।

राग मालश्री नाइकी

तुम बिन कैसैं रहौं मन भावन ।
शिशिर वे शिर लौं फिरी वसन्त, में परी मैंन सर धांवन ।।
ग्रीषम विषम लगी जंम हू ते, तनहि मैंन ज्यौं तांवन ।
पावस रितु नैंननि बसि बीती, शरद जरद करि देह जरांवन ।।
'वृन्दावन प्रभु' अब न रहै, जिय जौव धारि हो पांवन ।।५७।।

राग सौहनी

आयो है मास सावन न आये मन भावन,
वे लागे गुन गावन ए चातक हू चहूँ दिश ।

दुख की निशानी इह ठांनी विधि विरहनि कौं,
पीव-पीव बानी सुनि होत मन महारिश ।।
वे तौ महाज्ञानी कछु मन में न आनी पै और,
नेही प्रानी अब जीवैं लागि कौंन मिश ।
'वृन्दावन प्रभु' पानी जानैं न विरानी पीर मीन की,
कहानी इह याहि तो अधिक तिश ।।५८।।

राग विहागरौ

पीव-पीव बोलि रे पपीहा, जीव लै जिन मेरौ ।
मोंहि अकेली जांनि सदन में, मदन कियो है घैरौ ।।
तू तौ गरैं करैं ही जीवत, महा कठिन मन तेरौ ।
'वृन्दावन प्रभु' विरह विकल हम,
प्रान पयान आज बन्यौं नेरौ ।।५९।।

राग मल्हार

ये दुखदाई माई बदरा गरजि गरजि ।
ज्यौं लेति अकेली जांनि तैंसिय पापिनि,
सांपिनि सी इह दामिनि दमकति तरजि-तरजि ।।
तैंसेई मोर सोर घोर करत अति,
निज नारिन तन लरजि–लरजि ।
'वृन्दावन प्रभु' आंवन कहि गये,
राखति प्रान यौं वरजि-वरजि ।।६०।।

राग पूर्वी वा गौरी

मन भांवन आंवन की बतियां,
सुनाई माई तेरी हौं लैऊं बलाई ।
रोम-रोम मेरैं मोद भयो महा,
कहा दैऊं अब तोहि बधाई ।।

देहौं सरवस तोकौं आली,
 री मुख भरिहौं तेरो मिठाई ।
'वृन्दावन प्रभु' कौं जबहिं भेटि,
हौं करिहौं तेरी मन भाई ॥६१॥

राग ललित

ज्यौं ज्यौं पिय आवत सुनि इत नेरैं-नेरैं,
त्यौं-त्यौं विरह ताप घटत दिन-दिन मेरैं ।
वहुत दिनन के तृषित दुखित ये,
चख चातक ज्यौं मग हेरैं ॥
कब आय बरसि है रूप स्वाति सखि,?
उत्कण्ठा मोहि लेति इह घेरैं ।
सोइ छिन सफल ह्वै हैं भेंटि मोहि,
'वृन्दावन प्रभु' प्यारी कहि टेरैं ॥६२॥

राग गौडमल्लार

आजु भलैं ही आए मन भाये प्रीतम सुजान ।
वारि-वारि डारौं या आंवनि पर, तनमन धन अरु प्रांन ॥
तैसीये सुहाई सुखदाई आई पावस, ऋतु बुझिगयो विरह कृशान ।
'वृन्दावन प्रभु' देखैं रोम-रोम,
मोद भयो बाजे मंगल निशान ॥६३॥

भौंन पधारे भलैं पियारे, आजु मनोरथ पूरे हमारे ।
देखत ही यह सुन्दर मूरति, हियो सिरानौं मिटे दुख सारे ॥
नैंन करैं पट पांवड़े गोकुल,-चन्द पैं सरवस वारे ।
'वृन्दावन प्रभु' आवनि हीं सुनि, नेम गये धरि नेग विचारे ॥६४

राग ईमन

दुख तम दूरि भयो सब जीको ।
बढ्यो हरष वारिधि लौं सजनी, वदन इन्दु मुख नीको ।।
सचुपायो अति नैंन चकोरनि, वन सु लोभ गन हीको ।
'वृन्दावन प्रभु' डह डहौ कीनौं, वदन कुमुद सम तीको ।।६५।।

राग टोडा मैंनपुरी

भलैं ही पधारे मन भांवन, करि हौं पलक पट पांवड़े ।
सुख मय वरसे मेह नेह के, तन मन ताप सिरावन ।।
कैसें रहि है धीरज मेरो, देखैं रूप रिझावन ।
'वृन्दावन प्रभु' धाय भेंटि हैं, हौं परि ह्रौं पिय पांवन ।।६६।।

।। इति श्रीगीतामृत गंगा उपालम्भ विरहादि लीला वर्णन अष्टम घाट ।।

अथ नवम घाट (उत्सव वर्णन)

दोहा

अब बसन्त होरी वरनि, दोउ डोल रस ऐंन ।
वरनत सकल कलानि करि, जहां उदीपित मैंन ।।१।।

राग बसन्त

आयो है आयो है वसन्त, सन्तन सुख दायक ।
बनि ठनि रति नायक मन भायक ।।
नव किशलय मंजरि पट भूषन, पहिरि लियैं भट लाइक ।
कुंज कुंज अलि पुंज देत सुर, मधुर संग पिक गायक ।।
'वृन्दावन प्रभु' कौं करत मुजरौ, नित सैंन सहित पंच साइक ।।२

राग सौहनी

आयो है बसन्त भयो मोहितौ अनन्त,
दुख बिना कंत कैसैं या असन्त पै निवहिये ।
देखि-देखि हेली बेली द्रुमनि सौं भेली,
फूली हौं अकेली एक यातैं देह दहिये ।।
कोकिल मराल वांनी लागति कराल,
अति साल से सलत हियं कासौं पीर कहिये ।
'वृन्दावन प्रभु' तौ निपट निरदई दई,
जाकैं हित एतौ अपलोक शिर सहिये ।।३।।

बसन्त बँधावन चली हरि कौं हरिन,
नैंनी हियें हरषि कियें सोरह शिंगार ।
हसित अबीर चोबा चन्दन गुलाल अपांग,
हेम कुम्भ कुचहरी आंगी अम्बडार ।।
लह लहौ योवन जौरोरी गौरी,
अधर बिमल अछत मोती हार ।
'वृन्दावन प्रभु' फूले फूल्यौ सब वृन्दावन,
फूली सखी जन भयो आनन्द अपार ।।४।।

बसन्त मैं कन्त बिना को रहै री,
सोचि विचारि देखौ किन बौरी ।
फूलि-फूलि द्रुम लता लपटि रहे,
नैंकु कुंज तन लखि मन दैरी ।।
इहि समैं मान सिखावै जो कोऊ,
है निहचै वह तेरोई वैरी ।
चलि हठु तजि बलि मांनि कह्यो मो,
'वृन्दावन प्रभु' मिलि सुख लैरी ।।५।।

राग खट वा बसन्त

देखौ ब्रजराज सुत कियें नव साज,
सखी रमत वृन्दाविपिन होरी ।
इतहिं सुवलादि संग बनैं बहुरंग सनैं,
उतहि बनी अलिन लियें राधे गौरी ।।

पिचक की छिछकि रही चहुँ और पूरिकै,
परस्पर भिरत मिलि रंग धारा ।
मनहुँ सब सुख सदन मदन के बाग मैं,
छुटत अनुराग अगनित फुंहारा ।।

कबहुं हरि घेरि मिलि लेति ब्रज सुन्दरी,
कबहुं वृषभानु की कुँवरि बाला ।
वदन लिपटाइ मृगमद सुवन्दन दुहुंनि,
बोलि हो होरी सब देति ताला ।।

बाल अरु लाल भये लाल गुल्लाल रंग,
बढ़ि तिहिं काल कछु छवि अपारा ।
मनहुँ नहिं मात जो गात रुम रोम ते,
उमडि चली नेम तजि प्रेम धारा ।।

जबहिं हरि भण्डु कुट करन लागे वधू,
करनि गहि कनक के दंड धाई ।
मनहुँ चढ़ि दामिनिनि अगन सौदामिनी,
मुदित ह्वै श्याम घन घिरन आई ।।

लचकैं कच कुचनि कैं भार अति छिन,
कटि तामैं पुनि भरि अति रूप भारा ।
चलत ताटंक अरू वंक अलकैं छुटी थर,
हरत उरनि पर मीती होरी ।।

वजत कल किंकिनी चरन नूपुर मधुर,
फर-हरत विविध अंचल सुहाये ।
मनहुँ बनि मैंन की सैंन हरि पर चढ़ी,
बजत बाजे मनहुँ वानैं बनाये ।।
करन लगी मार पुनि उमगि अति प्यार,
सौं ग्वार सुकुमार छल बल बचावैं ।
लगति कोऊ कबहु जो कुटिल चितवनि,
सहित फूल सम मांनि बहु मोद पावैं ।।
कंज की धूरि अरु चूर करपूर कौ,
फिरत भरैं सकल अप अपनी बोरी ।
परत सब बिखिरि कैं डगर अरु बगर मैं,
परस्पर करत झकझोरा झोरी ।।
गावैं सब नारि मिलि गारि बहु भांति की,
घर मगन पूरि रह्यो बहु गुलाला ।
मदन मनौं करन वस युवति जुध जनति,
कौं डारचौ परवीन अनुराग जाला ।।
धाइ पिय लाइ उर लेत बनितानि कौं,
प्रान सम पाइ न छीरत सुहावै ।
'श्रीवृन्दावन प्रभु' रसिक कुल मुकुट मनि,
देत फगुवाव जो जाहि भावै ।।६।।

राग धनाश्री, विहागरौ वा काफी

वै थोरी गोरी मिलि आईं हौरी, खेलन काज प्यारे गोकुलचन्द सौं।
धाईं उमडि सांवन सलिता लौं, फोरि लाज की पाज ।।
सकल कला गुन रूप आगरी, खट दश किये शिंगार ।
सोहत मानौं कनक लता सी, अलक अलिन कै भार ।।

चौवा चन्दन अतर अरगजा, भरैं कर कनक कमांरी ।
पकरि पीत पट नटनागर को, हंसि-शिर परते ढौरी ।।
केऊ मरैं रतन पिचक केशरि रंग, तकि-तकि मारत धारैं ।
केऊ रौरी मुख सौं लपटावति, केऊ देत कर तारैं ।।
लाल गुलाल उड़ाय धूंधरी, करि प्यारी भरि अंक ।
फूली सांझ मांझ सोहत मनौं, घन दामिनि निहसंक ।।
हेम पिचक भरि–भरि धाये, तब सखा लई तिय घेरी ।
मारि धारि नाना रंग कीसौ, जित तित दई बखेरी ।।
इतनैं रसिक शिरोमनि अपनौं, मन भायो करि लीन ।
तव सब सिमिटि दौरि गिरिधर. की मुरली लीनी छीन ।।
तव वोली तुम या मुरली को, राखत हे अभिमान ।
इहि नाद सकल मोह्यो त्रिभुवन, तुम लगे रहत हे कान ।।
अबतो हम तबही यह दैहैं, परि हो लाडिली पाईं ।
करि वोल वचन लैहैं फगुवा, मैं बोलि तिहारी माई ।।
यह सुनि गोप कोप सबहनि के, मुख मृगमद लपटाये ।
मानौं निकलंक शरद सुधानिधि, झीनैं बादर छाये ।।
विविध स्वांग धरि-धरि आये जब, ग्वाल बाल रंग भीनैं ।
नारि गारि मिलि गांवन लागी, मधुर घोर सुर झीनैं ।।
ईंहि विधि खेल मच्यौ वृन्दावन, बढ़्यौ रस सिन्धु अगाधा ।
'वृन्दावन प्रभु' राधा मोहन, पूरी सबनि की साधा ।।७।।

राग काफी

वगर वगर खेलत फिरैं हो गोकुल, नगर मंझार होरी सुन्दर सांवरो।
घर-घर ते बनि-बनि व्रज वनिता, आइ खरी गृह द्वार ।
लै–लै कर कंचन छरी, भरी अधिक ही प्यार ।।
इतते स्वांग विविधि करि-करि कैं, हरि संग आये ग्वार ।

धाय-धाय युवती जन मोद सौं, करन लगी पुनि मार ।।
उडत गुलाल लाल भयो अम्बर, प्रेम घटामनौं उठी अपार ।
दामिनि-सी दमकति तिय, तामें नाना किये शिंगार ।।
बाजे बाजत गाजत है मानौं, सुन्दर शब्द सुतार ।
नाचत गुनिजन मीर मोद सौं, नैंकु न रही सम्हार ।।
पिचक छिछक वरषत रसधारा, भीजे सब इक सार ।
सबहिन मन आनन्द की वेली, उलही सही सुढार ।।
चहुँदिशि ते धाईं विधु वदनी, घेरे नन्दकुमार ।
मनहुँ श्याम घन कौं पहिरायो, पूरन चन्दनि हार ।।
धाइ झपटि लइ लपटि सबै पुनि, उपमा करत विचार ।
चहुँ दिशि तैं मनौं कंचन वेली, लपटी श्याम तमार ।।
केऊ वन्दन लै मुख लपटावति केउ, आंखि आंजति चन्दन दार ।
केउ गुलचा दै दै झक झीरति, फगुआ देउ हमार ।।
केऊ करति मुरति मुरली की, चौरी गौरी जुरी हजार ।
केउ प्यारी गारि मिलि गावति, हो होरी बारम्बार ।।
इहिं विधि रसिक शिरोमनि व्रज में, बरसत रस आसार ।
'वृन्दावन प्रभु' भक्त पपीहनि, यहै प्रान आधार ।।८।।

राग-काफी

भली बनि आई आजु की होरी ।
इत नन्द नन्दन रसिक लाडिलौ, उत वृषभानु किशोरी ।।
फैंट गुलाल भइ भेंट अचानक, करैं झक झोरा झोरी ।
इत ए मृगमद मुख लपटावत, वे मुख मंडित रोरी ।।
ए अंगिया कस खोलत छांनैं, वे मुरली की चोरी ।
'वृन्दावन प्रभु' लेत बलैया, चिरजीवो यह जोरी ।।९।।

राग वसन्त

होरी मांझ भोरी, कोऊ जोरी बिन रहत है ।
ठौर ठौर नर-नारि गावत धमारि गारि,
इहि रितु दम्पति रस सम्पति लहत है ।।
तैं तो तहां मान ठान्यौं सौतिन कैं मन,
मान्यौं देखि-देखि सखिनको दहति हैं ।
'वृन्दावन प्रभु' बैठे देखत हैं मग तेरो,
तूतो न चलत न कछु जिय की कहति है ।।१०।।

राग वसन्त

ख्याल में लाल बुरो मति मानौं,
या मैं तो एक है रंक औ रानौं ।
होरी में भोरी है गौरी सबै जु,
सयानौं सौऊ ह्वै जात अयानौं ।।
आप की जांघ उघारे तैं आप कौं,
लाज यहै जग में उप खानौं ।
सो तो इहां नर-नारि करैं जु जितौ,
इति तौ अधि को गुन जानौं ।।
बहुतैं दिन नारि भिज़ाईं खिजाईं,
सुनांहि बनैं अव तौं दियैं कानौं ।
'वृन्दावन प्रभु' आजु रिझाइ है,
आनि परचौ हम सौं अब पानौं ।।११।।

राग वसन्त

आंखिन लाल गुलाल न डारौ,
कौन सुभाव परचौ है तिहारौ ।
काहे करो छल छिद्र इतौ अब,
निशंक ह्वै क्यौं न प्यारी निहारौ ।।

बहुतेरौ करैं जु न ऐये इतौ सु,
करैं कहा चित रहै न हमारौ ।
'वृन्दावन प्रभु' बहु नाइक हौं मन,
तो अपनौं करि राख्यौ है पारौ ।।१२।।

राग वसन्त

खेलत फाग सुहाग भरी,
अनुराग भरे बड़भाग पिया सौं ।
बाल गुलाल लै लाल पै डारैं,
निहाल ह्वै लाल लगावैं हिया सौं ।।
पिय केशर की पिचकी भरि डारत,
सींचत मानौं सनेह जिया सौं ।
'वृन्दावन प्रभु' दम्पति छवि देखैं,
रति कौन करै रति काम छिया सौं ।।१३।।

राग काफी

हो होरी खेलौंगी श्याम सुजान, सौं गुणगण रूप निधान सौं ।
चोबा चन्दन अतर अरगजा, चरचौंगी बहुमान सौं ।।
बाजत ताल मृदङ्ग चङ्ग मन, अटक्यौं मुरली तांन सौं ।
निशंक हँसो सब लोक सखी री, काम कहा मोहि आन सौं ।।
याही मिस भेटौंगी सजनी, 'श्रीवृन्दावन प्रभु प्रान सौं ।।१४।।

राग काफी

चलौ री री चलौं खेलैं गुपाल सौं, सुन्दर नैंन विसाल सौं ।
सजि नव सत अभरन अंवर वर, भरि-भरि फैंट गुलाल सौं ।।
वेऊ अतैं ऐहैं बनि ठनि, मद गयन्द की चाल सौं ।
'वृन्दावन प्रभु' ह्वै हैं सखा संग, तौंरे मनौं इक डाल सौं ।।१५।।

राग बसन्त

चलौ चलौं खेलैं री व्रज, की खौरि खरे गुपाल ।
बनि-बनि सब गोपी इक डारकी सी,
तोरी झोरी भरि-भरि लेहु गुलाल ।।
उत हलधर श्रीदाम सुदामां सहित,
सकल सजि आये ग्वाल ।
'वृन्दावन प्रभु' मुख मांडि छांडि हैं,
इक मनि ह्वै दै दै अंक भाल । १६।।

राग वसन्त

खेलन लागी बिहारी सौं प्यारी,
लागि रही तन सु सुख सारीं ।
धाइ गुपाल लाल केशरि रंग,
भरिमारी पिचकारी ।।
मृदु मुसुकाय गुलाल थाल भरि,
वाल लाल पर डारी ।
टोलनि टोलनि निकसि घोष ते,
गावन गारी मिलि नारी ।।
केऊ मुखरा पट पीताम्बर लै दई,
गांठि जो नैंन बिहारी ।
केऊ कहैं हा होरी देखौ,
भली बनी यह पारी ।
वन्दन लाइ श्याम मुख सब ही,
देन लगी कर तारी ।
श्याम सखा सब्रहिन मुख चौवा,
लपटायो भरि-भरि अंक वारी ।

लै लै हेम दण्ड ह्वै चहुँ दिशि,
खिजि गहि हरि शिर कुंकुम ढारी।
'वृन्दावन प्रभु' फगुवा दै छुटि,
हौ आंनि बनी हमरो अब वारी ।।१७।।

राग बसन्त

खेलत फाग दोऊ रस भीनैं, राग गुलाल रह्यो छाई।
हास अवीर परस्पर चरचत, शुचि चोवा लपटाई ।।
बोलनि मधुर वीन धुनि साजैं, बाजैं कल भूषन अंग।
मृगमद अगर जवादि कुंकुमा, किल किंधित बहु रंग ।।
छूटत पिचक कटाच्छ चहूँ दिशि, भरी (है) अधिक अनुराग।
'वृन्दावन प्रभु' को सुख निरखत, ललितादिक वडभाग ।।१८।।

राग खम्मावती

खेलत होरी किशोर किशोरी जू,
संग सखा सखी वृन्द लियैं।
अवीर गुलाल उड़ावत गावत,
स्वांग किते वहु भांति कियैं ।।
भरि केशरि पिचकारी विहारी,
पियारी उरोजनि पैं तकि मारैं।
संभूकौं सींचैं सनेह भरे,
अरविन्द मनौं मकरन्द की धारैं ।।
बाल गुलालनि मूठि भरैं हँसि,
गारि दै लाल गुपाल मैं मेलैं।
श्याम तमाल कौं हेम लता,
सु मनौं अनुराग पराग सौं रेलैं ।।

केउ दौरि गोविन्द कौ अंचर छोर,
गहैं हठि क्यौंहूँ छुरायो न छौरैं ।
देउ कहैं फगुवा भगुवा,
हमैं दैदै बधू गुलचा झक झौरैं ।।
केउ निशंक ह्वै कुंकुम पंक मयक,
मुखी मुख सौं लै लै लगावै ।
केउ गहि काहू को अंचर,
वाल पिताम्बर अंचर सौं हंसि जोरत ।।
केउ भरी कंचन की गगरी,
डगरी-डगरी पगरी पर ढौरत ।
गावति गारि केऊ मिलि नारि,
मुरारि सखा सुनि त्यौं-त्यौं हँसैं ।।
मुसुकानि विलोकनि बोलनि मैं,
दुहुँ धां सरसैं रस ही वरषैं ।
केऊ मोद सौं आइ कैं मादक,
माल वै नैंन विशाल गरैं गहि डारैं ।।
ग्वाल सबै जलयन्त्रनि मारि,
तबै तहाँ ते तरुनीनि निवारैं ।
सौंधैं की कीच मची रपटैं,
छपटैं लपटैं सखी श्याम सखारी ।।
'वृन्दावन प्रभु' दम्पति पैं रति,
काम की सम्पति कोटिक वारी ।।१९।।

राग हिंडोल

गोकुल की गलिन मैं ग्वाल, नन्दलाल बाल झोरिन भरैं,
गुलाल खेलत हैं फाग री ।

बनैं चीरैं वागैं देखैं दृगन के दु:ख भागैं,
लागैं अति प्यारे श्याम बांधैं पीत पागरी ।।
डगर वगर घर-घर अटारी अटा,
अटि भये लाल सब बन बाग री ।
अत्तर अरगजा चोबन केशरि की,
कींच मची भरि-भरि डारैं शिर कंचन की गागरी।
जिनपर बारी सु नारी और को विचारी,
गावैं मिलि गारी प्यारी-प्यारी बडभाग री ।
'वृन्दावन प्रभु' देत फगुवा मिठाई मेवा,
भूषन वसन वर भौनैं अनुराग री ।।२०।।

राग वसन्त

खेलत रघुवर राज समाज सौं, आजु अवध मधि फाग ।
संग सखा अरु अनुज रंग भरे, अनुचर भरे अनुराग ।।
चढैं रघुचन्द गयन्दनि चारयौं, उपमा कहत सकात ।
शीश धरैं विधु घन दामिनि, मनौं चड़े घनन पर जात ।।
पीत वरन वागैं अनुरागे, लगैं परम सुहाये ।
मनहुँ काम अभिराम रस पोषत, चतुर व्यूह ह्वै आये ।।
जगमगाति अंगनि नग भूषन, छवि की उठत तरंग ।
तन-मन नैंन-वैंन सबही की, निरखि होत गति पंग ।।
गज-रथ-अश्व पदाति भांति बहु, सजि ठाढ़े चहुँ ओर ।
वीथनि-वीथनि खेल मच्यो हो, होरी दशौं दिशि शोर ।।
पुर वनिता वनि बनि जु अटनि पर, लियें कनक पिचकाई ।
मारत तकि-तकि राजकुमारनि छवि, सौं झरोखनि देत दिखाई ।।
सजैं अभरन षटदश वै, सवै रूप की राशी ।
रति रम्भा उरवशी-सुकेशी, लजत होत जिन दासी ।

इत ते छुटत गुलालन मूंठी, लगति वधुनि मुख जाई ।
मनौं परिपूरन चंदनि संध्या, रही ललाई छाई ।।
सूझत नाहिंन कोऊ काहु कौं, उडि गयो गगनि गुलाल ।
भई एक रंग सब चतुरगनि, लाल भये सबही लाल ।।
बाजत बाजै गाजत घन ज्यौं, गुनी करत सब गांन ।
हयगय रथ मोती मानिक, मनि वकसत परम सुजान ।।
गावति गारि नारि रस भीनी, हंसत सकल रघुवीर ।
'वृन्दावन प्रभु' देत जु फगुवा, मनि मेवा वर चीर ।।२१।।

राग धनाश्री

खेलत होरी, गुरुजन चौरी, पिय संग गोरी ।
रति रस बोरी, वयस किशोरी, हरि मन वन्धन डोरी ।।
बूका रोरी, भरि-भरि झोरी, कनक कमोरी, केशरि घोरी ।
बिलसौ सुख जोरी, ब्रज की खौरी,
'वृन्दावन' डारत तृन तोरी ।।२२।।

राग सारंग

हो हो हरि भले अकेले पाये ।
बहुत दिनां तुम भाजि छूटे हो, आजु करैं मन भाये ।।
देखो तुम्हें भड़ुआ करि छोरैं, जैसे गीतनि गाये ।
'वृन्दावन प्रभु' लैहैं बदलौ, हमें तुम नाच नचाये ।।२३।।

अथ राग दोल सोहनी

झूलत दोऊ विहारी विहारनि, कालिन्दी के कूल ।
दोलाकृति द्वै लगे कल्प तरु, मणिमय फल पल्लव अरु फूल ।।
दुहुँ दिशि कनक लता डोरी ज्यौं, लागी परम सुहाई ।
तासौं लपटि लता नाना मणि, पटुली रुचिर बनाई ।।

बोलत मधुर विविध पंछी, अलि गुंजत कुंज रसाल।
गावति झोटा देत हेत सौं, 'वृन्दावन प्रभु' कौं ब्रजबाल ।।२४।।

फूलदोल—राग धनाश्री

झूलत फूले फूल कैं डोल ।
नानाविध फूलन भूषन, फूलनि गूंथे विमल निचोल ।।
फूली मंजु कुंज कालिन्दी, कूल फूलके महल अमोल ।
फूली-फूली सखी झुलावति, 'वृन्दावन' गावत पिकटोल ।।२५।।

गुण गौरी पूजन राग गौरी

गौरी पूजन आई गौरी, भोरी-भोरी वय थोरी ।
नाना विध भूषन पट पहिरैं, अरु कियें तिलक ललाटनि रोरी ।।
अंजन रंजित खंजन से दृग, रूप सुधा रस बोरी ।
'वृन्दावन प्रभु' कुटिल कटाछनि, वश कीनैं वरजोरी ।।२६।।

राग ईमन

झूलत दोऊ परस्पर हिय आंगन ।
प्रनय प्रेम खम्भ लज्जा मर्यादि, तामें डोरी आसमन ।।
पन पटुली आनन्द झोटा, देति रति सखी जन ।
'वृन्दावन प्रभु' प्यारी बिहारी, सुख विलसत एकैं प्रान द्वै हैं तन ।।२७

अक्षय तृतीया-राग सारंग

द्वापर जुग की आदि तिथि अखैतीज हरि राई ।
प्यारी सहित राजत मन्दिर में पहिरैं,
मलय मय वसन भांवते फूलनि माल बनाई ।।
शिख-नख ते मोतिन-मोतिन, भूषन मुख शोभा अद्भुत होत ।
नाना विधि शीतल सामग्री, धरी जु आनि अनन्त ।।
चन्दनसैं छिरकैं खस पंखा, चहूँ दिश करन ।

करपूरादिक जुत वीरी भरि, डबा निवेदन कीन ।।
वृन्दावन प्रभु' की छवि देखैं भयो हियो शीतल सबही न ।।२८।

राग टोडी

अखै तृतीया त्रेता युगादि तिथि चन्दनी,
बागो पहिरैं नन्द–नन्दन जग वन्दन ।
तैसी ये पाग पीत पटुका पुनि,
तैसोई उपरैंना दुख कन्दन ।।
नानाविध शीतल भोग पुहुप माल,
उशीरन के पंखा होत छिरकै सुगंध चन्दन ।
'वृन्दावन प्रभु' प्यारी बिहारी निजजननि कौ,
हियौ सिरावत पूरत मन स्यन्दन ।।२९।।

जलक्रीडा राग खट् पूरवी

करत जल केलि गोविन्द व्रज सुन्दरी,
उहिं समें उचित सोई वेश कियैं ।
सघन अरविन्द वन रमत अति मौद सौं,
मनहुँ मदकलकलभ करिणी लियैं ।।
छिरकैं सब श्याम कौं वाम चहुँदिशि भई,
परमरस मयी छवि अधिक पावैं ।
मनहुँ घन नील कौं घेरि सौदामिनी,
कमल सम्पुटनि भरि–भरि नहावैं ।
बूडि वनिता यमुना जल हि में आइकैं,
परसि पिय पांय कहुँ जाय निकसैं ।
सघन घन आवली फारि मनौं विधुनिकर,
अप अपनी चौंप चहुँ और विकसैं ।।

एक ही वेर हरि हरिन नैंनी कबहूं,
हौड परे मोद भरे पैरैं आछैं ।
मेघ पुर मेघ आरुढ ह्वै खेल मनौं,
करत चपला चमूं लियें पाछैं ।।
चुवत सुकुमार बड़े वार तिय वदन पर,
अमृत की धार मनौं श्रवत चन्दा ।
निरखि अनिमेष ह्वै रहत 'श्रीवृन्दावन',
प्रभु पिय नयन तृषित चकोर द्वन्दा ।।३०।।

रथयात्रा राग टोडी

प्यारी के मनोरथ रथ बैठे लाल बिहारी,
कुंजनि-कुंजनि करत क्रीडारी ।
वेग चपलाई हय चौंप चाहि चक्र उभै,
रुचि नेम धुरि दोऊ गाढी है महारी ।।
लाज राशि भाव जूवा बांध्यो नारी लगनि,
दृढ़प्रेम दूरौ सारथी प्रवीन वे बिहारी ।
'वृन्दावन प्रभु' नानागति सातिक सनेह,
पंथ तामे मान आखरी प्रनय राग गहारी ।।३१।।

राग धनाश्री

पौढे योग की नींद मुरारी, दुग्ध फेन सम सेज संवारी ।
सुदि अषाढ़ एकादशी, तिथि नक्षत्र शुभकारी ।।
सब सेवा विधि करि पौढाए, ब्रह्म शेष त्रिपुरारी ।
चरन पलोटति कमला देवी, तीन लोक महतारी ।।
शेष सहस फन मनि दीपक, दुति जगमग-जगमग भारी ।
'वृन्दावन प्रभु' कहा वरनौं, छवि वानी वरनत हारी ।।३२।।

राग गौड मल्लार

सब सुखदाई पावस रितु दामिनि,
कामिनि कीनों अभिसार ।
वादर आदर करि आंकौ भरि लीनी,
बहौत दिन के विछुरे ।।
मिले दम्पति पिक चातकी,
भौंरी गावै मंगल चार ।
हठु तजि चलि मोहन सौं मान,
करि वे की इह कौन वार ।
बैठे मग देखत ह्वै हैं जे रो ही,
(श्री) 'वृन्दावन प्रभु' नन्दकुमार ।।३३।।

आयो-आयो आगम ऋतुराज,
गुनीजन समाज लियें संग ।
चपला चातुरि पातुरि नाचत,
गति भेदनि मुदिर मृदंग ।
उघटत चकोर भौंर सुर धारी भारी,
बीच-बीच नाचत मोर नटुआ सुधंग ।
'वृन्दावन प्रभु' प्यारी विहारी उठि देखौ,
छवि सघन वन कुंज-कुंज बरसत अतिरंग ।।३४

राग मल्लार

चढ़ि आयो आगम नृप अकाल बैरी पर ।
गरजनि बाजत निशांन इन्द्र धनुक,
लियैं पांनि धुरवागन एई भये सर ।।
कारे घन मतवारे कुंजर बलाकादंत,
ओला गीलर सम तेग लडितवर ।

'वृन्दावन प्रभु' प्यारी विहारी उठि देखौ,
छवि सघन वन कुंज कुंज वरसत अति रंग ।।३५

आई पावस ऋतु घनघौरैं,
थोरैं-थोरैं मानौं मानिनीन कौं निहारैं।
हरी भरी भूमि पर इन्दु,
वधू गन देखत ही चित चोरैं ।।
ऐसे में सजि प्यारी सारी कसूम्भल चढ़ि,
ठाढी अटारी कारी कंचुकी तन गौरैं।
'वृन्दावन प्रभु' ओट भयें छवि,
देखि – देखि तिन तोरैं ।।३६।।

ओह्लरि आई श्याम घटा, चहुँ दिशि लगै सुहाई ।
नान्हीं-नान्हीं बूंदनि रिम झिम वरसत,
तैसिय कौंधनि छवि सौं छटा ।।
श्यामाश्याम प्रेम मदमाते,
चढि ठाढ़े अप अपनी अटा ।
वृन्दावन झर लायो कटा छनि,
इत नागरि उत नागर नटा ।।३७।।

ठाढ़े दोऊ सघन कुंज की छैय्यां ।
बड़ी–बड़ी बूंदनि बरसत,
बादर मेलि रहे गर बहियां ।
वहुत दिननि के बिछुरे बातनि,
करत हुती जे मन महियां ।
(श्री) 'वृन्दावन प्रभु' चाहत हैं,
नित ऐसी बनैं विधि कहियां ।।३८।।

बैठे सखी श्यामा श्याम अटारी ।
करत परस्पर मोद भरे दोऊ,
रति विनोद की बातैं,
गरजि-गरजि बरसति बड़ी बूंदैं,
चहूँ दिश श्याम घटा री ।।
पीत वसन घन सुन्दर पहिरैं,
दामिनि दुति भामिनी सुही सारी ।
लहँगा छापदार हरियारौ,
सुन्हरी कौर कंचुकी कारी ।।
चकोर सोर चहुँ ओर करत मिलि,
पिय-पिय करत पपीहा भारी ।
कहति किशोर नव किशोर सौं,
यौं हम रटत तुम्हैं गिरधारी ।।
हरित भूमि जहां झुमि रहे घन,
नचत मोर लखि-लखि निज ना(ही)री ।
'वृन्दावन प्रभु' कहत प्रेम वश,

यौं तुम हमहिं नचावत प्यारी ।।३९।।
गरजन घन सघन बन छोटी,
छोटि बूंदनि बरसि - बरसि ।
तहां बैठे करैं बातैं छवि छाकैं श्यामा,
श्याम रूप परस्पर दरशि-दरशि ।।
सोहैं सूहे वसन पर फबतेई अभरन,
हरै श्रम त्रिगुन पवन परसि-परसि ।
चहुँ और मोर नृत्य करत चकोर सोर,
पीव-पीव रटत पपीहा सरसि-सरसि ।।

हरी-भरी दूब पर इन्दु बधू ठौर-ठौर,
पहिरी मनौं भूमि हरी चूनरी तरसि-तरसि ।।
सब गुननि आगर गावत मलार लेत,
'श्रीवृन्दावन प्रभु' तांन अरसि-अरसि ।।४०।।

सांवन तीज, राग धनाश्री

चली हैं हिंडौरै जुरि मिलि झूलन,
बनि-बनि गोप किशोरी ढूलन ।
करि करि मंजन दै-दै अंजन,
रंग—रंग पहिरैं दुकूलन ।।
गावत गीत मीत रस पागी,
दये भुजा-भुज मूलन ।
मद गज गति रति पति मदमाती,
हसत लसत मनौं बरसत फूलन ।।
सुर नर नाग असुर किन्नर,
हू बनिता जिन सम तूलन ।
'वृन्दाबन प्रभु' रस बस कीनें,
नैंन सैंन शर ऊलन ।।४१।।

राग त्रिवन गौरी

बरसानें की बनि-बनि बाला, निकसी खेलन आज ।
तिन मधि अति राजति श्रीराधा, ज्यौं तारनि उड़ु राज ।।
लहँगा हरे कसूम्भल सारी, कुन्दन से तन कंचुकी श्याम ।
शिख-नख ते भूपन नाना विधि, रचि-पचि कें पहिरै अभिराम ।।
हरित भूमि जहां झूमि रहे घन, तहां ठाडी रही जाय ।
फूली मानहुं मदन भूप की, गुलहवांस फुलवाय ।।

रचे हिंडौर सातैं मनभातैं, चन्दन के जु सुतार।
धाइ जाइ तहां झूलति गावति, घोर मन्द्र मिलि तार।।
मचकि-मचकि झूलन लगी होडा, होडी बढी जु कांति।
मन हुँ गगन ते दामिनि भू पर, आय-आय फिरि जांति।।
तैसीये फूली सांज सुहाई, तीज मनौं धरि आई रूप।
चातक मुख पीव-पीव बोलि, मनौं कहत संकेत अनूप।।
सुनि-सुनि ताल बँधान गांन धुनि, थिर चर गति भई और।
सुर-किन्नर-गन्धर्व बधुनि कैं, रहि न गर्व कीं ठौर।।
उहिं औसर नन्दनन्दन बनि-ठनि, आये सखानि लियें संग।
लखि सबहिन आनन्द उदधि, बढी उठी अनंग तरंग।।
निरखि छवीलिन छकै लाल हू, नैंकु न रही सम्हार।
'वृन्दावन प्रभु' पूरे मनोरथ, बरसि कटाछनि धार।।४२।।

राग कनडी

गोकुल चन्द हिंडौलैं झूलत, फूलत लखि-लखि प्यारी जू।
पहिरैं वसन सुरंग सुहाये, अंग-अंग छबि न्यारी जू।।
कंचन खम्भ खचित नाना नग, तैसीये बनी मयारी जू।
डोंडी जटित हरित मनि मनिमय, नाचत पिक शुकसारी जू।।
ललितादिक लियें संग सहेली, झूलवति वारी बारी जू।
सांवन मनभांवन सब पिव-पिव, रटत पपीहा भारी जू।।
झूंडनि-झूंडनि गावत राग, मलार मिली ब्रजनारी जू।
कुंज-कुंज अलि पुंज-पुंज सुर, देत मनौं सुरधारी जू।।
नाचत मोर किशोर चहुँ दिश, दीशति भूमि हरचारी जू।
'वृन्दावन प्रभु' प्रफुलित वृन्दावन, देखि-देखि गिरधारी जू।।४३

राग मलार

हिंडौरैं झूलति मचकि-नचकि, पिय प्यारे के संग।
नील पीत पट फरहरात अरु जान, छीन कटि लचकि-लचकि।।

गावत राग मलार मधुर सुर लेत, तांन अति हरषि-हरषि ।
'वृन्दावन प्रभु' की छवि निरखत,
गरजत घन वन बरषि–बरषि ।।४४।।

राग मलार

पवित्रा पहिरावो हरि, कौं होइ पवित्र ।
सावन सुदि एकादशी, गावो कृष्ण चरित्र ।।
वरस द्यौंस पूजा सब कीनी, याते पूरो होत ।
पाप वृंद जरि जात है, दिन–दिन भक्ति उदोत ।।
नाना विधि भोजन सामिग्री, करौ निवेदन ल्याइ ।
करौ प्रसाद सेवन दूजै दिन, 'वृन्दावन प्रभु' भक्त बुलाई ।।४५।।

राखी राग मलार

आजु सखी सांवन पून्यौं सुहाई, घर-घर वजत वधाई ।
राखी वांधन नन्द सुवन के, विप्र सवासनि आईं ।।
हेमथाल मधि श्रीफल रोरी, मोती अछत वीरा मिठाई ।
'वृन्दावन प्रभु' भूषन अम्बर, यथा योग्य पहिराई ।।४६।।

राग ललित

भादौं सुदि एकादशी, लई करोट हरिराई ।
तिहुँ पुर जै जै धुनि, भई बाजे उठे वजाई ।।
गीत महोछव करि महा, षोडश विधि पूजा करैं ।
'वृन्दावन प्रभु' जगतपति, जनम-मरन ताके हरैं ।।४७।।

अनन्त व्रत कियें तैं अनन्त फल पाइये ।
गावत अनन्त गुन मुनि जन सन्त जाकौ
रमा कन्त सज्या जाको देह दरसाइये ।

जगर-जगर होति अनन्त फन मनि जोति,
वाही ते दशों दिश तिमिर नशाइये ।
'वृन्दावन तुम पास मागत इह पूरौ आस,
जनम-जनम गोपाल गुन गाइये ।।४८।।

अथ सांझी राग शुद्ध कल्यान

आवति सांझ समैं सजनीन कौं, संग लियें वृषभानु किसोरी ।
सांझी के पूजन कैं लियें फूलनि, वीन भरे अप अपनी झोरी ।।
हेम वरा गजरा गज मोतीन, पोति हरा हरि की मति चौरी ।
भरैं वहु नेवज सी नटरा धरैं, अंजन चन्दन वन्दन रोरी ।।
सजैं कसुम्भल सारी सुरंगरु, राजैं हरी अंगियां तन गौरी ।
'वृन्दावन प्रभु' सौं मांगति नेह,
पसारि-पसारि दुहुं कर औरी ।।४९।।

लंका विजयदशमी राग टोडी

आजु चढ़े रघुवंशभान,
अगडधी-अगडधी वाजे निशान ।
तिहुं लोक सुन्यौं सुर भये अशोक,
हलि कंपि उठ्यो लंकेश रांन ।।
श्याम गौर अभिराम धाम शिर,
जटा मुकुट कर चाप वान ।
षड तीन पद्म कपि सैंन संग,
तिन अग्र सुभट हनुमान जांन ।।
चली उदधि सेतु पर करत केलि,
उलट्यौ उदधि परमांनौं उदन्वान ।
'श्रीवृन्दावन प्रभु' जीति दशानन,
थाप्यो विभीषन कृपा निधांन ।।५०।।

दीपावली राग कल्यान

आजु दिवाली को दिन नीकौं ।
आंगन–आंगन चौक चहुँ दिश, दीपदान वन्यौं घी को ।।
सदन सुनाना चित्रनि चित्रे, वदन मुदित सवही को ।
पान-मिठाई मेवा हटरनि, भरयौ मन मान्यौं जी को ।।
खेलत निज-निज अटनि जुवां सुव, युगल मिल्यौ ती पी कौ ।
वदत जुवाजी राजी ह्वै, म्हैं अंकमाल भरिवी को ।।
गावति मंगल गीत-मीत सौं, जिहिं विधि लगनि लगी को ।
'वृन्दावन प्रभु' को सुख निरखत, गन ललितादि सखी कौ ।।५१

राग गौरी

आजु बडौ त्यौंहार दिवारी, व्रज में अति याकी महिमा री ।
चौकनि-चौकनि चौक वनें, घनें घर-घर वन्दन माला री ।।
घर बाहर नाना रंग पानुस, दीपनि की द्युति भारी ।
कहा बरनौं अति अद्‌भुत शोभा, रतन जटित मनौं पुर रचना री ।।
सजैं अमोल आभरन अंबर, सब्र वृद्धा जुवती बाला री ।
जा विधि विप्र करावति पूजा, ठौर-ठौर पूजत कमला री ।।
द्वार-द्वार बाजत हैं बाजे, खेलत नर अरु नारि जुवा री ।
ग्वाल बाल लियें गोपिन गारि, बगर-बगर गावत गिरिधारी ।।
गौरी दौरी फिरत उछाह में, मनौं कौंधति चपला री ।
भूलिजात सब निज सुभाव गति, विवश होत लखि नन्दलला री ।।
उन सट पट लखि नट नागर हू, रहत थकित ह्वै कहूँ कहा री ।
दृग-दृग मन-मन दौरि मिलैं तन, तरसैं परसन काज महा री ।।
लै–लै दोरति पान मिठाई, परसन की उत्कण्ठा री ।
इहिं मिश निश पूरत जु मनोरथ, 'वृन्दावन प्रभु' अरु प्यारी ।।५२

श्रीगोवर्द्धनोद्धरण राग खट

आजु ब्रजराज सुत धर्‌यौ गिरिराज कर हर्‌यौ,
सुर राज को गरव भारी ।
बरसि महा प्रलय जल, दई न कल एक पल,
मेघ माला सकल दिक सात हारी ।।
चमकैं विद्युत छटा, महा माई जटा,
पटकैं गिरि घटा पर मनहुँ न्यारी ।
ह्वै कैं रिस गनन, ते कुलिश डारे अगन,
मगन रहे सब सुगई कनिका न टारी ।।
कृपामय राखे पशु, पंछि लच्छन सुदच्छ गोप,
गोवच्छ गन निपट हितकारी ।
'वृन्दावन प्रभु' जांनि, आंनि पर्‌यौ पाई,
गिरिधारी भयो नाम तब तैं बिहारी ।।५३।।

बलि कीनी मनैं वलवीर जवैं,
सु कियो तब कोप सचो वर री ।
दिन सात चलाई कैं बात महाई,
लगायो तहां अति ही झर री ।।
उपमा इक अद्‌भुत ऐसी बनी,
गिरिवायें उठाइ लयो कर री ।
गिरि पैं घन बैठत हे जु सुनैं,
घनश्याम पै देख्यौ मही-धर री ।।
पशु पंछी कुतूहल कीयो करैं,
रहे गोधन गोप उहीं तर री ।
पछिताइ कैं आइकैं पीछे तैं पांय,
परयो 'श्रीवृन्दावन प्रभु' कै डर री ।।५४।।

हरि कौ हरि औगुन गुन मान्यौं ।
झरि लगाइ दिन सात आइ हठि,
वरष्यौ महाप्रलय को पान्यौं ।।
इहिं मिस गुरुजन लाज काज,
तजि सब मिलि गोप कुंवारि ।
इहिं रस बस जान्यौं न भार,
कछु गिरि राख्यौ कर धारि ।।
जानि बूझि गोपाल लाल गिरि,
गिरचौ जनु यौं कर देत झुलाइ ।
युवती-जन मैं मानि कानि,
तजि लपटैं श्याम उर आइ ।।
होत महा आनन्द परस्पर,
ज्यौं निधि पाये रंक ।
मनहुं श्याम घन कौं लपटानी,
चपला दौरि निशंक ।।
पीछे सकुचि समुझि हरि उरते,
नीठि जुदी ह्वै जाति ।
लेत बलैया दूती लखि मुख,
अंचर दै मुसकाति ।।
इहिं विधि पूरि मनोरथ सब कैं,
धरचौ गिरिवर निज ठौर ।
'वृन्दावन प्रभु' पांइ आइ परचौ,
लै सुर भी देवनि शिर-मौर ।।५५।।

राग धनाश्री

काती सुदी एकादशी, जागे त्रिभुवन राई ।
तिहूँ लोक पूजा करि, बजे विविध बजाई ।।

अन्न चतुर विधि जिते जहां, कहूँ उपजे शुद्ध नवीनैं ।
यथा शक्ति सब आनि आनिकैं, तितै निवेदन कीनैं ।।
योग-यज्ञ-तप-तीरथ-ब्रत, ब्याह काज सब कर्म ।
प्रभु जागैं जागे सबै, वर्णाश्रम के धर्म ।।
भयो उछाह ब्रह्माण्ड सकल में, दीप-दान सब कीन ।
गाये मंगल गीत मधुर सुर, पाप तिमिर भये छीन ।।
हरि सेवा विन वृथा सबै हैं, यह समुझो सब कोइ ।
'वृन्दावन प्रभु' भक्ति करौ मिलि, भाग भलौ जो होइ ।।

।। इति श्रीगीतामृत गंगा वसन्त उत्सवादि वर्णन घाट नवम ।।

अथ दशम घाट

दोहा

नाम चरित गुन कृष्ण के, ऊंचे सुर जु कहन्त ।
उह कहियतु हैं कीरतन, करत सु सन्त-महन्त ।।१।।

नित्य कृत्य उन कौ सु यह, जेहैं हरि के दास ।
श्रीमुख नारद सौं कही, उहांई मेरौ वास ।।२।।

कलियुग में इह मुख्य है, अस साधन कोऊ नाहिं ।
और ठौर ठहरैं न कहुँ, चित वृत्ति डिगि जांहि ।।३।।

राम कृष्ण केशव हरिगावो, मन माधव पद लै उरझावो ।
झांझ-ताल-मिरदंग-बजावो, तनु तरुते अघ विहँग उडावो ।।
निन्दक जनते कछु न सकावो, गोविन्द आगैं तनहिं नचावो ।
निति प्रति श्रीयमुना में न्हावो, महा प्रसाद यथा रुचि पावो ।।

अपनैं जांनि न काहु सतावो, परमारथ तन-मन दै धावो ।
हरि परिकर राखत जो दावो,
बसो 'श्रीवृन्दावन' व्रज में भावो ।।४।।

गोविन्द अच्युत राधा माधौ, भव भेषज साधौ यह साधौ ।
इह नर-देह पोत है लाधो, जग जलनिधि किन तरो अगाधो ।।
अधम अजामिल लयो जु आधो, सोऊ भवदव ताप न दाधो ।
हरि बिन और सबै है बाधो,
सब तजि 'श्रीवृन्दावन प्रभु' आराधो ।।५।।

लैलैं रे लैलै हरि नाम, ये दिन क्यौं खोवत बे काम ।
आव घटत पल घटिका जांम, इन्द्रिन मुख दै ज्ञान लगाम ।।
संग न चलि हैं ये धन धाम, मरैं न कोऊ छूवै है चाम ।
अन्त समैं रच्छिक हैं राम, हिय तैं खोलि कुमति की खांम ।।
मांनि कह्यो मो उदर गुलाम, सुगम उपाय लगै नहिं दाम ।
शरण गहैं न लगै भव धाम, 'वृन्दावन प्रभु' भजि घनश्याम ।।६

जो हरि नाम विसारैगो, सो जीती बाजी हारैगो ।
यह नर देह पुण्य सौं पाई, कौंन जौंन पुनि जैंहैं भाई ।।
नाम नामी में करै जु भेद, खैंहैं जमपुर जाइ लवेद ।
नाम लेत नामी की निन्दा, करै सुनीच जगत में गन्दा ।।
सच्चिदानन्द रूप है नामी, विधि शिव-शेष-सुरेश को स्वामी ।
तीन लोक रचना जिन ठानी, भक्तन हित ब्रज में रुचि मांनी ।।
वहां निरन्तर करत विहार, जाको निगमन पावत पार ।
परम पुरुष नर वर वपुधारी, बहै नन्दसुत कुंजबिहारी ।।
जन्म कर्म मेरे हैं दिव्य, जानत हैं पंडित जे भव्य ।
भवसागर सौं तिन्हैं उधारौं, विमुखन असुर जौंनि में डारो ।।

परे रहैं नरकनि में सदा, युग-युग में निकसें नहिं कदा ।
नित्य बद्ध वै जीव कहावैं, जे भौतिक मो तनहिं बनावैं ।।
श्रीमुख श्रीगीता में ऐसैं, कह्यो सुनि लीज्यौ आस्तिक तैसैं ।
हरि बिनु मुक्ति नहीं यह जानौं, निशिदिन रटत सुवेद पुरानौं ।।
तातैं और कहूं मति धावो, 'श्रीवृन्दावन प्रभु' कौं नित गावो ।।७

राधे कृष्ण राधे कृष्ण राधे गोविन्द,
राधे कृष्ण राधे कृष्ण गोकुलचन्द ।
राधे कृष्ण राधे कृष्ण मदन गोपाल,
राधे कृष्ण राधे कृष्ण गिरिधरलाल ।।
राधे कृष्ण राधे कृष्ण गोपीनाथ,
राधे कृष्ण राधे कृष्ण मंगल गाथ ।
राधे कृष्ण राधे कृष्ण श्यामा श्याम,
राधे कृष्ण राधे कृष्ण मंगल नाम ।।
राधे कृष्ण राधे कृष्ण युगल किशोर,
राधे कृष्ण राधे कृष्ण माखन चोर ।
राधे कृष्ण राधे कृष्ण बंक बिहारी,
राधे कृष्ण राधे कृष्ण गोधन चारी ।
राधे कृष्ण राधे कृष्ण काली मरदन,
राधे कृष्ण राधे कृष्ण विष्णु जनारदन ।
राधे कृष्ण राधे कृष्ण राधा वल्लभ,
राधा रमन भक्ति करि सुलभ ।।
राधे कृष्ण राधे कृष्ण श्रीहरि देव,
श्री मथुरा केशव की सेव ।
राधे कृष्ण राधे कृष्ण दानी राइ,
श्रीवृन्दावन बलि-बलि जाइ ।।८।।

गोविदँ गोविदँ गोविदँ माधो, निशि वासर साधो यह साधो !
चढ़ि विमान वैकुण्ठगयो उठि, अधम अजामिल लयोजु आधो ।।
भागीरथी प्रवाह जाहि जो, जगत दवानल दाधो ।
यह तजि भजै विषै जो कोऊ, छांडि सुधा विष राधो ।।
इहिं रस पग्यो जु साधु शिरोमनि, ताकौ मतों अगाधो ।
योग यज्ञ तप-तीरथ-संयम, व्रत या विन सब वाधो ।।
राम कृष्ण केशव करुणामय, कह्यो तिनहिं जग में वस लाधो ।
और आल जंजाल सकल तजि,
श्रीवृन्दावन प्रभु' को आराधो ।।९।।

भामा-धव माधव भैष्मी धव, राधा-धव मामव गोविन्द ।
दामोदर गिरिधर विश्वम्भर, सुन्दर वर नर कृष्ण मुकुन्द ।।
जितदूषण नन्द कुल भूषण,
गोपीजन मानस कलहंस, भामाधव माधव जतकंस ।
भव भावन भय, कर करुणा मय,
केशव नव कमनीय किशोर, भामाधव माधव दधि चौर ।
भव मोचन सरसीरुहलोचन गोरोचन चित्रित वर भाल,
भामाधव मामव-मामव गोपाल ।
यमुनातट वंशीवट, मुरली कलकूजित,
मोहित ब्रह्मेश, भामाधव मामव वरवेश ।
मीन रूप कच्छप, धरणी धर नर मृगेश,
वामन भृगुवंश्य, भामाधव मामव भवशंस्य ।
रघु कुल कमल, दिवा कर हल,
धर शुद्ध वुद्ध, कल्किन् हय भार, भामाधव मामव दव दार ।
नव जल धर विग्रह, नारायण गरुडध्वज,
'श्रीवृन्दावनचन्द', भामाधव मामव गोविन्द ।।१०।।

दोहा

इन्दीवर जल धर सदृश, सुन्दर मृदुल शरीर(म्) ।
भजे सदा गोकुल वधू, कौतुक चौरत चोर(म्) ।।११।।

नन्द नन्दन देहि मे दृढ भक्तिमीश भवत्पदे ।
नायकेन्द्र मुनीन्द्र गोकुल, चन्द्र गोगण पाल ए ।
कोटिकामनिकाममोहकसूल्लसद्वनमाल ए ।।
केश्यघासुर हारि विक्रम, कंश–वंश नृशंस ए ।
रुक्मिणी वर राम सोदर, वृष्णि वल्लव हंस ए ।।
देवकी वसुदेव पुत्र, पवित्रचारु चरित्र ए ।
वेणुवाद्य विशारदाद्य, कपीश–केतनमित्र ए ।।
श्री निवास शिखण्ड शेखर, पद्म नाभ मुकुन्द ए !
कंजलोचन वन्ध मोचन, भूविरोचन चन्द ए ।।
रासलास्य विनोद हास्य, मनोज केलि कवीन ए ।
नाम पारक राम तारक, वेद धारक मीन ए ।।
कुंजराज विराज वाहन, गोत्रराज विहार ए ।
काम तात सुजात विग्रह, हारितावनि भार ए ।।
व्रह्म शेष सुरेश शंकर, सेवितांघ्रिपराग ए ।
गोपबालक वृन्दलालक, निर्विषी कृत नाग ए ।।
साधु रंजन दुष्ट गंजन, चाप भंजन रूप ए ।
दीन रक्षण दक्ष कामद, धर्म याजन यूप ए ।।
नील नीरद देह दिव्य, सुवर्ण वर्ण दुकूल ए ।
विश्व भावन विश्व पालक, विश्वभूरुह मूल ए ।।
स्वामिता मुद पास्य योगिषु, वल्लवी कृतदास्य ए ।
दक्षिणा मृत-पुत्र दापन निर्व्यथीकृत काश्य ए ।।

राधिका धव वंशिका रव, मोहिताखिल लोक ए ।
दैत्य दानव शोक दातृ, कृतादितेय विशोक ए ।।
पाक शामन गर्व नाशन, सर्वदासन संध ए ।
ऋक्षराज सुताक्षि सक्षण, मात्रुरी कृत वंध ए ।।
कैटभान्त मुरान्त माधव, कूर्म केशव कृष्ण ए ।
धारिता चल वासवस्तुत, भक्तभक्ति सतृष्ण ए ।।
वुद्ध भार्गव कल्कि संहर, पद्मपाणि नृसिंह ए ।
पारि जात हरारि जात, विमोक्ष दाइ सुगम्य ए ।।
शंख-चक्र-गदा धनुर्धर, विष्णु वामन वृंह ए ।
मानिनी गणमान मर्दन, हर्ष वर्धन रम्य ए ।।
मुग्ध गोप वधूरु दुग्धक, पान लुब्धक चौर ए ।
नित्यनूतन नित्यधाम, निवास नित्य किशोर ए ।।
मायि माय्यविचिन्त्य शक्तिक, सर्व साक्षिक धीर ए ।
हंसजा तट वंशिका वट, नाट्य शमंद वीर ए ।।
यज्ञ साधन यज्ञ पालन, यज्ञ भुग्य वनान्त ए ।
पुण्य कीर्तन पुण्य दर्शन, पुण्य पावन सत ए ।।

श्लोक

श्रीवृन्दावनेन कृतमच्युत मानसेन,
विज्ञप्तिगीतशतनाम हरेरिदं यत् ।
संश्रूयते प्रतिदिनं किल गायते च,
संप्राप्यते रतिरुदारपदारविन्दे ।।१२।।

दोहा

मुकुट कटक केयूर धर, हे नटवर वरवेश ।
चरण शरणमच्युतसदा, मां जानी हि भवेश ।।१३।।

राग वैजयन्ती

भजेऽहं भजे केशवं कृष्ण-चन्दम् ।
मुरारि हरिं सच्चिदानन्द-कन्दम्,
कृपासागरं सत्य संधं मुकुन्दम् ।।
अचेतः प्रचेतो गृहानीन नन्दम्,
नवीनं नमद्भक्तसंघै कसंधम् ।
अलिध्वंसिनं वंशिनं मा कलत्रम्,
सुसत्रं सुरत्रं विहंगेश पत्रम् । भजे० ।
भक्तछत्रं नवाम्भोधराभं तडित्पीतवस्त्रम्,
रमेशं यमेशं गदा-चक्रशस्त्रम् ।
अजं चाच्युतं गोपपुत्रं कमित्रम्,
सवित्रं पवित्रं दुराशालवित्रम् ।।
अरालालकं कंजनेत्रं जयित्रम्,
लसत्कुण्डल चारु चर्चा विचित्रम् ।
सदा स्वप्रकाशं जगच्चिद्विलासम्,
जनानां निवासं व्रजागारवासम् । भजे. पाप नाशम् ।
रणन्नूपूरं रासलीला-विलासम्,
क्कणत्किंकिणीकं मुनी हारि हासम् । भजे. पाप ।
गुणग्रामकुण्डं शरच्चन्द्र-तुण्डम्,
चलद्बाहु शुण्डं कृत श्याल मुण्डम् ।
परापारपण्डं सुरेशारिदण्डम्,
विनीतैकमण्डं मिलद्भृङ्ग गंडम् । भजे दुष्टचण्डम् ।
सुवर्णा-गदं रंगदं पुण्य-मालम्,
कुरंगागजा रोचना रोचि भासम् ।
महामायिकं नायकं कालकालम्,
स्वकीयासु संच्छिन्न संसारजालम् । भजे० ।

नृसिंहावतारं विभिन्नारिगाजम्,
पय: पूर्णपाथोदगम्भीर वाजम् ।
गलोद्भासि भास्वन् महारत्नराजम्,
किरीटादि नानोरु नेपथ्य भाजम् ।।
निषेधैकगम्यं विभुं वेद–सारम्,
लसद्धारभारं नरं निर्विकारम् ।
व्रजाधीश जाया यशोदा कुमारम्,
सु–वृन्दावनान्त सदा सद्विहारम् ।।१४।।

ध्रुवपदम्

जय जय हेऽजनि जननि यशोदे ? वत्सलरूपिणि नन्दयशोदे ।
विश्वम्भरपरिपोषणमोदे, दूरीकृतभवजलनिधितोदे ।।
भवबन्धनहरवन्दनदायिनि? उत्सङ्गे धरणीधरशायिनि ।
निगमागोचरनिजगोचारिणि, यष्टया भीतिभयदभयकारिणि ।।
शरदिन्दीवरदलाभिरामे, नवनिधिविधिपरिपूरितकामे ।
संध्यानभनिभदिव्यदुकूले, जातीस्रग्वेष्टितवरचूले ।।
कम्बुकण्ठमुक्ताफलमाले, कुंकुमविन्दुविराजित–भाले ।
गोरसमन्थनमन्थरदेहे, स्वयशो भूषित वल्लव गेहे ।।
किंकिणिरवयुतकंकणरावे, ब्रजजनरंजनसुखदसुभावे ।
सरसीरुहभवभवमुनिगीते, शिशुगोपीगोपीपरिवीते ।।
श्रीवृन्दावनवासिनि तब तनये,
वितर रतिं (मयि) करुणानिलये ।।१५।।

ध्रुवपदम्

जय जय जय श्रीगिरिवरधारिन्, कुसुमितकुंजपुंजसंचारिन् ।
सारिगमपधनी नीधपमगरीन्, सा सारिसारिगमपधानुकारिन् ।।

धुद्धधुमांधिकताधिकतिकतक, तद्धलांग इति नृत्य विहारिन् ।
रासलास्यपरिहास्यविशारद, नारदादिनुतवनसृग्भारिन् ।।
नवजलधरसुन्दरतडिदम्बर, रसिक ! पुरन्दर हे अवतारिन् ।
वृन्दावनस्वामिन् मयि करुणां,
कुरुवकवक्यघकेशिविदारिन् ।।१६।।

ध्रुवपदम्

जय जय श्रीवृषभानुसुते, गोकुलराजकुमारनुते ।
ता तननन थथ थे थथ थे, थथ थेथा थुंथुं नृत्य रते ।।
ठंठं ठननन धुद्ध धुधु कट, ताल मृदंगनि नादहिते ।
अभिनय लय निपुणे कलगान, समान सु तान समुल्लसिते ।।
गौरीशचिरतिसुन्दरतामद, हारिणि कामकलाललिते ।
रासविलासविभूषणसुन्दरि, दास जनैक कृपा कलिते ।।
कुक ककुथ ककुथों तत्थादि, समुद्धटना घटनालि वृते ।
जय जय श्रीयमुने रविकन्ये । यदुमहेन्द्रमहिषीष्वधिगण्ये ।।
श्रीवृन्दावनस्वामिनि तव चरणे, प्रणतोऽहं किल दास्यकृते ।।१७।।

ध्रुवपदम्

गोकुलचन्द पदंकित वन्ये, पावन जल मुक्ति कृत वन्ये ।
नानारत्न रुक्मतट वन्धे, यमपुरगति प्रति वन्धन सन्धे ।।
द्रवीभूत हरि विग्रह धारिणि, गिरिकलिन्दगह्वर संचारिणि ।
श्रीवृन्दावनरसिके मे प्रीतिं, सन्तनु किल निगमागमगीतिम् ।।१८

ध्रुवपदम्

जय वृषभानु सुता सखि ललिते,
युगल-किशोर मनोरथ फलिते ।
शारद-शशि-वदने वर-रदने,
गुणगण-सख्य-रसामृत-सलिते ।।

सुन्दर–तर–मंजरि–मद कुंजर–
गामिनि कृष्ण – कृपा – कलिते ।
‘श्रीवृन्दावन’ यूनोः प्रेमाणं,
कुरु मेऽनल्पदया वलिते ।।१९।।

ध्रुवपदम्

जय वृन्दे शन्दे सुख–कन्दे, चरण–सरोजमहं तव वन्दे ।
राधाकृष्ण-विलास-विनोदिनि, निज वैभव परिकर जनमोदिनि।।
विविधकुसुमकृत भूषणशोभे, नन्दतनयविहरणधृतलोभे ।
मत्तमधुपगुंजनपरिणूते, रासविलासविभवसंहूते ।।
नानाऽसवसंतर्पितरामे ?, पूजकजनपरिपूरितकामे ।
रसऋतुसेवितविपिनविहारे, रंजितवल्लवि – वल्लभदारे ।।
कारय मे वासं वरदायिनि, श्रीवृन्दावनविपिनेऽप्यनपायिनि ।।२०
जय-जय श्रीवेंकटगिरिवासिन् ? महादुष्टदानवकुलनाशिन् ।
विधिशिवशेषसुरेश्वरवन्दित, निजवैभवत्रिभुवनजननन्दित ।।
भक्तेभ्यो निर्भयपददायिन्, करुणावरुणालयमहामायिन् ।
श्रीवृन्दावन विपिने मे वासम्, देहि विभो कलिकलमषनाशम् ।।२१

ध्रुवपदम्

जय-जय रघुवर करुणासागर, कार्मुकहस्त अयोध्यानागर ।
भवभयखंडन ! निजजनमण्डन, हयखुरकृतदानवपुरकंडन ।।
जनकसुतासहचरगुणराशे ? वितर दयां वृन्दावनदासे ।।२२।।

।। इति श्रीगीतामृत गंगा नाम सङ्कीर्तन वर्णन दशम घाट ।।

अथ एकादश घाट (कंशवध लीला)

चौपाई

कान्हवली बल कंस बुलाये, ब्रज ते सुफलक सुत लै आये ।१
ताहि जलहिं निज रूप दिखायो, नेति-नेति जो निगमन गायो ।२
वहां ते मथुरा पहुँचे आई, पुर शोभा कछु वरनि न जाई ।३
कंचन कोट चहूँ दिश खाई, नीलमणी कंगुरनि छवि छाई ।४
फटिकन के सगी बनैं द्वार, सुवरन के तहां लगे किवार ।५
लगी चौहटै और बजार, कनक फरस सब ठौर सुढार ।६
नाना रतन जटित घर हाट, विद्रुम पन्ननि रचे कपाट ।७
अति सुन्दर नारी नर लोक, मानौं भुवि उतरचौ सुरलोक ।८
तहां प्रथमहि धोबी लिय अम्बर, मिल्यौ लिजैं हरि कियौ अडम्बर ।९
अम्बर वर मांगे हरि वापै, बुरैं वोल्यो दिय गये न तापै ।१०
अब सब ही वे मारि पछारे, ले कपरा सब गोप सिंगारे ।११
दरजी तहां कंस को आयो, ताहि देखि गोपाल बुलायो ।१२
उनि रचि-पचि कपरा पहिराये, जे-जे दोउ भाइन मन भाये ।१३
पहरि विविध पट राजे भारे, श्याम सेत मनौं कलभ सिंगारे ।१४
चारि पदारथ ताहि जु दीनैं, चले मालि घर कौं रँग भीनें ।१५
नानारँग माला लै माली, बड़भागी आगैं धरि डाली ।१६
अपनैं कर लै-लै पहिराई, अतिहिबिराजे तब दोउ भाई ।१७
उहिं पहिराय वीनती कीनी, मांगी भक्ति ताहि सोई दीनी ।१८
कुबजा मिली लियें पुनि चन्दन, ताहि देखि टोकी नन्द-नन्दन ।१९
चन्दमुखी? कहा है इह तोपै, उहिं कही है सौंधौ वलि मोपै ।२०
भूप कंश हित हौं घसि ल्याई, या लाइक तुम दोऊ भाई ।२१
यौं कहि दोउनि अंग लगायो, जा रंग कौ जाके मनभायो ।२२
लखि मन मोहन रूप विलूधी, कुब्रजा ते गहि कीनी सूधी ।२३

रूप उदधि मानौं मथि काढी, दुती रमा सी रहै इक ठाढी ।२४
गहि पीतांशु कह्यो मेरे घर, चलौहरौस्मर विथा सुघरवर ।२५
तब हँसि बोले सुन्दर श्याम, तुम हम से पंथिन विसराम ।२६
अब आये जिहिं कारज हेत, सो करि तिहारे ऐहैं निकेत ।२७
मधुर वचन यौं कहि कुबजा ही, आये वनिक पथहिं अवगाही ।२८
तहां धनुक देख्यो इक भारी, जहां बड़े जोधा रखवारी ।२९
वरजे धनुक छुओ जिन कोऊ, भये क्रोध सुनि भाई दोऊ ।३०
बांयें करसों लियो उठाई, ख्यालहीख्यालसु दयो चढ़ाई ।३१
तोर‍्यो तनकहि खैंचि मरोरि, गज ज्यौं आक छरी कौं तोरी ।३२
टूट्यो धनुक भयो अति सोर, सुन्यौ तिहूं पुर में अति घोर ।३३
जोध क्रोध ह्वै हरि पर धाये, मार-मार करि पकरन आये ।३४
धनुक टूक दोउ भाइन लीनैं, रच्छक सवैं रुई ज्यौं-पीनैं ।३५
इह सुनि कंस अधिक ही कांप्यो, जानौं काल आइ मोहि झांप्यो।३६
सोवत जागत बड़े कुसोंन, ता दिन ते लगे कंसहि होंन ।३७
त्रियनि सुनी बलि श्याम अवाई, दौरी सब मनौं छुटी अवाई ।३८
जो-जो काम करत ही घरको, छांडिसम्हारिसकीनहिं फरको।३९
आई दौरो महल-झरोखनि, केउदेखैंलगिमोखनि मोखनि ।४०
लगी तोरि कर भूषन वारनि, भू उतरत मनु पंती तारनि ।४१
मोहनी मूरति सबन निहारी, विवश ह्वैदेत विधातहिं गारी ।४२

विधि हम क्यों न करी व्रज कामिनि,
सुन्दर मुखनिरखति दिन जामिनि ।४३

हरि मृदु मुसकि हरैं मन सब के,
मिटै विरह जुर संचित सब के ।४४

दुष्ट रच्यौ पुनि मल्ल अखारो,
जुर‍्यौ देश पुर लोगहु सारो ।४५

रंग द्वार रण में अति गाढ़ौ,
अयुत करी बल गज कियौ ठाढौ ।४६
आवत देखि गुपालहि पेल्यौ,
पूंछ पकरि गोपाल हि खेल्यौ ।४७

घींसि फेरि पटक्यौ धरनी पर, दंत उखारि लिये अपने कर ।४८
दंतहि सों मारे पिलवान, उहिं सँगते पाये नहिं जान ।४९
दंत दोउ भाइन धरे कांधैं, नील पीतपट कटितट बांधैं ।५०
रंग अजिर आये दोउ भाई, रुधिर छींट दुहुँ अंगनि छाई ।५१
मानहुं नील हिमाचल ऊपर, पसरी विद्रुम वेलि दुहूँ धर ।५२
तहाँ भये मल्ल पहार से ठाढ़े, अंग हैं तिन के वज्र से गाढ़े ।५३
राम श्याम गोपनि लियें संग, कमल पत्र से कोमल अंग ।५४
नटवर वपु धरिं अधिक विराजे, रंगभूमि गये वजि उठि बाजे ।५५
चाणुर बढि हरि सौं लपटानों, गिरि गह्यो दौरितमालहिं मानौं ।
नाना दांव किये उनि सूर, मारी मुकी कीनौं चक चूर ।५७
भिरे मुष्टिक सौं महाबली बल, उन हूँ लपटि किए केते छल ।५८
राम दई ताकैं इक थाप, ह्वै गयो शिरतिहिं काँपहिकाँप ।५९
और हु मल्ल हुते सब मारे, भगिगये और जु बचे बिचारे ।६०
कहि न जाइ हरि अंग लुनाई, निरखि रहें सब लोग लुगाई ।६१
जाहि-जाहि जो-जो रस भास्यो, सो-सो हरि ताँ ताहिं प्रकास्यो ।
मल्लनि कौं रस रौद्र दिखायो, अद्भुत रससरवरनि लखायो ।६३
उज्ज्वल रस वर नारिन देख्यो, गोपनिसख्यरसहिकरि लेख्यो ।६४
दुष्ट नृपनि भास्यो रस वीर, देखि-देखि हरि मूरति धीर ।६५
वच्छलता रस करुण समोई, मात-पितह भासै ये दोई ।६६
कंस भयानक रस मय भयो, अज्ञन लखि वीभच्छहि लह्यौ ।६७
योगी सन्त महारस पागे, निरखनलगे श्याम बड़ भागे ।६८

वृष्णिन दास्य रसहि अवधार्यो, यौं हरि सब रसरूप निहार्यो ।
कंस कपि ऊपर कियो कोप, कह्यो कोउ रहन न पावै गोप ।७०
रंग भूमि तैं दीजै काढि, डारौ इनके माथे बाढि ।७१
उग्रसेन वसुदेव हि आदि, मिलैं उनहिं इनकी कहा दादि ।७२
इन हूँ सब कौं डारौ मारि, नन्द हि राखौ बेड़ी डारि ।७३
यह उठि ऐसैं कहतहि रह्यो, हरि ज्यौंकूदिकंस हरि गह्यो ।७४
बड़े केश गहि धरनि पछार्यो, ह्वैगयो चहूँदिशि मार्यो हिमार्यो।
कंस मार पितु-मातु छुड़ाये, देशनि घर-घर मंगल गाये ।७६
उग्रसेन शिर छत्र फिरायो, छरीदार ह्वै आप हि आयो ।७७
इहिं विधि हरि भक्तन आधीन, जिहिं आधीन लोक हैं तीन ।७८
यह श्रीकृष्ण कंस वध क्रीडा, गावै सुनैं मिटे भव पीडा ।७९
'वृन्दावन' स्वामी यह विरची, श्रीभागौत कथा लै खरची ।८०

।। इति श्रीगीतामृत गंगा कंशवध लीला वर्णन घाट एकादशः ।।

अथ द्वादश घाट (तीर्थ वर्णन)

राग धनाश्री

श्रीपुहकर निकर तिहुँ पुर तीरथन को ।

परम पवित्र जल, देखत ही तिहिं पल,
दूरि होत पाप ताप, जात तन-मन को ।।

प्रात उठि न्हात, होत अव दात गात,
जात तित-जित, पुरमुर कै हरन को ।

'वृन्दावन' महिमण्डल में थाप्यौ है कमण्डल,
विधि होत हैं आखंडल, ध्यावैं तन को ।।१।।

राग ललित वा भैरव

तीरथराज प्रयाग विराजत, सातपुरी पटरानी ।
ताप जु त्रिविध नसैं जिहि दरसैं, महिमां वेद बखानी ।।
मध्यम वेदी विशद सिंहासन, छत्र अखैवट भारी ।
हंस मिथुन तेई चारु चँवर से, माधव इष्ट मुरारी ।।१।।
तीरथ राज० सातपुरी संगचारी ।
गंग तरंग तुरंग असंखित, कुंजर यमुन तरंगा ।
करत सेव त्रिभुवन तीरथ सब, धरैं अलौकिक अंगा ।।२।।
तीरथ राज० सातपुरी लियें संगा ।
विविध विचित्र रथ नाना पत्र, रथ धारा विजय पताका ।
पाप वृन्दपुर जारि-मारि कैं, कीन्हौं बड़ौ ही साका ।।३।।
तीरथ राज० सातपुरी संग राका ।
दुहुँ प्रकार धुनि नौबत बाजति, आठौं पहर सुहाई ।
गावत सुयश नये नित जाके, ऋषि वन्दी सुखदाई ।।४।।
तीरथ राज० सातपुरी मनभाई ।
चारि पदारथ सदा वरत, जहां पावत कीट पतंगा ।
'श्रीवृन्दावन प्रभु' वेणी माधव ?, दीजै भक्ति अभंगा ।।५।।
तीरथ राज० सातपुरी अरधंगा ।।२।।

राग भैरव

ए श्रीगंगा तरल तरंगा हरिपद रंगा ।
तुव जल संगा कीट विहंगा, होत हैं शत्रु अनंगा ।।
दरशि सुरापिन अति ही पापिन, करत तुरत भवभंगा ।
तव चरण-शरण मांगत कर जोरैं, 'वृन्दावन' जन मंगा ।।३।।

ए श्रीकालिन्दी इन्दीवर वरन, अघहरन तुव जल ।
जाकैं दरश अरथ धरम काम, मोक्ष होत हैं सहल ।।

हरि मनमांनो कीनी निज पटरानी,
प्रीति सौं रहत पिय तेरे ही महल ।
'श्रीवृन्दावन प्रभु' अंग-संग मिली रैंन-दिन,
याही तैं श्याम रंग राजत विमल ।।४।।

जय जय श्रीयमुना मनरमना रसदेवी,
तेरे पद सेवन तैं पावत पद सेवी ।
निर्मल जल कमल मध्य फूले बहु भांती,
मधु लुब्ध मँडरावत मधुपन की पांती ।।
उभय तटी रतन जटी सुमन सोहैं तीर-तीर,
द्रुमन भरि जगमगाति जोहैं ।
कङ्कन आकार आवृता चहुँ कोदा,
'वृन्दावन' केलि मयी दायक मनमोदा ।।५।।

ए श्रीवानी, वेदनि बखानी, विधि शिव विधु मानी ।
तुही ब्रह्मानी, तुही भवानी, तुही कहियतु हरि रानी ।।
तुही जांनी, तुही छांनी, तुही तिहुँ पुर में समानी ।
'श्रीवृन्दावन' यौं कहत सयानी, मोमति रहो तुव पद उरझानी ।।६।।

राग रामकली

मथुरा तीन लोक ते न्यारी, जहाँ विराजत नित्य विहारी ।
जहां की रेणु शीश धरची, चाहत ब्रह्म-शेष-त्रिपुरारी ।।
मानत जहां प्रणाम सोइवो, कृष्ण कीरतन गारी ।
जहाँ सुभाइ फिरवौ इतउत, कौ मानत परिकरमांरी ।।
तीनवेद ते अधिक जानियतु, नाम वरन मथुरा री ।
ध्यावत तीनौं वेद ब्रह्म कौं, याकौं ध्यावत ब्रह्म महा री ।।

एकहि द्यौंस निवास कियें जित, भक्ति लहैं नरनारी ।
मुक्ति चतुरविध कोऊ न छूवत, जद्यपि देत मुरारी ।।
है जु विधाता चौर जहां कौ, रच्छक जग संहारी ।
जहां अजन्मा जन्म लयो मा, यशुमति नन्द पिता री ।।
होत अजन्मा तहाँ सजन्मा, यातैं अकथ कथा री ।
'श्रीवृन्दावन' तहां वास पाइकैं, मूढ सु और ठौर मतिधारी ।।७

राग भैरव

श्रीवृन्दावन प्रभु चिदानन्दघन, दिव्य कनक मय भूमि ।
विविध भांति वर तरुन-तरुन सौं, ललित लता रही लूमि ।।
ठौर-ठौर सुख पुंजनि-पुंजनि, कुंजनि-कुंजनि राजैं ।
मोहन महल सेज पर दोऊ, श्यामा-श्याम विराजैं ।।
श्रीरंग देवी आदि सहचरी, नित परिकर यह नीकौ ।
सन्मुख रुख ठाढी सेवन सुख, लेवन प्यारी पी कौ ।।
श्रीहरिप्रिया हित-चित अनुसारनि, विविध विनोद प्रकाशी ।
निरखि-निरखि नैंननि वर वानिक, बलि 'श्रीवृन्दावन' दासी ।।८

राग पञ्चम

वेदहु ते व्रज रीति है न्यारी, या विधि पाइये कुंज विहारी ।
रज देत बताइ जु आवत हैं तम, देत मिलाइ महा सुख कारी ।।
प्रात सतो गुन में विछुरै यम, त्रासहु ते दुख होत है भारी ।
'श्रीवृन्दावन प्रभु' की महिमा,
कछु वच्छ हरैं तैं विरंच निहारी ।।९।।

दोहा

रास विलास संगीत सुनि, मोहे ब्रह्म महेश ।
सुरपति गनपति देवऋषि, आये सहित सुरेश ।।१०।।

राग कनडी

आयो जगत जनक चतुरानन,
मोह्यो मुरली धुनि सुनि कानन।
वेद चारि चहु हस्तनि राजत,
दण्ड कमण्डल दो इत भ्राजत।।
वरद अभय सोभित कर दोई,
मगन भयो 'श्रीवृन्दावन' जोई ।।११।।

आयो नारद मुनिगण मण्डन,
भव दव ताप तप्त दुख खंडन।
वीना नाद बिमोहित त्रिभुवन,
निशिदिन गावत माधव गुनगन।।
'श्रीवृन्दावन' कर जोरैं दोऊ,
मांगत कृष्ण कथा रति होऊ।।१२।।

राग कनडी

आयो सुर राज गजराज चढ्यौ महाबली,
अमर सुभट संग-रंग भरे राज हीं।
विविध विमान चढ़ै करैं गुनगान गुनी,
होत इक डङ्का सुनि अरि डरि भाज हीं।।
नाचैं अपछरा गति भेदनि अनेक एक,
एक ते सरस नानाभूषा पट साज हीं।
सची दुख कन्दन वनकेलि करि वाजे,
अमरावती मधुर धुनि बाज हीं।।
'वृन्दावन प्रभु' निरखि धाम प्रमुदितमन सुर सहित,
वाम वारत तन-मन-धन हरि काज हीं ।।१३।।

राग श्रीटोडी

जय-जय शंकर भव-भय मोचन,
हिम करपूर गौंर गुण लोचन ।
डमरू नाद रत तांडव पंडित,
भूति लिप्त दर्वि कर मंडित ।
जटा मुकुट करुणा-वरुणालय,
'श्रीवृन्दावन' विपिने किल मां नय ।।१४।।

जय-जय भव-भय विघ्न विदारण,
वारण वदन विश्व सुख कारण ।
सिद्धि बुद्धि वनिता सहचारण,
निज सेवक वैभव विस्तारण ।।
'श्रीवृन्दावन' त्रिहरण परिचारण,
मयि संतनु संसृति निस्तारण ।।१५।।

जय-जय वाणी ब्रह्मसुते, सुर-मुनि-किन्नर-सिद्धिनुते ।
हंस-रथे शारद-जलदाभे, अयि प्रणयिनि सरसी-रुह-नाभे ।।
वीणा-पुस्तक-मंडित हस्ते, विहरतु चरणे हृदयं नस्ते ।
'श्रीवृन्दावननृपतौ' प्रेमाणं, सतनु किल निगमागमगानम् ।।१६।।

।। इति श्रीगीतामृत गंगा पुष्करादि तीर्थ-ब्रह्मादि भक्त स्तवन घाट द्वादशः ।।

* अथ त्रयोदश घाट *

आसावरी

जाकौं रमा रमण रखवारै, ताहि कहो को मारै ।
काल व्याल थिर चर तिहुँ, पुर में वक्र न दृष्टि निहारै ।।
भारत भीषम द्रोण सारिखैं, तैं कुन्ती सुतन उबारै ।
विधि वर अमर हिरण्यकशिपु से, तिन उर नखनि विदारै ।।
जो हरि तनक सेवाकै कीयें, तुरत अपन पौ हारै ।
(श्री) 'वृन्दावन प्रभु' से प्रभु कौं तजि, न्याय जात जम द्वारे ।।१।।

आरति करत यशोदा मैय्या ।
गौ रज रंजित अंग-रंग भरे, गौर श्याम दोउ भैया ।।
कंचन थार कपूर की बाती, बजावट बाजै बजैया ।
(श्री) 'वृन्दावन प्रभु' निरखि-निरखि मुख,
फिरि–फिरि लेत बलैया ।।२।।

करुणा राग भैरव

कहा ऐसी चूक मोमें चूक से भये हौ मोसौं,
करत हौं कूक सुनौं नैंकु तो श्रौंन ।
जद्यपि औगुन भरचौ तिहारै शरन परचो,
विष हू को रूंख लाइ काटत है कौंन ।।
मो तन जनि जाउ मेरौ तो सुभाउ देखौ,
आप तन जैसो रावरो भौंन ।
'श्रीवृन्दावन प्रभु' पापी पावन विरद पाइ,
तुम हूं कौ लागी या जुग की पौंन ।।३।।

राग देवगंधार

मोसौ पतित न जग में और ।
यातैं आयो शरन रावरैं, तुम पतित (न) पावन शिर मौर ।।

मो तन सोचि विचारि देखौं जो, नाहिन तीन लोक में ठौर ।
'श्रीवृन्दावन प्रभु' देखि आप तन, वहौ विरद की गौर ।।४।।

ए प्रभु अब तौ मोहि सम्हारौ ।
कहा कित भटकों घर-घर अघहर, किंकर होइ तिहारौ ।।
काम-क्रोध-मद-लोभ प्रबलरिपु, आगैं नाहि न चारौ ।
ए मोहिं बोरत भव सागर में, देखत देहु न टारौ ।।
यद्यपि बहु औगुननि भरयौं हों, सब कौं लागत खारौ ।
'श्रीवृन्दावन प्रभु' लाज शरन की, तुम करते जिन डारौ ।।५।।

जागु रे मनुवां लैरे राम कौ नाम ।
काम-क्रोध-मद-लोभ-मोह में, कत भटकत बे काम ।।
विनशि गये तन छिनक एक में, कोउ न छ्वै है चाम ।
'श्रीवृन्दावन' यह समझि बाबरे, वेगि पकरि निज धाम ।।६।।

कैसें मिलौं सखी प्रीतम सौं ।
सास न लै सकों गुरुजन के डर, पानै परचो विरहा यम सौं ।।
नन्द जिठानी रिसांनी रहैं, डरौं पुनि नाह के ऊधम सौं ।
'श्रीवृन्दावन प्रभु' बीति गई. मिलिवे की औधि करी हम सौं ।।७

कासौं कहौं सखि वेदनि मन की ।
डीठि परे जब ते मन मोहन, सुधि न रही मो तन की ।।
वसि रहो आँखिन में वह, मूरति चाह मिटी जल अन की ।
'श्रीवृन्दावन प्रभु' सौं मिलि हौं हठि,
लाज मिटौ कुल के पन की ।।८।।

काहे करै तू औषधि सजनी ? ।
कहि न परै तोकौं मुख ते कछु, मोहि तो वेदनि और बनी ।।

जब तैं उहिं नैंन को सैंन दई, तब तेइ हौ मैंन के बान हनी ।
'श्रीवृन्दावन प्रभु' पीर मिटे पिय, मूरति ही लगै सौंधे सनी ।।९

नेह की औषधि नेही ये जानैं ।
न पीर मिटै अरि वीर क्यौं हूँ,
पचिहारी रहैं जो पैं कोटि सयानैं ।।
रोग उठै जिहिं सौं सोइ औषधि है,
यह बात कहौं कोउ मानैं ।
गुलाब के आब सौं चन्दन कौं घसि,
काहे सखी घनसार में सानैं ।।
चैन परैं नहि रैन दिना मोहिं,
मैंन मरोरे कहौं तोहि छानैं ।
'श्रीवृन्दावन प्रभु' उहिंसौं तो बढै अति,
है कछु और जो औरहि ठानैं ।।१०।।

राग वसन्त

नेही सम सूर नहीं देही और देखिये ।
लाखनि में रण सूर एक ही कबन्ध उठै,
ज्ञानी और योगीहू ते अधिक वाहि लेखिये ।।
यह दूरि धरैं फिरैं शीश एक नेह काज,
तौरैं लाज पाज सुव वाहू ते विशेषिये ।
'श्रीवृन्दावन प्रभु' प्यारौ याही ते विकात हाथ,
गोपिन आधीन ह्वैरिणी गुपाल पेखिये ।।११।।

नेही सौं विदेही और जग कौंन है ।
विरहकी ताप महा आनन्द कौ शीत सहै,
नाहिं कहै कछु जाके सम वन भौंन है ।।

जीवन अदिष्टबल खाइ, नहिं जानैं स्वाद खाटो,
कटु-मीठौ तिक्त किधौं यह लौंन है।
'श्रीवृन्दावन प्रभु' प्यारौ बस्यो रहै मनमांहि,
देखन को बावरो सो फिरै मौंन है ।।१२।।

तनक-झनक-भनक सुनि, नूपुर की पिय आइ गइला।
श्याम सुघर सुन्दर वर गिरिधर, नागर लखि मोद भईला ।।
अलक-रलक दृग पलक-झलक में, सकल खलक मनबस कइला।
'श्रीवृन्दावन प्रभु' पर तन-मन-धन,
सदन-मदन छवि वारि दइला ।।१३।।

राग कनडी

जो पिय के मन में मन दीजै।
आपुन ही बस होय पियारो, टोना टामन काहे कीजै ।।
मन भावन चाहें सोई कीजै, सहज हि में वाको मन भीजै।
'श्रीवृन्दावन प्रभु' सौं मिलि लीजे,
सुख तोलौं जौलौं जग जीजै ।।१४।।

राग ललित

पिय उर वशी मांझ बसी निज मूरति लखि,
मांन करि बैठी हैं कुंवरि जनक की।
तिहिं छिन पीठि फेरि रही हेरि भूमितन गही,
हठि मौंन मानौं मूरति कनक की ।।
नीलाम्बरओढ़ैं भूमिनखसौं लिखन लागी,
वरनौं अतिअद्‌भुत कहा शोभा वा वनक की।
'श्रीवृन्दावन प्रभु' प्यारी तबही मनाइ कही तुम,
बिन सुता हैं और सौंह है धनुक की ।।१५।।

राग मारवो

जय-जय मीन-दीन जन रच्छन, दच्छन कमला कमल मुरारी ।
प्रलय पयोधि शोधि लै वेदनि, ख्याल हि में लयो मारि सुरारी ।।
कर जु बिहार अपार जीवन में, श्री निज धाम विराजै ।
'श्रीवृन्दावन प्रभु' पुहुप वृष्टि करि,
अमर नगर घर-घर बाजे-बाजे ।।१६।।

राग कनडी

छैल भये नये देखन कौं, छवि छांह तकैं तन तौलत हो ।
सांझ संवार अचानक आय, किंवार पराये क्यौं खोलत हो ।।
गाइन घेरत नांहि लला सु, लुगाइन हेरत डोलत हो ।
'श्रीवृन्दावन प्रभु' पूछै कोऊ, यों बनाइ के उत्तर बोलत हो ।।१७

राग भैरवी

काहे कौं हरत मन मेरो कारे हो कन्हैया ।
हौं तो परवश परी, करौंगी कहा दैया ।।
तुम सब सुख दाइक, वहु नाइक बल भैया ।
'श्रीवृन्दावन प्रभु' मोहिं को, दरश दीजे वंशी के बजैया ।।१८।।

पिय मोहन पानिय मिल्यौ, मन-मिसरी भयो,
जाइ किस मिसरी निकसै अवै ।
दिन निशरी दिश-दिश फिरौं, ताऊ न प्यास बुझाइ ।।
सुासु जिठांनी रिस करैं, विष लगैं घर न सुहाइ ।
अब 'श्रीवृन्दावन प्रभु' बिना भई, विमन करौं कौन उपाई । १९

श्रीठाकुरजी के वचन

गौरी हे किशोरी मोरी, चित चोरी करैं जात क्यौं ।
हौं तो वश भयो तोरी, काहे करत बरा जोरी ।।

लगाई प्रेम डोरी, यातैं भई मति बौरी ।
'श्रीवृन्दावन प्रभु' अब, करौं कहा तुम ही कहो री ।।२०।।

अँखियां ऊरझी सुरझैन क्यौं हौं,
बिरझानी रहैं घर की सबही ।
मिस कै कछु मोखैं झरोखै लखै,
कन सूबनि लागि रहैं तैबही ।।
साथ ही लागौ रहैं निशि वासर,
धाम कैं काम चलौं जबही ।।२१।।

बंगला

अरे प्रांन वन्धु कान हरि लीलो प्रांन ।
आमार वाडी मध्ये आसीवौ जाइवौ,
तुमी नहिल जोवन दीवो दान रे ।।
की मंत्र पौढिया डारीलो तुमी,
अमाकी भूलिलो खांन आर पान ।
'श्रीवृन्दावन प्रभु' तुमी अमांकै,
पासुरिला अमा के तुम्हारा गुनगान ।।२२।।

पंजाबी

मोहन दे नैंन मारदे अव मैंनूं ।
किस अग्गे करौं पुकार नी, सैये श्याम सलौंने यार दे ।।
की अख्यां खूबी इनां दी वन्दी, जानौं प्याले प्यार दें ।
श्रीवृन्दावन प्रभु' वशि करि लैदे, चुक जिस तरफ निहार दे ।।२३

राग टोडी

बैठो सोरह सिंगार कियें सुघरी सोरह वरष की ।
रूप यौवन मद आलस सौं अंगुराति,
जम्भाति प्रेम रस चसकी ।।

छुटी रही लट पट खिसि रह्यो आधैं,
शिर ढीली देति गांठि गहि अँगियां कसकी ।
'वृन्दावन प्रभु' रीझि देखि रहै इकटक,
प्यारी चख जोरि मुख मोरि नैंक मुसकी ।।२४।।

राग नाइकी

आतुर होहु न देखो पिया रे ।
जागत हैं घर के सबही सुव, ठौर ही ठौर बरैं जु दिया रे ।।
मोहि तो लाज करी चहिये नँद,
सासु जिठानी सौं जात जिया रे ।
'श्रीवृन्दावन प्रभु' भूखौ महासु,
दुहूँ कर खात कोऊ रसिया रे ।।२५।।

मारवाड़ी

प्यारा लागो छोजी प्यारा थेतो म्हांनैं ।
म्हांकी चालै तो थांनें छाती सौं, कदे करां नहीं न्यारा ।।
सूरति थांहरी कामणगारी० ।।
थांहरी छांजी अरज करां छां, दरसण देज्यौ धूतारां ।
श्रीवृन्दावन प्रभु' डरां लागां सौं, नहिं तो चालां थाकी लारां ।।२६

राग पूरवी या टोडी सारंग

ये नैंन लालची रूप के, गनत नहीं कुल कांनि ।
गुरुजन शंक-निशंक न मानत, दूत पंच शर भूप के ।।
अब मेरे वश नांहि भये ए, प्रीतम परम अनूप के ।
'श्रीवृन्दावन प्रभु' छिन छिन देखैं, होत सरोरुह धूप के ।।२७।।

राग गूजरी

आजु भलैं बानिक बनैं विहारी ।
भौर हीं कुंज महल तें निकसे, अंग-अंग छवि बढ़ी अहारी ।।

शिथिल पाग अनुराग भरे दृग, आलस सनैं महा री ।
'श्रीवृन्दावन प्रभु' देखि मनोरथ, होत सु कहौं कहा री ।।२८।।

राग गौरी

आली सांवरो सलौनौं मोहिं भावै, नित उठि इहिं मारग आवै ।
मोर मुकुट पीताम्बर की छवि, तन–मन–ताप सिरावै ।।
काननि कुण्डल गरे बनमाला, वंशी मधुर बजावै ।
बाजूबन्द पहुँची किंकिनि कल, उपमा मनहिं न आवैं ।।
मँद हँसनि गति मंद विलोकनि, मनमथ को मन तावै ।
'श्रीवृन्दावन प्रभु' नन्द को नन्दन, नित नयो नेह बढ़ावै ।।२९।।

राग ललित

मेरी सजनी हलधर वीर, नित मोहि मुरली सुनावै ।
जिहिं मग हौं निकसौं तित ठाढौ, वह चितै-चितै चितह चुरावै ।।
जब हौं धाम काम कछु लागौं, तब आ(इ) पिछवारे गावै ।
हौं सूकौं गुरुजन डर 'श्रीवृन्दावन प्रभु' मो हिय तरसावै ।।३०

राग पूरिया

मुरली भली बाजै सप्त सुरन सौं रली ।
काहू के घर अधरामृत पियैं, गुन गरवीली गाजै ।।
जिन मोहे सुर-नर-किन्नर, हर हरि कर पल्लव राजै ।
'श्रीवृन्दावन प्रभु' की या गति, याही को भल छाजै ।।३१।।

तुम्हैं यौं क्यौं चहिये हौ प्रान आधार, सुकुमार नन्दकुमार ।
पहिले तो रस वस करि नैंन सैंन, प्रेम ठगोरी डारि ।।
तुम बहुनायक लायक सब बातनि, मेरी क्यों तजी सम्हारि ।
भूल्यौ धाम-काम सब आठौं जाम, निरदई मारत मरोरें मार ।।
'श्रीवृन्दावन प्रभु' औरनि कौं देत बहु भांतिन,
सुख मोकौं तो दरश दीजे एक वार ।।३२।।

आजु सखी आवेंगे घनश्याम ।
अब सब मेरे पुजिहैं मनोरथ, फरकत दृग् भुज बाम ।।
ह्वै हैं अमृत के वे छिन मुहुरत, करि हौं सफल धनधाम ।
'श्रीवृन्दावन प्रभु' की माधुरी मूरति, देखि थकित कोटि काम ।।३३

राग विहागरौ

प्रेम जलधि मन भयी मर जिया ।
बूडि-बूडि सुख-दुख वीचिन विच, ढूंढत लाल अमोलक पीया ।।
दृग खेवट डारत गहि काढ़त, रूप मौज चाहत ए लीया ।
'श्रीवृन्दावन' जिय साहसुघर अति,
उर भूषन चाहत है कीया ।।३४।।

राग टोडी

शिशुता को जीति काम लीन्हौं,
पुरवाम तन जानि आप कौउ तन ।
कोनी निज रज धानी मनमांनि,
नाना ठौर रची तहां कारीगर जोवन ।।
त्रिवली सलिता तट कुच ऊंचे-महल,
रचि रच्यौ रूप उपवन सघन ।
पार नाभि गौल कुण्ड वीचि पुल बांधन,
कौं रोमराजी सूत बांध्यौ सांनि सिंगार अंजन ।।
धरच्यौ भागनगर गांव वसाये वडे-वडे,
साह सातिक संचारी दै-दै अंग सदन ।
'वृन्दावन प्रभु' प्रेमनगर निवासी,
साह लागे खेप भरन रस रतन ।।३५।।

राग सारंग

आठों याम बीतत द्यौंस ही गनत,
अजहूँ न आये मनभाये लालन ।
सुधि हू न लई-दई-भई कछु चूक मोसौं,
किधौं वै रसिक कहूँ पगे हैं अनत ।।
पहलैं उरझाय मन अब सुरझायो चाहौं,
घुरी रोम-रोम गांठि कछू न बनत ।
(श्री) 'वृन्दावन प्रभु' वे तो वहुनायक हैं,
करत कछु और (और) ही भनत ।।३६।।

मनुवां मेरो हर लियो कान्ह ने ।
कहा करौं कित जाऊं सखी री, जिय अति विकल भयो ।।
तन-धन असन-वसन सुधि बिसरी, सब देखत वाही मयो ।
'श्रीवृन्दावन प्रभु' रूप अनूपम, छिन-छिन नयो-नयो ।।३७।।

देखो न्हाय ठाढी रूप सिन्धु मथि काढी,
मानौं देह द्युति देखैं ते गुलाब आब गई है ।
बांधैं कंठ पोति जोति मोतिन की कहा कहूँ,
मानौं शशि फौज राहु चहुँ दिशि भई है ।।
विथुरे-विथुरे बाल चन्दन को विन्दु भाल,
देखत ही बनैं लाल उपमा कछु नई है ।
छबि की छटा सी उठैं सघन घटा में मानौं,
तहां निज वधू इन्दु गोद मांझ लई है ।।
तामें तो चिनौठी चीर पहिरैं बलवीर चलि देखै,
अंग अंगनि अनंग रंग मई है ।
(श्री) 'वृन्दावन प्रभु' देखि आई हौं निकाई जो,
ते प्यारी सु तिहारी मेरे नैंननि में छई है ।।३८।।

राग मालवो

मृगनैंनी, तुव शिर वैंनी,
रति सुख नसैंनी, छवि की उठत तरंगा।
कवरी कालिन्दी वन्दन मधि,
सरस्वती मोतिन मांग सोई गंगा ।।
नाना वरन कुसुम गूंथी लट,
वेई विहरत चित्र-विचित्र विहंगा।
'श्रीवृन्दावन प्रभु' मनमीन लीन,
रहत निशिदिन तिहिं संगा ।।३९।।

चंपक कौ फूल न तो तन समतूल,
वापै भँवर न जाइ लखि हियें कठिनाई।
कुन्दन कठोरन सुगन्ध कैसें समहोइ गुलाब,
हू को आब हरै सुगन्ध मृदुताई ।।
ऐसें अँग-अंगनि उपमा न दोशे कहूं,
तूपी तू विरंचि रचि-पचि के बनाई।
(श्री) 'वृन्दावन प्रभु' मधुसूदन राच्यौ तोसौं,
तेरो ही नचायो नाच्यौ करत कन्हाई ।।४०।।

बस कीनौं गुपाल तैं गूजरी गौरी।
मांगत दान गुमानन सों बोलि,
रिसाइ कैं नैंकु तैं भौंह मरोरी ।।
तिहि दिन तैं घनश्याम हियैं पुर,
बैठि गयो मनौं काम करोरी।
'श्रीवृन्दावन प्रभु' नैंन में वास सु,
तैंहीं निवास कियो वर जोरी ।।४१।।

सब निशि लूटी मोहिं अनारी ।
लये भूषन उतराइ पहलई, लई खोलि अंगिया री ।।
अधर राग अंजन हरि लीनौं, पुनि हठि लीनो सारी ।
मींडि मरोरि खैंचि कच्च, निरदई तीछन नखन विरदारी ।।
सुनें तहां कौन पुकार नतीजौ, नहि-नहिं हाहा पुकारी ।
कहा कहिए तोसौं (श्री) 'वृन्दावन प्रभु',
सौं मिलि इह करी कहारी ।।४२।।

राग ललित वा वृन्दावनी काफी

आंखिन लागे किधौं तुमहीं बलि कैधौं,
लगी तुम सोंई ये आंखैं ।
तुम तो छिन कौं न कहूँ ठहरौ ओ,
दई उ दई इन कौऊ न पांखैं ।।
तलफैं दिन रैंन न चैंन परैं ये,
अघात नहीं रस रूप ही चाखैं ।
(श्री) 'वृन्दावन प्रभु' नेही ये जानत,
नेही की बात बनें नहिं भाखैं ।।४३।।

लालन जू अब कौ तुम्हें धीजै, जिन को मन कोटि कियें न पसीजै ।
धाई हमौं इहिं सौ देइ सौं, अपनौं मन लैं हमारो मन दीजै ।।
तिहारे मनरूप अनेक धरे निज रूप, कहां किहिं भांति पतीजै ।
'श्रीवृन्दावन प्रभु' आछे जू आछे हौ,
दूरि ही तैं तुम्हें देखि कैं जीजै ।।४४।।

राग कनडी

गरवीली सी डोलै कहा विफरी,
मो कपोलनि कान्ह करी मकरी ।
उत वेऊ निशंक लिख्यौ ही करैं,
इत तूहू री ह्वै जु रही सकरी ।।

नहिं कम्परु स्वेद जौ वैरु करैं,
उहिं भाजन और वधून करी।
(श्री) 'वृन्दावन प्रभु' देखौ कहा गुन में,
मति दोष की सौत करी ॥४५॥

बड़ी जू सुनौं समुझावति क्यौं न,
वधू तिहारे कहा पैंडे परी।
इह मोही को दोरि निशंक भई,
पकरैं निकसौं इहिं आइ गरी॥
मृख सूंधि कहै तुम खायो मो गोरस,
ऐसी न नारि कोऊ निडरी।
(श्री) 'वृन्दावन प्रभु' दूति कह्यो लखि,
लाल भली छलवारि करी ॥४६॥

राग कान्हरो

प्यारी कौंन-कौंन ठौर ते तू भौंरनि बिडारी है,
ये अवलागे फिरैं रस लोभी तेरेई संग।
पानि-जानि पद कपोल मधूक फूल,
इन्दीवर नैंनन मानि रचैं इहि रंग॥
अधर बंधूक जांनि निज कुल,
सैंनी बैंनी मानत अभंग।
(श्री) 'वृन्दावन प्रभु' वशि करिवेकौं कामदेव,
बान करि राखे हैं एई तेरे अंग ॥४७॥

यमुनातट झटपट घटई भरन लागी,
चम्पक के चाप जिम आय उतनैं गई।
दिखाइ हाव-भाव मुसकाय-सकुचाय नैंकु,
नैंननि की सैंन मांझ मेंन ताप वेगई॥

जु लट लपेटी झट मन नट नागर की,
दैकैं पट ओट वट पारि नारि लै गई ।
सु 'वृन्दावन प्रभु' कौं व कछु न सुहात तोते,
नैननि ह्वै तेरी छवि रोम-रोम छै गई ।।४८।।

राग वृन्दावनी काफी

सखी लंगर री संग लोग्योई डोलै,
का विधि धाम को काम करूं ।
गुंडनि-झुंडनि साथ लियें फिरै,
बोलैं बिना वरजोर ही बोलै ।।
आली जैये गली में चली इकली तो,
छली छल सौं गहैं आनि निचोलै ।
(श्री)'वृन्दावन प्रभु' वैठि रहौं घर,
आनि अचानक सांकर खोलै ।।४९।।

राग बंगाली

मोहनी डारै मारैं जाइ घनश्याम,
बावरीसी भई फिरौं भूल्यौ धनधाम ।
कोई रे वतावौ मोहि कान्ह जाको नाम ।।
घायल सी भई फिरैं न्याय व्रजवाम ।
'श्रीवृन्दावन' श्याम-श्याम रटैं आठौं जाम ।।५०।।

वेखति पिय आगम गज गामिनि, आज सहेट वदी जिहि कुंज ।
वृन्दा रचित तलप फूलन की, तहां जाय बैठी छवि पुंज ।।
चाहति चतुरि चक्रत भई चहुंदिशि, कहुँ अटक्यो लंपट बहु मित्त ।
ज्यौं-ज्यौं घटनि रैंनि त्यौं ही, त्यौं मैंन मरोरत चित्त ।।

तलफति अलप सलिल सफरीलौ, रहौं किधौं उठि जाऊं ।
आइ सवनि चूरि छलबल सौं, निपट चवाई गाऊं ।।
इहिं विधि शोच-पोच करते ही, कोकिल नाद सुनायो पीव ।
(श्री)'वृन्दावन प्रभु' प्यारी सुनत ही,
गयो मनौं पुनि आयो घटजीव ।।५१।।

राग शंकरा भरन

बैठे श्याम संकेत निकेत में, देखत प्रान पिया आगोंन ।
कान सुन्यौं न सुहात और कछु, रहैं ध्यान धरि मोंन ।।
आई क्यों न सोच इतनैं ई मर्मर, धुनि सिंजित सुन्यों श्रोंन ।
(श्री)'वृन्दावन प्रभु' रोम-रोम तचे,
वा सुखको वरनैं कवि कोंन ।।५२।।

राग बिहागरौ

मंजुल कुंज लतानिकै पुंजतैं,
आय अचानिक आनि मिले गिरधारी ।
बाल विहाल वियोग की ज्वाल,
तें बैठें उहांई इकंत निहारी ।।
प्रेम वियोग कसौटी कसी सुखरी,
ही लसी लखि रीझे विहारी ।
(श्री)वृन्दावन प्रभु' दैकैं अपनपौं रिणी,
हौं रिणी कह्यौ रावरो प्यारी ।।५३।।

द्वै प्रिया एक समें ढक आसन, बैठि करें उत प्रेम कथा री ।
औचक आइ गये पिय एक सौं, नेह खरौ तब ऐसी विचारी ।।
दीठि बचाय के पीछे तें एक की, मूंदिलई अंखियां वडियारी ।
(श्री)'वृन्दावन प्रभु' दूसरी को मुख,
चूंम्यौ है के छलदूत महारी ।।५४।।

राग नाइकी

एक समें हरि काहू प्रिया संग, बैठे संकेत लियें सखियां ।
श्यामा जू आइ गई तिहिं औसर, दूरते लाल नहीं लखियां ।।
उतैं उन कौं तब सैंन दई पिय, पीछैं तें आय गए नखियां ।
(श्री)'वृन्दावन प्रभु' धूत अचांनक,
मूदिलई छलसौं अंखियां ।।५५।।

एक समें वनितागन में, वन में वनमालि विहार करें ।
श्यामा सौं प्रेम प्रकास्यौ चहैं, सौतिन में कैसे अंक भरें ।।
कांटो लग्यो मिशुकैं तब प्यारी, विहारी की गोद में पांय धरें ।
(श्री)'वृन्दावन प्रभु' काढन के मिस,
सो व तहां ते न टारचौ टरें ।।५६।।

राग विहागरौ

दुग्ध फैंन सम सैंन मृदुल महा, कुंज सदन में सखी बिछाई ।
सेज बन्ध कसि वीरा सौंधे, लवंगादि डावे तहां ल्याई ।।
तहां बैठे श्रीराधामाधव, वीरी खाइ खवाई ।
सौंधौ ल्याइ परस्पर अंगनि, काम कला मन भाई मनाई ।।
अति रति मांनि श्रमित ऊति ह्वै, पुनि पौढि रहे दम्पति सुखदाई ।
(श्री)'वृन्दावन प्रभु' चेरी बड़भागिन,
तब तहां चरण पलोटत आई ।।५७।।

विलसत आजु सुरत सुख दम्पति,
कुंजमहल मिलिकैं सचुपायें ।
ज्यौं-ज्यौं लाल-बाल कर परसत, हाहा खात मृगज दृगी कंपति ।।
इक कर गहैं नीवी नव नागरि, इक कर कठिन उरोजनि ढंपति ।
छिन तौ चित ललचाइ केलि पर, बहुरि काल्हि सुधि आयें चंपति।।

सारी रैंन निहोरत बीती, नाहि नहीं नन ना इह जंपति ।
'श्रीवृन्दावन दुलह दुलहिनि पर,
वारौं कोटि मदन की संपति ।।५८।।

राग दरबारी

जतन-जतन क्यौं हूँ ल्याई हौं आई,
प्यारी पाऊं जो वचन देहुँ तबही चहन ।
कहति हौं हाहा खाइ लेति हौं बलाइ लाल,
छुवो जिन याही देहु बैठे ये रहन ।।
रही भौंन कोंन दुरि दामिनिसी दीन ह्वै कें,
लागो जलधार दुहु नैंननि बहन ।
देकैं भुजबीच कुच रही कर गही नीवी,
देखिकैं दशा मोहि बीत्यौ है गहन ।।
आतुर जे होहु मधुसूदन रसिकवर मालती,
लतासीं लागी अबही लह लहन ।
(श्री) 'वृन्दावन प्रभु' चतुर विचारि देखौ,
मींडि मुरझाये रस पैहौ इह न ।।५९।।

आवो बल्लभ जू मिलि चौपरि खेलैं,
नांहि लगे मन बैठे अकेलैं ।
अपनी दिश लेहु विशाखा सखी गुन की,
सलिता ललिता हम भेलैं ।।
मन भावै सो बाजी बदो तुम हीं तुम,
जीतो किधौं हमहीं तुम्हैं पेलैं ।
(श्री) 'वृन्दावन प्रभु' पूरे करे बिन ना,
रहै गोरस ख्याल उथेलैं ।।६०।।

खेलति चौपरि चन्दमुखी पिय,
संग सुरंग भरी अति सौहैं ।
पासनि डारति सास भरैं,
मुसुक्यांनि विलोकनि में मन मोहैं ।।
उठाइ-उठाइ कैं सार धरैं सु,
भरैं छवि सौं उपमा यौं मिलैं ।
ह्वैके अधोमुख कञ्चन कञ्ज,
वराटक पुञ्ज मनौं उगिलैं ।।
मन भावतो दांव परै न जवै,
रुगटांयौं करै हरि जू सौं अरैं ।
(श्री) 'वृन्दावन प्रभु' हाव बनाव,
निहारि-निहारि के अंक भरैं ।।६१।।

चमू चतुरङ्ग चमूपति ह्वै जिहिं,
ख्याल में रारि सो खेलन लागे ।
चाल में लाल औ बाल महा सु,
प्रवीन अपार विचार में पागे ।।
जीति की रीति तकैं बहुतेरीय,
दोउ खिलार न दाव बनैं ।
जिताइये प्यारीहि कौं अब तौ सु,
बिहारी विचारि हियैं अपनैं ।।
सु जांनिकैं चूक चलै जब श्यामहिं,
हारे जू हारे हो श्यामां कह्यौ ।
अजू दीजियो राजी ह्वै बाजी अबै,
हंसि (श्री) 'वृन्दावन प्रभु' हाथ गह्यो ।।६२।।

राग सारंग

जैंवत नन्द कुंवर वृषभानु दुलारी ।
भोजन चारि प्रकार सु सुन्दर, परसि धरी कंचन की थारी ।।
ओदन नाना भांति संवारे, केशरि पुट दे दारि संवारी ।
भरि-भरि धरे कटोरा शिखरनि, दूधदही घृत कढ़ी संवारी ।।
घेवर पूप पेरा अरु लडुआ, फैंनी अर शर पूरी न्यारी ।
वरा विरोरी वलै मुगोरी, और विविध तरकारी ।।
उशीर कपूर सुगन्धित शीतल, भरि राखी यमुनोदक झारी ।
देत परस्पर कवल मोद सौं, पिवत पिवाइ पियारी ।।
करि भोजन अँचवन लै दम्पति, बैठे चित्र-विचित्र अटारी ।
करपूरादिक युग वीरी भरि, धरी विशाखा रतन पिटारी ।।
नाना सुमन सुगन्ध नाना, सौं रगमगे कुन्ज विहारी ।
वीरी वर आरोगि प्रिया-प्रिय, पौढे कुसुम सेज सुखकारी ।।
रह्यो शेष परसाद थार में, 'श्रीवृन्दावन' ताको अधिकारी ।।६३

राग देवगंधार

भोर हि सुमिरौ श्री गोविन्द ।
वरह मुकुट पटपीत लकुट कर,
मुरली अधर धरैं गोकुल चन्द ।।
आछें काछें लाल काछनी,
चहुँदिशि गोपी गोप वृन्द ।
(श्री) वृन्दावन प्रभु' निज भक्तन पर,
वरषत कृपा सुधा सुखकन्द ।।६४।।

राग भैरव

भोरहि मंगल आरति कीजै ।
मङ्गल सदन वदन जोरी को, निरखि-निरखि कैं जीजै ।।

मङ्गल नाम कृष्ण गोविन्द, हरि गोपीजन प्रिय लीजै ।
'श्रीवृन्दावन प्रभु' त्रिभुवन मङ्गल,
यश सुधा श्रवन पुट पीजै ।।६५।।

करति मङ्गल नीराजन धरि कन्चन भाजन,
कर्पूर की ललितादिक रस राती ।
उठि बैठे दम्पति तिहुँलोक रूप सम्पति ले,
नेह नोई बंधे देखि होति शीरी छाती ।।
अंग-अंग रति रंग सनैं बनैं श्यामा श्याम,
काम केलि कला पूरे रसिक जन थाती ।
परस्पर निरखि छवि 'श्रीवृन्दावन प्रभु',
रीझि लाई छतियां करैं बतियां मन भाती ।।६६।।

राग कनडी

आरति गोकुलचन्द की देखौ ।
कोटि मदन मन मोहन शोभा,
निरखि-निरखि जीवन फल लेखो ।।
घण्टा शङ्ख मृदङ्ग झालरी,
दुन्दुभि मुहुवर झिझ बजाबौ ।
(श्री) 'वृन्दावन प्रभु' त्रिभुवन पावन,
नाम लीला गुन गावौ ।।६७।।

राग गौरी

आरति आरति हरन मुरारी ।
जाकी ताप तापत्रय हरनी, घण्टारव भव मोचन कारी ।।
जै-जै धुनि सुर-नर-मुनि उचरैं, निज जन नाचत दैकरतारी ।
(श्री) 'वृन्दावन' लखि मदनमोहन,
मुख वारत तन-मन संपति सारी ।।६८।।

आरति करत यशोदा मैया ।
गो रज रंजित अंग रङ्ग भरे, गौर–श्याम दोउ भैया ।।
कंचन थार कपूर की बाती, बजावत बाजे बजैया ।
'श्रीवृन्दावन प्रभु' निरखि-निरखि,
मुख फिरि-फिरि लेत बलैया ।।६९।।

धांम ते वाम सु नांम सरोवर,
साथ चली ललितादि अली की ।
न्हाय बनाय सुकाय शिरोरुह,
माला गुही तहां कुन्द कली की ।।
दोय विभाग कै केशनि बांधति,
शोभा बढ़ी वृषभानु लली की ।
चन्द कहैं अरविन्द मनौं,
मुशकैं गहि बांधत राहु बली की ।।
मोहन वंशी बजाइ संकेत यौं,
प्यारी मया करि आई भली की ।
(श्री) 'वृन्दावन प्रभु' वंशी सुनी धुनि,
गैल गही उठि कुंज गली की ।।७०।।

राग कनडी

कियो करि मांन कौहू प्रीतम सुजान सौं ।
सूधी ऐसी जांनि तोहि बाल-लाल लम्पट री,
जनावत प्रीति-रीति बधू आंन–आंन सौं ।।
भौंन-कौंन-मौंन ह्वै कैं बैठिजाय बोलै मति,
ह्वै है आधीन आइ वेई ये निदानसौं ।
(श्री) 'वृन्दावन प्रभु' प्यारी तजियौ तवैई मांन,
हौंई कहूँ आइ जबलगि कछुकान सौं ।।७१।।

पीठि दै नीठि तौ बैठी क्यों हूँ,
अति प्रेमवती मन मांझ दुखारी ।
सखीसौं कह्यौ रहिहीं किहि भांति,
यौं सोच परचौ मनमांहि विचारी ।।
मानवती सुनिकैं उठि आतुर,
आये ससंक से लाल विहारी ।
'श्रीवृन्दावन प्रभु' प्यारी मिली,
उठि भूलि गई सब मान कथारी ।।७२।।

सूनों लगै जग नींद गई,
औ निसास के बात ते गात जरायो ।
यौ दुख सौगुनौं और बढचौ जु,
मनोरथ सौतिन हीको फरायो ।।
पी मुख देखन हानी भई पुनि,
पांय परचौ खिजि में विडरायौ ।
'श्रीवृन्दावन प्रभु' सौं सजनी अब,
कहा गुन जांनि तै मांन करायौ ।।७३।।

वांम क्यौं श्याम जु रोष तजौ करि,
रोस तजौ करि रोस अजू व कहा हम कीनौं ।
करो अपराध छिमा अब तो,
अपराध सुनौ हम आप में लीनौं ।।
रोवत क्यों तुम का आगैं,
रोइ हों नाहक देत तोफान नवींनौं ।
प्यारी जू प्यारी तिहारी बहै,
(श्री) 'वृन्दावन प्रभु' जामैं मन दीनौं ।।७४।।

राग शकरा भरन

सब छोडि भयो मन तोहि में लीन,
सु तेरे अधीन है जीवन मेरौ ।
निहारि-निहारि कैं तोहि कौं जीवत,
छीवत नाहिन और घनेरौ ।।
अपराध तो वैसौ न जान्यों पर्‌यौ,
अपराध भर्‌यौ तउ चेरो हौं तेरौ ।
'श्रीवृन्दावन' स्वामिनि खरो भूखो,
तो खैहै कहा वह केशरी ऐरो ।।७५।।

कृपा करिये हरि ये अब कोप,
हियें धरिये हित प्रान पियारी ।
सन्मुख ह्वै अवलोकनि सौं इह,
सींचिये देह वियोग की जारी ।।
विष रूख हु लाइ न काटिये,
यों सुनियें जगमांझ जू नीति कथारी ।
'श्रीवृन्दावन' स्वामिनि बिनदामनि,
मोल लयो मोहिं जोर कहारी ।।७६।।

राग भूपाली

मिसरी जल लौं मिलिकैं अब मोमन,
ह्वै गयो सुन्दरि तोही मयो है ।
जब ते निरखी तुव मूरति रूप,
अनूप हु नैननि मांझ छयो है ।।
बिनु पानी के मीन ज्यौं दीन महा,
सुब मोतन मेंन की ताप तयो है ।
(श्री) वृन्दावन स्वामिनि बिनदामनि,
भामनि तैं मोहि मोल लयो है ।।७७।।

राग टोडी

आजु बनी रमनी कमनी,
सुन्दरता बरनौं कहा तेरी ।
प्यारी ? निहारि रह्यौ अंग-अंगनि,
पाई नहीं उपमा कहुँ हेरी ।।
डीठि लगै ना दिठौंना दयो सु व,
लागी है डीठि डिठौंन हिं मेरी ।
कहि 'श्रीवृन्दावन प्रभु' सुरनारी,
यो तोहि लखैं वेउ लागत चेरी ।।७८।।

आजु सखी घनश्याम,
घनश्याम दुहुंनि होड परी ।
उत घु वा इत अलकैं रही छूटि,
उत दामिनी इत पीत वसन री ।।
उत हरि चाप इत मोर चन्द्रिका,
उत गरजन इत मुरली परन री ।
उत जलबूं दै इत लागे,
'श्रीवृन्दावन प्रभु' रस वरसन री ।।७९।।

राग गौडी

निरखि देखि री कैसी इह राजत जोरी ।
श्याम तमाल लाल नन्दनन्दन,
कनक लता वृषभानु किशोरी ।।
सजल नीलघन वरन साँवरो,
सौदामिनी द्यु ति राधा गौरी ।
मुरलीधर मधुकर रसलम्पट,
केतकी कीरति कन्या भोरी ।।

इह विधि और–और कछु रचना,
कहा वरनैं कविजन मति थोरी ।
(श्री) 'वृन्दावन' ब्रज–जनजविन–धन,
चाहि करत सबहिन चित चोरी ।।८०।।

रहौ जु रहौ तुमसौं बोलत को है ।
तुमसौं नेह करैगी सोई, बिनपीते की जो है ।।
चटक-मटक इह बाहि दिखावो, जो इन वातनि मोहै ।
(श्री) 'वृन्दावन प्रभु' कपट की बातनि, मति उपजावो छोहै ।।८१

राग परज

वदी कहो किन ऐसी निठुराई ।
जो यैं मांन ही सौं मन मानैं,
पहरक एक द्यौंस ठहराई ।।
सोउ जोलौं पिय आय पाय छ वैं,
मांनत नाहिन आप बुराई ।
(श्री) वृन्दावन प्रभु मैं कहा समझै,
जो चलै वलि तू बुद्धि पराई ।।८२।।

सजे तन भूषन वसन पियारी ।
मानत ज्यों चलि कुञ्ज महल कौं,
जहां राजत युवराज विहारी ।।
भयो मन मोद सकल सखिजन कौं,
ज्यौं कमोद लखि चन्द्र कलारी ।
(श्री) 'वृन्दावन प्रभु' धाइ आइ भरि,
लई अंक भयो आनन्द भारी ।।८३।।

राग गूजरी

तोरी अंखियां मोरी अंखियां लई चुराई,
छवि मिसरी की डरी चखाई ।
परी रसकैं चसकैं तबही तैं,
घर वन कछु न सुहाई ।।
साथ लगी फिरैं लोभ लगी,
जिमि चुम्बक लोह लगाई ।
(श्री) 'वृन्दावन प्रभु' तुम ठगवाजी,
राखी भलो सिखाई ।।८४।।

मो मन बस नहीं कहा करिये हौ,
करिये तो कहा डरिये हो ।
निपट निठुर सौं लगि गई अँखिया,
शिर बदनामी सौं डरि ये हो ।।
या व्रज को सब लोग चवाई,
फूंकि-फूंकि पग धरिये हो ।
(श्री) 'वृन्दावन प्रभु' ऐसी बनी अब,
विरह जलद कैसें तरियै हो ।।८५।।

अन्तर कपटी जी हमसौं,
अन्तर क्यांहा जी वांहा जी ।।
रैंन दिनां मैंनूं ध्यान तुसाडा,
तुसाडी नजरि छल लपटी जी ।।
अंखियां तैंडी रैन उनींदी,
मुक्तमाल उर उपटी जी ।
(श्री) 'वृन्दावन प्रभु' पीताम्बर तजि,
कब औढी नीलाम्बर दुपटी जी ।।८६।।

तेरी आंखिन कै सुकाजरवा झलकैं,
लखि-लखि लगत न पलकै ।
कर गजरा मुरवारी वेशरि,
केशरि आड कियें छवि छलकै ।।
भौंह कटीली गठीली अलकैं,
प्रीतम को मन ललकै ।
(श्री) 'वृन्दावन प्रभु' देखि-देखि तोहि,
मद गयन्द सौं म्हलकै ।।८७।।

तूं सांई मैंडा है वे, तूं ही मैंडा प्रान पियारा,
मैं तेंडी लौंडी वे ।
तू तो लोभी खुशबोही दा, मैं गुलाब दी बौंडी वे ।।
(श्री) 'वृन्दावन प्रभु' नागर नन्द,
दा मैं बड़े गोप दी मौंडी वे ।।८८।।

वहियां क्यौं मरोरी, तूं जानैं दे लंगरवा अपने घर को ।
कहा कहौंगी घरैं जाइ हौं, आई सासु ननद को चौरी ।।
गारी दै-दै दान लेत हो, प्रीति करत वरजोरी ।
जाइ कहौंगी नन्दरानी सौं, मोरी चूरी अमोलक फोरी ।।
करि राखे नन्दराय लाडिले, करौ अनीति अव थोरी ।
'श्रीवृन्दावन प्रभु' छैल अनोखौ, लारां लाग्यो मोरी ।।८९।।

साँवरे, रै पनियां लै जानैं दै ।
वाट घाट हठि रोकत टोकत, अधिक चवाई गांव रे ।।
घर गुरुजन डर की सुधि आयैं, मोहिं आवत है तांव रे ।
(श्री) 'वृन्दावन प्रभु' निपट निठुर तुम,
या हित हौं बदनाम रे ।।९०।।

छांडि-छांडि रे लंगरवा, चार अन्ति तू जाति अहीर।
सास की त्रास मोहि सूकल, जियरा कहा करौं वलवीर ।।
जिठानी रहै अनखानी सी मौसौं, ननद निगोडी कै नांहीं तैं पीर।
(श्री) 'वृन्दावन प्रभु' बहोत वेर भई, मोहि भरनौं है नीर ।।९१

गौरी पनिहारी हरि सौं अटको।
बार-बार पनिघट चलि आवति, गजगति लटकी-लटकी ।।
कोउक मिश कवहूक बनावति, कबहूँकै फोरति मटकी।
(श्री) वृन्दावन प्रभु' परीजु, चसकैं रूप सुधा अब गटकी ।।९२

राग खम्वावती, पद

चारचौं दूलह बनैं कुंवर अवधेश के,
चले व्याहन अली जनक नृप कैं सदन।
सूहे वागे बनैं सरस सौंधैं सनैं थकित,
रहि गयो निरखि शोभा मदन ।।
सौहैं शिर सेहरा खचित नग जगमगत,
लगत कमनीय अति विमल विधु से वदन।
खात वीरा गरैं लसत हीरा पदिक दमकैं,
मुसुकानि मैं शिखिर मणि से रदन ।।१।।
विवध भूषन वसन सजी चतु रंगिनी,
लगी चकचौंधि सी मिलैं दिन मनि करन।
नटी छवि जटी सवनचती तखतनि चढ़ी,
वजत नौवति मिली सकल वाजनि परनि ।।२।।
जनकपुर घर वगर-डगर बन वाटिका,
खचितमणि को सकै ताकी शोभा वरनि।
सबही सम्पति भरचो ब्याह कौं देखिवै,
अबहिं मनौं अमरपुर उतरि आयो धरनि ।।३।।

लैकैं जनिवास तैं वाग रचना भई पुरुष,
गज अश्व कपि और कौतिक घनैं ।
अग्नि के यन्त्र तहां छुटन लागे अगन घर,
गगन जोति में मनऊं तिहिं छिन ठनैं ।।
बाजि गज वसन अरु विविध भूषन सबै,
तनक हू न थाकहीं देत मंगन जनैं ।
स्तुति करैं वन्दि जन विरद वरनैंन ये,
मिले मागध सवैं उहूं वंशनि भनैं ।।
बडड़े अश्वनि चढ़े कुंवर समद बढ़े पढ़े,
के कांन अस नचत लियें मांन कौं ।
उततैं सजि सैंन निज जनक नृप ऐंन ते,
लैंन आये सु म्हें जांनि मनि जांन कौं ।।
समधि समधी मिलै परस्पर अति खिले,
नारि मिलि गारि दै करन लागी गांन कौं ।
अटनि चढ़ि पुरवधू वारे भूषन वसन,
देखि कैं विवस भई रघुवश भांन कौं ।।
पौरि पहुँचे तहां चारि तोरण बंधे,
गजनि चढ़ि खड़ग सौं जाइ परसे ।
उतरि भींतरि गए गज सु नेगिन,
लए शब्द जै जै भए कुंवर दर से ।।
रहसि पुर नारि सब वारि सर्वसु,
कहैं देह धरैं चारि नृप पुन्य फर से ।
जनक कुल प्रोहतनि आनि करि आरती,
तिहिं समें हेम सुमन मोती बरसे ।।
थार मणि मानिकनि भरचो मन्त्रनि,
खरौ तिलक करि द्विज वधू अछत लाए ।

चातुरनि पातुरनि तिहिं समें सोहिलैं,
अधिक मन मोहिले मधुर गाए ।।
सफल करि लेखनैं नैंन पुनि,
पेखनैं देखनैं देव दिगपाल आए ।
विविध अद्‌भुत बनैं घनैं नभ जांन सौं,
दिश विदिश सकल आकाश छाए ।।
ब्याहु मण्डप तरैं जाइ ठाढ़े भए,
यथा विधि द्विज वरणि ब्याह ठान्यौं ।
च्यारि रचे मांढ़ए तिनहि तहां लै गए,
कन्या वर जोग तहां आनि वान्यौं ।।
लाइ पट गांठि परसाय कर दुहूँनि के,
वनां वनी परस्पर मोद मान्यौं ।
फेरा लिवाए जु अग्नि कौं साखि दै,
छोड्यो नृप कन्यका दांन पान्यौं ।।
दुग्ध ओदन तहां परस्पर कवल दैन,
वल युवति जुवां वहौत हरखै ।
उहीं मिश निरखि मुख शरद उडराज से,
अवधि महाराज सुत चित करषे ।।
कुंवरि हू उहिं मिश सुघर वरणि लखि,
अप अपनैं योग्य निज नाह परखे ।
तिहूँ पुर तिहि दिवस परम मंगल भए,
संक भई लंक घन रुधिर ब्ररसे ।।
द्विजन दई दछिना ग्राम गज तुरंग रथ,
रतन पट वरन वे जात कापैं ।
खोलि भण्डार दए भूप सब आपन,
लेहु जाचक जु लियो जाइ जापैं ।।

करि ज्यौंनार अस चतुर विधि जोजननि,
रुचिसौं जैवैं बहुरि जदपि धापैं ।
पूजि कुलदेव कौं खोलि जूवा तहां,
बिछये दये पलिक जाय बैठे तापैं ।।
विविधि दिए दाइजे करी पहिरांवनी,
अवधि भूपाल भए अधिक राजी ।
उन हूँ पुनि जाचकनि दिये अति मोद सौं,
अनगणित्त वसन मणि नाग बाजी ।।
चले लै दुलहनिनि कुंवर निज नगर कौं,
चढ़ी बड़ि फौज सौ अधिक छाजी ।
चहूँ दिश बजि उठे विविधि बाजे घनैं,
घन ज्यौं गंभीर नौवति जु बाजी ।।
आइ पहुंचे कितेक दिननि में अवधि कौं,
अवधि नव निधि भरी पटनि छाई ।
कियो परवेश तब करिकैं गांठि जोर तहां,
सुघर वर नव किशोर चारचौं भाई ।।
साजि कैं आरती जननि तीन्यौं तवै,
युवति जन संग लियें साम्ह आई ।
आरती करि जु पुनि वारि मनि मांनिकनि,
'श्रीवृन्दावन नि' की लई बलाई ।।९३।।

राग गौड़ सारंग पूरवी

खेलत चारचौं नृप दशरथ सुत, अवधि चौक चौगांन ।
राम लछन अरु भरत शत्रुघन, अनुचर लियें समांन ।।
जहां फरस कंचन ईंटनि रचि, कुन्दनि कीच मिलाई ।
दुहूँ दिश द्वै द्वै रचे मुनारे, नाना रतन गिलाई ।।

चढ़े सित यह भूषित नाना नग, पग न लगत जिहि भूमि ।
मनौं चंचल शारदघन ऊपर, नील जलद रह्यौ झूमि ।।
रजत गैंद सौनैं चौगानैं, भरे खरे गज केते ।
दोटा देत टूटत हैं जेते, डारि देत पुनि तेते ।।
रघुवर कर चौगान फिरावत, अति अद्भुत छवि पावत ।
मनहुँ नील जलधर अपनें कर, चपला लियें नचावत ।।
दोटा देत ढोटा चारयोंई, अपनी-अपनी पच्छ ।
लैं-लैं जात उठाइ धाइ कैं, एक-एक तैं दच्छ ।।
लै-लै जात मुनारनि बिच ह्वै, तिन्हें वकसत श्रीराम ।
'श्रीवृन्दावन प्रभु' हय भूषण, अम्बर पूरन काम ।।९४।।

राग चौगान

खेलि तहां चौगान जान मंनि चतुरंगनि लियें संग ।
चले निज सदन मदन मनमोहन, कर कमान कटि धरें निषंग ।।
अवलख रंग तुरंग चढ़े तव, चलत राम छवि धाम ।
नांचत ताल बंधान मांन, लियें मनों सधायो काम ।।
कीनैं विविध सिंगार अपार, गज पचरंग धरैं निसांन ।
ते आगें निकसे मद झरते, अरते अचल समान ।।
तिन पीछैं असवार हजारनि, कोरि बरा बरि कीनैं ।
राज कुमार मदन मदगञ्जन, अप अपनी दुति लीनैं ।।
तिन पीछैं हैगै पर नौवति, बजत मधुर सादानैं ।
तिन पीछैं तुरंगनि चढ़े केते, लीनें पचरङ्ग वानैं ।।
तिन पीछे नानारंग धीरे, कोतल जात सिंगारे ।
मीन ध्वज फहरात गजन पर, जरकस में जु संवारे ।।
किते गजन पर वनैं मुरातव, कञ्चन कलस बनाये ।
झारि अमरपुर सकल अमर गन, देखन कौतुक आये ।।

तिन पीछें जु पदाति भांति, बहु उनकी वनी जलेब ।
आसपास निज दासन के, गन आवत गहैं रकेब ।।
केउ लियें धवल छत्र मुकतामय,
केऊ वरें चँवर चतुर वड भाग ।
घर अंवर जै-जै धुनि उचरत, तन-मन अति अनुराग ।।
केउ लियें पानदान केउ जल, केउ लियें नाना हथियार ।
केऊ लौंनें लियें विवध खिलौंनें, केउ पंछिन पिजरेजु अपार ।।
केऊ मृगादि नाना, जीवनिगन लियें चलेंइ जात ।
लखन भरत असवार, दुहुँदिश पाछैं शत्रुघन भ्रात ।।
दुहुँ दिश कोर बराबर वन्दी, नये-नये विरद वखांनत जात ।
सुनि-सुनि भ्रात भृत्यगन, तन-मन मोदन कहूँ समात ।
कंचन छरी जटित नाना नग, छरीदार लियें पांनि ।
चढ़े वड़े घोरन ते जे, निकसैं मारत आंनि ।।
नगर नारि सुकुमारि अटनि, चढ़ि वारति अभरन प्रांन ।
अमर नारि बरषत चलैं, फूलनि नभ छय रह्यो विमान ।।
पीछैं फौज भारी असवारी, आवत हयरथ वृन्द ।
निज महल चौक वड़े बाहिर,
कैं आय प्रवेश कियो रघुचन्द ।।
वनिता कुमुद फूली अंतहपुर, लखि-लखि जालिन मांझ ।
करि प्रनाम प्रभु तातमात, कौं प्रिया सदन गए सांझ ।।
करि संध्यावन्दन माता, पैं जाय बियारू कीन ।
चारि प्रकार नाना विध भोजन, सँग लियें भाई तीन ।।
पुनि अप अपनैं महल सिधारे, लियें सहेलिन संग ।
प्यारिनि मिलि वीरी आरोगे,
(श्री) 'वृन्दावन प्रभु' भीनें रतिरंग ।।९५।।

राग खट् वा बिहागरौ

आजु दूलह वन्यौं कुंवर नन्दराय को,
चल्यौ व्याहन सखि कुंज मंजुल सदन ।
रसिक शिरमौर फूलनि रच्यौ वारिये,
कोटि विधु निरखि सुन्दर वदन ।।
देखि कैं देशअरु काल पुनि पात्र सब,
साध्यौ निजतंत्र लखि मदन पंडित लगन ।
बीना मृदंग मुहचंग मुरली मिली,
गीत गावैं अली युगल लीला मगन ।
कल्पद्रुम कुंज कैं द्वार तौरन बनैं,
कनक चम्पकसरल लाग्यो मांढौं लसन ।।
पवन के गवन वश उडि रही सुमन रज,
तनि रह्यौ पीत मनौं चारु चंदवा वसन ।
सखीजन गांधर्व विधि विधान मंत्र करि,
फेरा लिवाये जु करिकै साच्छी दहन ।
केऊ सखी विमल कुल दुहुँनि प्रोहित भईं,
केउ मागध भईं लगी वंशनि कहन ।।
वरख्यो तहाँ मोद चहुँ कोद वृन्दाविपिन,
सवनि दई दच्छनां वसनि भूषन अदन ।
रहसि (श्री) 'वृन्दावन प्रभु' दम्पति मिले,
भली विधि जोति की मांनि पूज्यो मदन ।।९६।।

सोहै सुन्दर नन्दकुमर शिर सेहरा ।
चले भले वानिक व्याहने, कौं मंजु कुंजन के गेहरा ।।
सुहैं बागैं लागैं अति नीके, दृग सींचत रस मेहरा ।
फेरा लेत प्यारो सारी सौं, वांधि पीतपट छेहरा ।।

देखि-देखि दुलहनि छवि दूलह, बढत दूनौं-दूनौं नेहरा ।
(श्री) 'वृन्दावन प्रभु' यह सुख,
निरखत वारि डारौं वित देहरा ॥९७॥

आजु व्याह सखि कुंज महल में,
दुलहिन राधा नन्दकुमर वर ।
गावति हैं नारि नये सोहिले सुहाये तैसो,
वृन्दावन फूल्यौ रह्यौ उडिकैं परागभर ॥
वनां वनी गांठि जोरि लिवायो हथलेवा,
जव हाथैं देखि छकि गये सालन सुघर ।
मिंहदी के विन्दु कैसे राजैं इन्दुमुखी कर,
मानौं इन्द्रबधू पांति बैठी अरविन्द पर ॥
सूहे पट घूंघट द्युति दूनी छिलैं आंनन की,
मांनौं झीनैं लाल घन झलकत सुधाधर ।
(श्री) 'वृन्दावन प्रभु' दूलह चकोर दृग,
ललकत देखि-देखि शोभा को निकर ॥९८॥
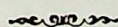
॥ अथ चतुर्दश घाट ॥

दोहा

विधि शिव नारद पवनसुत, सरसुति इन करि ध्यान ।
साम वेद उपवेद को, करत कछू व्याख्यान ॥१॥
साम वेद को यह कह्यौ, उपवेदजु गांधर्व ।
वाकौ लच्छन कहत हौं, सुनियो पंडित सर्व ॥२॥
स्वर समूह पद में धरै, ताल सहित गुन गांन ।
गावै धीरज धरि हियें, कहैं गांधर्व सुजांन ॥३॥

दयो विधाता प्रथम इह, नारदादि कौं चाहि ।
विधि-वन्नारदादिकन हू, धरनि उतारचौ याहि ।।४।।
नाद व्रह्म गांधर्व है, या विन सुर नहिं नृत्य ।
नहीं गीत या बिन कछू, तातैं इह है नित्य ।।५।।
उठत वायु तैं नाद है, बातैं सुर संघात ।
सुर तैं उपजत राग सुनि, जन विह्वल ह्वै जात ।।६।।
याही तैं कलि काल मैं, सब साधन मैं मुख्य ।
कह्यो कीरतन व्यास शुक, ज्यौं नक्षत्र मैं पुष्य ।।७।।
बातैं मुखि गांधर्वयुत, करै गान जो कोइ ।
इत सुख लै अनयास सौं, हरिपद पहुँचे सोइ ।।८।।
निषद ऋषभ गांधार अरु, मध्यम धैवत पांच ।
पञ्जम षड्ज ये द्वै मिलैं, होंहि सप्तसुर सांच ।।९।।
स्वर निषाद गजमत्त मैं, ऋषभ गाइ दात्यूह ।
गांधार स्वर अज भणैं, षड्ज मयूर समूह ।।१०।।
कुरज कहै मध्यम सुरहिं, धैवत दादुर अश्व ।
कोकिलि पंचम स्वर कहैं, जिहिं वसन्त सर्वस्व ।।११।।
ग्राम तीन एहैं कहैं, मद्र मध्य अरु तार ।
बाढचा इन ही दशनि तैं, रागनि को परिवार ।।१२।।

चौपाई

श्री पंचम भैरव जु वसन्त, पंचवों मेघहु राग लसन्त ।।
नटनारायण छटवों कह्यो, महादेव मत सौ इह लह्यो ।।
अब इनकी रागिनि सुनि लीजै, छहुँनि-छहुँनि नामनि मन दीजै ।।
मालव त्रिवन गौरी केदारा, मधुमाधव पहरी श्री दारा ।।

दोहा

मालसिरी पटमंजरी, भूपाली रु विभास ।
कर्णाटी वड़हंस षट्, स्त्री पंचम के पास ।।१५।।

चौपाई

भैरवी अरु गूजरी रेवा, बङ्गाली बहुली करैं सेवा ।
छट्टी गुणकरी है भैरों की, नारी सुनों अब तुम औरों की ।।१६।।
देशी देवगिरी वैरारी, टोडी ललित हिंडोल जु नारी ।।
ये वसन्त की छहौं पियारी, अब सुनौं मेघ राग की नारी ।।१७।।

दोहा

हरसिंगार गांधार अरु, तीजी कही मलार ।
साविर सोरठ कौशिकी, एजु छहौं सुकुमार ।।१८।।
आभीरी सारंग अरु, नट कमोद कल्यान ।
तिन में छटी हमीर तिय, नट नारायण जांन ।।१९।।
बेटा-बेटी छहुँनि के, रागन के जु अपार ।
ते हम यहां नांहिन कहे, होइ ग्रन्थ विस्तार ।।२०।।
संगीतसार हनुमान अरु, रागार्णव मत तीन ।
जगड्वाल बहु देखि कैं, हम न इहां लिखि दीन ।।२१।।
तांन मूर्च्छना श्रुति सवैं, हैं इनके हि विलास ।
होत नारदादिकन ते, इन निज रूप प्रकाश ।।२२।।
आभास मात्र अब हैं कहूँ, सोऊ विरलै थांन ।
मोहि जात जिनकैं सुनैं, रान खान सुलतान ।।२३।।
चढ़ि उतरैं जब सप्त सुर, मूर्छना सोइ जानि ।
गणना इनकी कहत हैं, एक वीश परवांनि ।।२४।।
राग रूप के श्रवन कौं, कहत जु श्रुति सुज्ञांन ।
ताही श्रुति के तू अबैं, भेद बीश द्वै जांन ।।२५।।
खाडव औडव कीजिये, मूरछनां कौं आनि ।
शुद्ध तांन तब होत है, यहै जु चित्त में जानि ।।२६।।
कहै जु मात्रा भेद तैं, नानाविध के ताल ।
कहत इहां संक्षेप सौं, ताल रूप कौं हाल ।।२७।।

क्रिया काल की ताल है, मान सु वाको अन्त ।
उन दोउन की श्यांम को, गुनिजन लय जु कहन्त ।।२८।।
तत आनद्ध सुषिर घन, बाजे चारि प्रकार ।
र वाब बीन कौं आदि तत, बजैं तांति अरु तार ।।२९।।
मृदंगादि आनद्ध ए, जे अब मँढ़े हैं खाल ।
सुषिर बजैं जे फूंक सौं, ते बजये गोपाल ।।३०।।
ताल झींझि को आदि जे, घन कहि इन-इन नाम ।
निरो धात के सकल ए, इनबिन सरैं न काम ।।३१।।
आनद्ध घन इन दुहुंनि में, बजै न राग सुरूप ।
बाजत तत अरु सुषिर में, मूरति वन्त अनूप ।।३२।।
नाचहु कौ कछु भेद इह, कहत बुद्धि अनुसार ।
नाना ग्रन्थनि पंडितनि, कहे जु करि विस्तार ।।३३।।
अंग हार बहु विधनि करि, नाटच नृत्य अरु नत्त ।
नांच भेद मुख तीन औ, भेदहु हैं बहु मित्त ।।३४।।
नाचि सवै ही गीत को, अभिनय करि इकवार ।
ताहि कहत हैं नाटच सब, काव्य बन्ध करतार ।।३५।।
भिन्न-भिन्न सब गीत को, अभिनय नचि दरसाइ ।
ताहि कहत हैं नृत्य जे, हैं पंडित कविराइ ।।३६।।
अंगहार केवल जहां, ताहि कहत हैं नृत्त ।
यामें कछु सन्देह नहिं, समुझो सुघर सुवृत्त ।।३७।।

।। इति श्रीगीतामृत गंगा गांधर्वोपवेद संक्षिप्त विवरण घाट चतुर्दशः ।।

फलश्रुति

दोहा—वृन्दावन गिरि तें चली, रसकी उठत तरंग ।
करहु स्नान नित भक्तमन, इहिं गीतामृत गंग ।।३८।।

इति श्रीश्रीमन्नारायणदेवाचार्य चरणकमलमकरंदमिलिन्द
श्रीवृन्दावनदेवाचार्य कृता श्रीगीतामृतगंगा समाप्ता